हुअी थी। कअी हजार वर्ष पहले मैसोपोटेमियामें भी अिसी तरह बडे पैमाने पर मिट्टी भर गअी थी।

जंगलोंके नाशसे धरती-कटाव होता है

आगसे और अिमारती लकडी तथा कागजके गूदेके लिअे होनेवाले अुद्योगवादके आक्रमणोंसे जंगलोंका जो नाश होता है, अुससे अवश्य ही भयंकर बाढ आती है और अधिक धरती-कटाव होता है। यूरोपमें भी जिस मात्रामें नये जंगल पैदा होते हैं अुनकी अपेक्षा लकडीकी खपत १० से १५ प्रतिशत अधिक होती है। संयुक्त राज्य अमरीकामें नये वृक्षोंकी अुत्पत्तिकी अपेक्षा वृक्षोंकी कटाअी बहुत ज्यादा होती है। अुदाहरणके लिअे, 'न्यू यॉर्क टाअिम्स' के रविवासर संस्करणके लिअे आवश्यक कागजका गूदा तैयार करनेके लिअे १० अेकड (कुछ जानकार १०० अेकड बताते हैं) भूमिमें खडे बडे पेड चाहिये। अुस रविवारके संस्करणका अेक-तिहाअीसे कुछ कम भाग समाचारों, लेखों या सम्पादकीय लेखोंमें लगता है। अधिक बडा भाग विज्ञापनोंमें लगता है। और विज्ञापन-दाताओंका अेक मुख्य हेतु अिस प्रकार अपना व्यावसायिक खर्च बढाकर आय-कर घटाना होता है। संयुक्त राज्य अमरीकामें अिसी आकारके और भी कअी पत्र छपते हैं। सप्ताहके अन्य दिनोंकी और कागजके अन्य सब अुपयोगोंकी बात छोड दें, तो अेक वर्षमें ५२ रविवार होते हैं। ज्यादातर जंगलोंके अैसे शोषणके परिणामस्वरूप संयुक्त राज्य अमरीकामें बाढें लगभग हर दशकमें पहलेसे ज्यादा बडी और अधिक बार आती हैं।

जनवरी १९५७ के मध्यमें मद्रासके अंग्रेजी दैनिक 'हिन्दू' के अेक अंकमें कहा गया था कि भारतके लिअे २२ नये कागजके कारखानोंकी योजना बनाअी जा रही है। परन्तु अुसमें अिस बातका अुल्लेख नहीं था कि पेडोंकी कटाअीको कैसे रोका जायगा या कागज बनानेकी प्रक्रियामें पैदा होनेवाले गन्दगीके तरल पदार्थोंको नदी-नालोंमें बहाने देकर पानीको जहरीला बनाने दिया जायगा और मछलियोंकी हत्या करने दी जायगी अथवा अुसकी कोअी और व्यवस्था की जायगी।

है, अपने अन्दर खींच लेता है और पचा लेता है, अुसी तरह मानव-व्यवहारोंमें जिन ध्येयोंको सिद्ध करनेकी अभिलाषा रखी जाती है अुनका विकास धीरे धीरे होता है, और अुनकी सिद्धिके लिअे जो साधन काममें लिये जाते हैं अुन साधनोंको वे ध्येय अनिवार्य रूपमें अपने भीतर पचा लेते और आत्मसात् कर लेते हैं। जब किसी राज्यका निर्माण करने या अुसकी रक्षाके लिअे हिंसा काममें लायी जाती है, तो अुस राज्यका स्वरूप अैसा बन जाता है जो बहुत कुछ हिंसक होता है।

अदूरदर्शी होना बड़ा आसान है। हम अकसर अैसे मनुष्यको देखते हैं जो बेअीमानी या अन्यायपूर्ण अुपायोंसे प्राप्त की हुअी सत्ता, दौलत या जमीनका आडंबरपूर्ण ढंगसे अुपभोग करता है। और हमें भी बेअीमान या अन्यायी बनने और साथ ही सत्ता और दौलत प्राप्त करनेका प्रलोभन होता है और हम अैसा मान लेते हैं कि शायद अिससे हमारा कुछ नहीं बिगड़ेगा। परन्तु अुस आदमीको लम्बे अर्से तक देखते रहिये। अुसके चरित्रका, अुसके भीतरी सतुलनका, अुसके सुखका, अुसके बच्चोंका, अुसके पारिवारिक जीवनका और अुसके धनका क्या हाल होता है? जब तक आप किसी पेड़का फल देख और चख नहीं लेंगे, तब तक आप यह नहीं बता सकते कि पेड़ अच्छा है या बुरा। यही बात किसी मनुष्य और किसी विचारके बारेमें भी सच है। और फलके आने और पकनेमें तो अकसर देर होती ही है।

जब किसी आधुनिक युवकके सामने सत्ताके भ्रष्टाचार या गलत साधनोंके अुपयोगसे पैदा होनेवाले संकटोंके अैतिहासिक अुदाहरण रखे जाते हैं, तो वह शायद अपने मनमें कहता है “परन्तु अुस जमानेमें हवाअी जहाज, रेडियो, बिजली, रसायनशास्त्र, मानसशास्त्र, मोटर गाड़ियां और वे सब चीजें कहां थीं, जो आज हमें अपनी परिस्थितियों पर नियंत्रण रखनेकी शक्ति देती हैं? आज हमें पहलेसे कहीं अधिक ज्ञान है और अिसलिअे जैसे पुराने लोग फंस जाते थे वैसे मैं नहीं फंसूंगा। जिन चीजोंके जालमें वे फंस गये थे अुनसे मैं बचकर निकल सकता

अफ्रीकी-अेशियाअी दुनियाके अन्य देशोंके साथ पश्चिमके सपर्कके फलस्वरूप अुत्पन्न हुआ। अुसने यूरोपको अर्वाचीन विज्ञान और शिल्प-विज्ञानके साथ अुद्योगवादका विकास करनेमे समर्थ वनाया। ये दोनों चीजें अुद्योगवादका कारण भी थी और अुसका फल भी थीं। जिस मुख्य वस्तुने यह सव सभव वनाया वह थी विदेशी सपत्ति और पूजी, जो अेशिया और अफ्रीकाके देशोंमें रहनेवाले लोगोंके जीवन और परिश्रम पर यूरोपवालोंका साम्राज्यवादी पजा होनेके कारण यूरोपकी राजधानियोंमें वरसती रही। अिसके कारण पश्चिममें अेक नअी समाज-व्यवस्थाका जन्म हुआ और अुसे पूजीवादका नाम दिया गया।

पूजीवादके नामसे पहचानी जानेवाली अिस मुख्यत औद्योगिक और आर्थिक घटनाकी प्रतिक्रियाके रूपमे तथा अुसके गहन अध्ययनके फलस्वरूप पिछले सौ सवा-सौ वर्षोंमें पश्चिममें अेक और परिवर्तन हुआ। यह था समाजवादका विचार। वर्तमान शताब्दीमे अुसकी दो तानाशाही शाखायें — साम्यवाद और फासिस्टवाद — पैदा हुअी।

पश्चिमी जगतमे जव ये सव परिवर्तन हो रहे थे, तव भारत अुनका अेक दर्शकमात्र वना हुआ था, अथवा भारतका अुनसे अुतना ही सम्वन्ध था जितना किसी गुलामका अपने मालिकके साहसपूर्ण कार्यों अथवा प्रयत्नोंसे होता है। अिस परिवर्तन-कालमें भारत अपने विदेशी शासकोंके साम्राज्यवादी शासनके अधीन शान्त और निश्चेष्ट पडा था। वह अुसके विदेशी जुअेके भारसे कराह रहा था। अिसलिअे पश्चिमकी प्रगतिके अिन वर्षोंमें हमारे लिअे सवसे जरूरी समस्या ब्रिटिश साम्राज्यवादके अिस पजेसे मुक्त होनेकी थी। अिसे हमने अनोखे ढंगसे — शान्त और अहिंसक ढगसे, और अेक अैसे पुरुषके नेतृत्वमे हल किया जिसमें दोनों जगतोंके — प्रभुत्वशाली पश्चिम और पददलित पूर्वके अुत्तम तत्त्वोंने मिलकर अेक नअी वस्तुका सर्जन और विकास किया। वह वस्तु थी गाधी-विचारधारा और सर्वोदय तथा सत्याग्रहका कार्यक्रम।

अिस विचारधारामें हम पिछली दो सदियोंके साम्राज्यवादी या पूजीवादी जमानेमें पाश्चात्य सभ्यताने जो सफलतायें प्राप्त कीं अुनकी आलोचना और अुसका रचनात्मक सुधार पाते हैं। जैसा कि लेखक कहते

अपने प्रभुकी नजरोंमें — अपने भीतरी जीवन और अस्तित्वमें भी — आजाद रहे। अिसके लिअे आज तक मानव-जातिने ज्ञान, तत्त्वज्ञान, धर्म, राजनीति, अर्थशास्त्र, व्यापार और अुद्योग वगैरामें जो भी सफलता प्राप्त की है अुस सबके नये समन्वयकी जरूरत है। मतलब यह कि अिस पृथ्वी पर रहनेवाले अेक मनुष्यकी हैसियतसे अुसको विशेष प्रगति और विकासके सभी व्यक्तिगत और सामूहिक क्षेत्र अिस नये समन्वयमें शामिल होने चाहिये। गांधीजीका यही सपना था जिसे वे संसारमें और अुन राष्ट्र-समूहमें पूरा करना चाहते थे, जिसका अंग होनेका सम्मान और विरल सौभाग्य अब हमें प्राप्त हुआ है।

समस्याकी नवीनता और विशालता जितनी विस्मयकारी है कि हमारे मनमें यह विचार अुठ सकता है कि अुसके हल होनेकी कोअी आशा भी रखी जाय या नहीं। गांधीजीने यह सिद्ध कर दिखाया था कि यदि मनुष्य अन्तरात्माकी आवाज पर ध्यान दे और अुसके अनुसार काम करनेको कमर कस ले, तो वह अिस सपनेको सिद्ध करनेकी पूरी आशा रख सकता है। यह गांधीजीकी अनोखी देन है। अुन्होंने यह काम अुस भारतीय जगतके भीतर और अुसके खातिर किया, जिसमें अुनका जन्म हुआ था, जिसके वे नागरिक थे और अिसलिअे जहां अुन्होंने अपना जीवन-कार्य किया था। अिसके परिणामस्वरूप अुस वस्तुका विकास हुआ, जिसे अिस पुस्तकमें 'गांधीजीका कार्यक्रम' कहा गया है। प्रश्न यह नहीं है कि मनुष्यके लिअे अुस पहेलीको सुलझानेकी कोअी आशा नहीं है जो अुनकी अपनी ही पैदा की हुअी है, बल्कि यह है कि 'आशाका अेकमात्र मार्ग' क्या है? अिस पुस्तकमें भारतके अिसी महत्त्वपूर्ण प्रश्नकी चर्चा की गअी है। अिस प्रश्नका अुत्तर देनेके लिअे अर्वाचीन विचारधाराने जो भी सुझाव दिये हैं, अुन सबका यह पुस्तक अेक आदरपूर्ण और आलोचनात्मक अध्ययन है। और यह अध्ययन सचमुच मानवीय अर्थात् आन्तरराष्ट्रीय तथा राष्ट्रीय रूपमें सच्चे और सहायतापूर्ण ढंगसे किया गया है। अिस प्रश्नकी अिस पुस्तकमें स्वतंत्र जांच की गअी है और अिसलिअे हमें आशा है कि यह सहायक सिद्ध होगी।

१७-८-'५७

प्रस्तावना

जैसा कि सब कोजी जानते हैं, अर्वाचीन विज्ञान और शिल्प-विज्ञान अुद्योगवाद तथा विशाल व्यवसायके वेशमे अेशिया और अफ्रीकाके महाद्वीपोमें अब शीघ्र गतिसे और बडे पैमाने पर घुस रहे है। परिणामस्वरूप जिन महाद्वीपोके राष्ट्रो और अुनकी सस्कृतियोके मूल्यो, मान्यताओ, रिवाजो और सस्थाओके पुराने और नये तरीकोमें बडी गडबड और कशमकश चल रही है। हर देशमें अनेक प्रकारके परिवर्तन बडी तेजीसे हो रहे है। अधिक अच्छी दुनिया रचनेकी बडी अुत्सुकता सर्वत्र दिखाओी देती है। अकसर पुराने तरीकोके स्थान पर नये अच्छे तरीके पैदा कर सकनेसे पहले ही पुरानी चीज चूर चूर हो जाती है। फलत लोगोको बडा कष्ट होता है। यह देखकर सबको हैरानी होती है। भारत जिस समय अिसी सतत परिवर्तनशील भवरके बीच फसा हुआ है।

मैंने आधुनिक पाश्चात्य विज्ञान, शिल्प-विज्ञान और अुद्योगवादके बीच रहकर अुनका अध्ययन किया है, मैं तीस वर्ष पहलेके भारतमे भी कुछ समय तक रह चुका हू और आज यहा हो रहे कुछ परिवर्तनोको भी देख रहा हू। मुझे भारतसे प्रेम है। अैसे अेक व्यक्तिकी हैसियतसे अपने विचारोकी यह पुस्तक मैं अिस आशासे प्रस्तुत कर रहा हू कि अिससे समस्याओको समझनेमें सहायता मिलेगी।

रिचर्ड बी० ग्रेग

कोडाओीकानाल,
मद्रास राज्य, भारत
मअी, १९५७

अनुक्रमणिका

आशाका अेकमात्र मार्ग

पूजीवाद, साम्यवाद, समाजवाद तथा गाधीजीके
कार्यक्रमकी समीक्षा

१

प्रास्ताविक

सब देशोंकी भाति भारतमे भी नौजवान और बूढे अनेक लोग है, जिन्हे अपनी मातृभूमिसे प्रेम है। वे सब अुसकी सेवा करना चाहते है, अन्यायका अन्त करना चाहते हैं और अेक समृद्ध, सुखी, अुदात्त, स्थिर और दीर्घजीवी समाजकी रचना करना चाहते है। और दुनियाके अनेक देशोकी तरह भारतके सामने भी आज कअी बडी समस्याअें और कअी बडे खतरे है। अिन सब कठिनाअियोंके लिअे विविध प्रकारके हल सुझाये गये है। जिन्हे भारतके हितकी चिन्ता है अुन्हें अिन विविध हलोमें से अपनी पसन्दका चुनाव करना होगा या नये हल खोज निकालने होंगे, जिनमें शायद विविध योजनाओंके तत्त्वोका सम्मिश्रण होगा।

समझदारीसे चुनाव करनेके लिअे स्पष्ट सिद्धान्त और लक्ष्य जरूरी है

अैसे चुनाव करनेके लिअे हम बिलकुल नये सिरेसे आरम्भ नही करते। कुछ चुनाव तो सत्ताधारी पहले ही कर चुके होते है और कुछ प्रक्रियाअें और प्रवृत्तिया पहलेसे ही काम कर रही होती है। परन्तु परिस्थितिया तेजीसे बदल रही है और प्रतिदिन नये चुनाव करने पडते है। समझदारीसे चुनाव करनेके लिअे हमारे पास कुछ सिद्धान्त और कुछ निश्चित लक्ष्य होने चाहिये, साथ साथ तात्कालिक आकाक्षाअें भी होनी चाहिये, मतलब यह कि हमें दिशाका ज्ञान होना चाहिये। अिस पुस्तकके कुछ पाठक सत्ताके स्थानो पर होगे या भविष्यमें आ सकते है। वहा होनेसे अुनके चुनाव तुरत परिणामकारी सिद्ध होंगे। दूसरे लोग कमसे कम अिस स्थितिमे होगे कि अन्य लोगोके पेश किये हुअे प्रस्तावो पर अपनी सहमति या असहमति प्रकट कर सके और अुन प्रस्तावोकी आलोचना और अुनका मूल्याकन कर सके। यह पुस्तक, सभव

हो तो, अुन लोगोकी सहायता करनेके लिअे लिखी गअी है जिन्हे भारतके भविष्यकी चिन्ता है।

जीवन और समाज-व्यवस्थाकी पद्धतिया

समाजका काम चलाने और हानि तथा खतरेसे बचनेके लिअे जीवनकी विविध पद्धतियोका विकास किया गया है। ये आवश्यक खुराक, आश्रय, कपडा, औजार, मशीनें और जीवनके अनेक सूक्ष्म अथवा अगोचर सन्तोप प्राप्त करने और अुनका अुपयोग करनेकी पद्धतिया हैं। वे अिन प्रयोजनोंके लिअे समाजका प्रबध और नियत्रण करनेकी पद्धतिया भी हैं। अुनकी सूची अिस प्रकार बन सकती है

१ पूजीवादियो द्वारा नियत्रित स्पर्धात्मक अुद्योगवाद, व्यवसाय, विज्ञान और शिल्प-विज्ञान।

२ साम्यवादी केन्द्र-नियत्रित अुद्योगवाद, व्यवसाय, विज्ञान और शिल्प-विज्ञान।

३ समाजवादी केन्द्रीय अथवा स्थानीय रूपमें नियत्रित अुद्योगवाद, व्यवसाय, विज्ञान और शिल्प-विज्ञान।

४ विकेन्द्रित लोकतात्रिक ग्राम-अर्थव्यवस्थावाला गाधीजीका कार्यक्रम, जिसका आधार खेती पर होगा, जिसमें बडे अुद्योग और भारी शिल्प-विज्ञान कमसे कम होगे और जिसका नियत्रण सबके लाभके लिअे होगा, जिसमें सारा राजनीतिक शासन शासितोकी स्वीकृतिके अधीन होगा, और जिसमें स्वीकृति न देनेकी बातको अन्तमें शासितोंके सामूहिक सत्याग्रह द्वारा परिणामकारी बनाया जायगा।

५ अुपरोक्त सब या कुछ पद्धतियोंके तत्त्वोको लेकर — दूसरे सुधारो सहित या अुनके बिना — नयी पद्धतिकी रचना करना।

भारतके सौभाग्यसे दूसरे देशोकी अपेक्षा यहा विभिन्न पद्धतियोंके तत्त्वोका समन्वय साधकर कमसे कम अेक और हल सभव है। जिस

तरह कमसे कम आकडोकी दृष्टिसे अुसके अेक सफल हल प्राप्त करनेकी सभावना अन्य देशोकी अपेक्षा अविक हो जाती है। जीवन जीने, काम करने और समाज-व्यवस्था करनेकी अिन पद्धतियोकी जाच और तुलना करनेसे पहले हमें भिन्न भिन्न प्रस्तावोको नापने और अुनका मूल्याकन करनेके लिअे किमी न किसी तरहका अेक मापदण्ड स्थापित कर लेना चाहिये। सस्कृतिया और सभ्यताअें वडी अटपटी और पेचीदा होती हैं और अुनमें भोजन, वस्त्र और आश्रयसे कही अविक वातोका समावेश होता है। अनेक अैसी अप्रत्यक्ष और सूक्ष्म वस्तुअें होती हैं—जैसे सौन्दर्य, व्यवस्था और स्वाभिमान—जिनकी मनुष्यको अुतनी ही भूख और जरूरत होती है जितनी भौतिक पदार्थोकी। हमें जीवनकी कौनसी पद्धतिया पसन्द करनी चाहिये, अिसका निर्णय करनेके लिअे अुत्पादनकी कोअी पद्धति कितनी खुराक, कपडा और मकान दे सकती है, अिसकी मात्राका हिसाव निकालनेकी अपेक्षा जीवनके कुछ मापदण्डोका होना हमारे लिअे अधिक आवश्यक है।

पिछले पचास वर्षोमें हमने सभी राष्ट्रोमें अितना अधिक विनाश और समाज-व्यवस्थामें तेजीसे होनेवाला अितना अधिक परिवर्तन देखा है और मानव-जाति अितनी अविक अरक्षित, भयभीत और दुखी हो गअी है कि हम अपना मापदण्ड कुछ सामाजिक खतरोको वनायेंगे और अुनका सक्षिप्त विचार करेंगे। जिससे हमारी मुख्य चर्चामें अेक दृष्टि और मार्ग-दर्शन मिल जायगा, जिससे हम परिवर्तनके प्रवाहमें से अपनी नावको पार ले जा सकेंगे। चुननेके लिअे शायद सवसे अच्छी प्रणाली वह होगी जो खतरोको वचाते हुअे जीवनकी प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष जरूरतोको भी पूरा करती है। खतरोकी चर्चासे हमें कुछ सिद्धान्तोका दर्शन हो जायगा। यद्यपि हानिकारक वुराअियोको दूर करनेके लिअे कुछ परिवर्तन आवश्यक हो सकते हैं, तो भी यदि हमारे सामने कुछ सिद्धान्त और कोअी स्पष्ट लक्ष्य न हो तो शीघ्रगामी परिवर्तन परेशानी पैदा करता है।

सात वडे खतरे

मेरे विचारसे भारतके सामने सबसे वडे खतरे सात है

१ अेक ओर धरतीका कटाव, 'ह्यूमस' (जमीनकी अुत्पादन-शक्ति वढानेवाला अेक तत्त्व-विशेष)का नाश और जमीनके क्षारोका वह जाना है और दूसरी ओर जनसंख्याकी अमर्याद वृद्धि। अिसे यदि रोका नही गया तो अिसका परिणाम अैसी व्यापक भुखमरी और कंगालीमें आयेगा जैसी आज तक कभी न देखी गअी थी।

२ युद्ध और भीतरी संघर्ष दोनोमे होनेवाली हिंसा, शारीरिक हिंसा और आर्थिक, राजनीतिक, सामाजिक अथवा धार्मिक अुत्पीडन द्वारा होनेवाली हिंसा।

३ वर्गों, जातियो, समुदायो और व्यक्तियोके बीच तथा शहरो और देहातोंके बीच सत्ताका अत्यन्त असमान वितरण।

४ संगठनोंमें, खास करके राजनीति, अर्थ-व्यवहार, अुद्योग और व्यवसायके क्षेत्रमें, वडे आकारका माना जानेवाला अत्यधिक मूल्य।

५ खास तौर पर नेताओका यह न समझना कि हर कार्य-क्षेत्रमें किसी निश्चित साध्यको प्राप्त करनेमे, यदि सफलता अभीष्ट हो तो, जो साधन चुना जाय वह वांछित ध्येयके अनुरूप होना चाहिये।

६ विशेष रूपमें नेताओमें पाया जानेवाला यह विचार कि जो नैतिक नियम व्यक्तियोके लिअे जरूरी माने जाते हैं अुन्हें माननेकी सरकारो या मडलो अथवा दूसरे वडे संगठनोको जरूरत नहीं।

७ नेताओ और पुस्तकीय शिक्षा पाये हुअे लोगोमे आध्यात्मिक अेकताके अस्तित्वमें और अुसके सर्वोपरि वलमें श्रद्धाका अभाव।

ये सातो बडे खतरे अेक-दूसरेसे सम्बद्ध है और समाजकी बुनियाद और प्रक्रियाओमें गहरे पैठे हुअे है। अिनमें से केवल पहले तीन ही सामान्यत विशेष भयानक माने जाते है। थोडे-बहुत ये खतरे सभी राष्ट्रोके सामने होते है।

समाजकी सभवनीय व्यवस्थाओ और बडे सामाजिक खतरोकी अिस सक्षिप्त रूपरेखाके बाद अब हम अिन खतरोकी अधिक विस्तारसे जाच करे।

धरतीका कटाव

पहले हम धरतीके कटाव, 'ह्यूमस' नामक कीमती तत्त्वकी हानि और जमीनके आवश्यक खनिज तत्त्वोंके नाशको ले। अिस खतरेका भान शहरी लोगोको या पुस्तकीय शिक्षा पाये हुअे वर्गोको बहुत थोडा होता है। असलमें भूमि पर रहनेवाली सपूर्ण जीवसृष्टिका — वनस्पति, वृक्ष, कीडे-मकोडे, जानवर और मानव-प्राणी सबका — आधार अूपरकी लगभग ८ अिच जमीनकी थरके अस्तित्व और स्वस्थ स्थिति पर है। यह जमीनका वह हिस्सा है जिसमें जमीनके कीटाणु, दूसरे अति सूक्ष्म जीव और केचुअे वगैरा होते है।

प्राकृतिक अवस्थामें घास, छोटे-छोटे पौधे और पेडोकी जडें जमीनको पकडे रहती हैं और अुसे पानीके प्रवाहमें बह जाने और हवामें अुड जानेसे बचाती है। पत्ते और मृत तथा नष्ट हो रही वनस्पतिया जमीनको भारी वर्षाके बहावसे बचाती है और पानीचट (स्पज) की तरह विशाल मात्रामें पानीको सोखकर जमा कर रखती है। परन्तु यदि जगल आग या अत्यधिक कटाअीसे नष्ट हो जाते है और यदि घास, छोटे-छोटे पौधे तथा छोटे पेड भेड-बकरियो द्वारा बहुत ज्यादा चर लिये जाते है या जमीनमें ठीक ढगसे खेती नही की जाती, तो अूपरकी जमीन पानीमें बह जाती है या आधियोंसे अुड जाती है या बाढमें अुस पर रेत जम जाती है या वह बुरी तरह सूख जाती है और अिसके फलस्वरूप रेगिस्तानमे बदल जाती है। आज जिस मात्रामें, जिस गतिसे और जितने विशाल पैमाने पर धरतीके

कटावकी यह प्रक्रिया चल रही है वह मानव-अितिहासमें अेक नअी चीज है, लगभग अढाअी सौ वर्ष पुरानी है। अलवत्ता, अिस पृथ्वीके सपूर्ण अितिहासमें छोटे-छोटे क्षेत्रोमें तेजीसे धरती-कटाव होनेके अुदाहरण पाये जाते है। परन्तु हमारे अुत्तम भूमि-विशेषज्ञोका कहना है कि गत अढाअी सौ वर्षोमें जगतके पिछले सारे अितिहासकी अपेक्षा अूपरकी जमीनका कटाव अधिक हुआ है।

कटाव कहा हो रहा है?

यह कटाव विशाल पैमाने पर चीन, अफ्रीका, आस्ट्रेलियामें, भूमध्य-सागरके अधिकाश देशोमे तथा पश्चिम अेशिया, अुत्तरी और दक्षिणी अमरीकाके सब देशोमें और बडे पैमाने पर भारतमें भी हो रहा है।

अमरीकामें कटावका विस्तार

अुदाहरणके लिअे, सयुक्त राज्य अमरीकामें जॉन स्टीवार्ट कोलिसके कथनानुसार "सन् १६३० में जमीन पर ८२ करोड अेकड जगलवाली और ६० करोड अेकड झाडीवाली खुली भूमि थी। आज यह हिसाब है कि जगल दसवे हिस्सेसे ज्यादा नही रह गया है और जगलकी वार्षिक वृद्धिसे वार्षिक नाश ५० प्रतिशत अधिक है। और भूमिके बारेमें यह हिसाब लगाया गया है कि महाद्वीपका आधा अुपजाअूपन नष्ट हो गया है।"* सयुक्त राज्य अमरीकाकी अेक-तिहाअी कृषियोग्य अूपरी जमीन बह कर समुद्रमें चली गअी है और जमीनकी रक्षाके लिअे जो कार्य हो रहा है वह जमीनको जिस मात्रामें सुधार सकता है और हो रहे कटावको जिस सीमा तक रोक सकता है, अुससे कटाव कही अधिक तेजीसे हो रहा है। अगर अिसी हिसाबसे जमीनका कटाव जारी रहा तो विशेषज्ञोका कहना है कि अिस शताब्दीके अन्त तक वहाकी तीन-चौथाअीसे अधिक अुपजाअू धरती नष्ट हो जायगी। जुलाअी १९४७ में मिसूरी नदीमें आअी बाढके दिनोमें यह अनुमान लगाया गया था कि वर्षाके पानीसे नदीकी तलहटीवाले भूप्रदेशकी ११½ करोड टन अूपरी अुपजाअू मिट्टी बह गअी। सारे सयुक्त राज्य

---

* 'दि ट्रायम्फ आफ दि ट्री', पृ० २२२।

अमरीकामे अिस समय हर साल पाच लाख अेकड अच्छी भूमि कटावसे खराव हो रही है। अमरीकामें १९२७ से १९५६ तक वाढमे हुअी सीधी हानि ३०० करोड डालरसे अधिक थी। १९५३ में विहारकी वाढने ३५ करोड रुपयेसे ज्यादाका नुकसान किया था। अुटीमा और दूसरे प्रान्तोंमे वार वार भयकर वाढे आअी है और भारी धरती-कटाव हुआ है।

अुपजाअूपनकी हानि

केवल जमीन ही नही वह जाती है, वुद्धिहीन अयवा अत्यधिक जुताअीने अुनका अुपजाअूपन भी नष्ट हो जाता है। 'ह्यूमस' तेज धूपसे जल जाता है और आवश्यक घुलनशील खनिज तत्त्व वर्षामे वह जाते है। जहा पानी वहुत कम गिरता है या अुसका गिरना विलकुल ही अविश्वसनीय होता है, वहाकी जमीनमें खेती करनेमे अूपरवाली मिट्टी विशाल पैमाने पर हवामे अुड जाती है।

अमरीका, रूस, पैलेस्टाअीन, दक्षिण अफ्रीका और अन्य देशोंमे धरती और जगलोकी रक्षाके लिअे वडे प्रयत्न किये जा रहे है, परन्तु यूरोपके सिवा कही भी रक्षाके ये प्रयत्न लगातर होनेवाले धरती-कटावको रोक नही पाये है। नदियो पर वडे वाध वाधनेने केवल अस्थायी सहायता ही मिलती है, क्योकि जो जल-भडार अिस तरह तैयार किये जाते है वे लगभग पैंतीस वर्षमें मिट्टीसे भर जाते है। सयुक्त राज्य अमरीकामें अैसा सैकडो जल-भडारोमे हुआ है। १९५० में जापानके ५४ कृत्रिम जल-भडारोंकी जाच की गअी थी। अुनमे से २४ आधेसे अधिक मिट्टीसे भर गये थे। अिन २४ जल-भडारोंकी पानी सग्रह करनेकी क्षमता १८ वर्षमें औसतन् ७३ प्रतिशत कम हो गअी थी। पुअर्टो रिकोमे १९५० में पूरे होनेवाले ३७ वर्षोंमें ग्वायावाल जल-भडारकी पानी सग्रह करनेकी क्षमता ८९.७ प्रतिशत कम हो गअी, कोअेमो जल-भडारकी ५०.२ प्रतिशत कम हो गअी और कोमेरियो जल-भडारकी ९५.९ प्रतिशत कम हो गअी। सन् १२०० के आसपास सीलोनमे जलाशयोके अिसी तरह रेतसे भर जानेकी घटनाअें

हुअी थी। कअी हजार वर्ष पहले मैसोपोटेमियामें भी अिसी तरह बडे पैमाने पर मिट्टी भर गअी थी।

जगलोके नाशसे धरती-कटाव होता है

आगसे और अिमारती लकडी तथा कागजके गूदेके लिअे होनेवाले अुद्योगवादके आक्रमणोसे जगलोका जो नाश होता है, अुससे अवश्य ही भयकर बाढ आती है और अधिक धरती-कटाव होता है। यूरोपमें भी जिस मात्रामें नये जगल पैदा होते हैं अुनकी अपेक्षा लकडीकी खपत १० से १५ प्रतिशत अधिक होती है। सयुक्त राज्य अमरीकामें नये वृक्षोकी अुत्पत्तिकी अपेक्षा वृक्षोकी कटाअी बहुत ज्यादा होती है। अुदाहरणके लिअे, 'न्यू यॉर्क टाअिम्स' के रविवासर सस्करणके लिअे आवश्यक कागजका गूदा तैयार करनेके लिअे १० अेकड (कुछ जानकार १०० अेकड बताते है) भूमिमें खडे बडे पेड चाहिये। अुस रविवारके सस्करणका अेक-तिहाअीसे कुछ कम भाग समाचारो, लेखो या सम्पादकीय लेखोंमें लगता है। अधिक बडा भाग विज्ञापनोमें लगता है। और विज्ञापन-दाताओका अेक मुख्य हेतु अिस प्रकार अपना व्यावसायिक खर्च बढाकर आय-कर घटाना होता है। सयुक्त राज्य अमरीकामें अिसी आकारके और भी कअी पत्र छपते है। सप्ताहके अन्य दिनोकी और कागजके अन्य सब अुपयोगोकी बात छोड दे, तो अेक वर्षमें ५२ रविवार होते है। ज्यादातर जगलोके अैसे शोषणके परिणामस्वरूप सयुक्त राज्य अमरीकामें बाढ लगभग हर दशकमें पहलेसे ज्यादा बडी और अधिक बार आती है।

जनवरी १९५७ के मध्यमें मद्रासके अंग्रेजी दैनिक 'हिन्दू' के अेक अंकमें कहा गया था कि भारतके लिअे २२ नये कागजके कारखानोंकी योजना बनाअी जा रही है। परन्तु अुसमें अिस बातका अुल्लेख नहीं था कि पेड़ोंकी कटाअीको कैसे रोका जायगा या कागज बनानेकी प्रक्रियामें पैदा होनेवाले गन्दके तरल पदार्थोंको नदी-नालोंमें बहने देकर पानीको जहरीला बनाने दिया जायगा और मछलियोंकी हत्या करने दी जायगी अथवा अुसकी कोअी और व्यवस्था की जायगी।

धरती-कटावसे सभ्यतायें नष्ट हो गयीं

मानव-जातिके अितिहासमे लगभग प्रत्येक साम्राज्यका अन्त मरुभूमियोमे हुआ है। आजकलके मोरक्को, टयुनीशिया और अलजीरियाके वृक्षहीन सूखे प्रदेश किसी समय रोमन साम्राज्यके गेहू अुत्पन्न करनेवाले प्रदेश थे। अिटली और सिसिलीका भयकर धरती-कटाव अुसी साम्राज्यका दूसरा फल है। मेसोपोटेमिया, सीरिया, पैलेस्टाअीन और अरबस्तानके कुछ भागोके मौजूदा सूखे वीरान भूभाग अुर, बेबीलोन, सुमेरिया, अक्काडिया और असीरियाके महान साम्राज्योके स्थान थे। किसी समय अीरान अेक बडा साम्राज्य था। अब अुसका अधिकतर भाग रेगिस्तान है। सिकन्दरके अधीन यूनान अेक साम्राज्य था। अब अुसकी अधिकाश धरती बजर पडी है। तैमूर लगके साम्राज्यकी धरती पर अुसके जमानेमें जितनी पैदावार होती थी अुसका अब छोटा-सा हिस्सा ही पैदा होता है। ब्रिटिश, फ्रेंच और डच अिन तीन आधुनिक साम्राज्योने अभी तक मरुभूमिया अुत्पन्न नही की है, परन्तु अेशिया, अफ्रीका, आस्ट्रेलिया, न्यूजीलैण्ड और अुत्तरी अमरीकाकी धरतीका कस चूसनेमें और खनिज साधनोका अपहरण करनेमे अिन साम्राज्योका बडा हाथ रहा है। केनिया, युगाण्डा और अीथियोपियामें अिमारती लकडीकी कटाअीसे नील नदीका विशाल और समान प्रवाह जल्दी ही नष्ट हो सकता है। अिसमें अवश्य ही अिन साम्राज्योको यातायातके साधनो, गहरी जुताअी करनेवाले हल, खेतीके ट्रेक्टरो तथा अर्थ-व्यवहार, व्यापार और सपर्कके साधनोमें हुअे अर्वाचीन सुधारोसे बडी मदद मिली है।

और अिस तरह विनाशकी यह कहानी आगे बढ रही है। केवल अिग्लैण्ड, आयरलैण्ड और पश्चिमी यूरोप सौम्य तापमान और वर्षा साल भर अुचित मात्रामे बरसात होते रहनेके कारण जमीनके कटावसे बच गये है। लेकिन अब फार्मोमें ट्रेक्टरोके अुपयोगसे फ्रान्स और पश्चिमी जर्मनीमे जमीनका कटाव शुरू हो गया है।

संयुक्त राज्य अमरीकाके भूमिरक्षा-विभागकी ओरसे प्रकाशित '७००० वर्षमें भूमिकी विजय'* नामक अेक पुस्तकमें लेखक डब्ल्यू० सी० लाअुडेरमिल्क कहते हैं, "यदि आधुनिक सभ्यताको अुस तरहके लम्बे पतन और बरबादीसे बचना है, जो अुत्तरी अफ्रीका और निकट पूर्वके देशोंको तेरह सौ वर्षसे दुःख देते रहे हैं और सदियों तक आगे भी सताते रहेंगे, तो समाजको शोषणकी अर्थ-व्यवस्थासे बाहर निकल कर संरक्षणकी अर्थ-व्यवस्थाको फिरसे अपनाना पड़ेगा।"

यह सही है कि रासायनिक खादोंके अत्यधिक अुपयोगसे, किसानोंको (खासकर अमरीकामें) सरकारी सहायता देनेसे और मशीनोंकी मददसे अेक ही फसलकी खेती करते रहनेसे अुत्तरी और दक्षिणी अमरीकामें तथा यूरोपमें भी खाद्य-पदार्थोंका आवश्यकतासे अधिक अुत्पादन आश्चर्यजनक ढंगसे बढ़ाया गया है। परन्तु मूल्य-नियंत्रण, निर्यात-नियंत्रण तथा दूसरे सरकारी और आर्थिक हस्तक्षेपोंके कारण यह अतिरिक्त अुत्पादन आम तौर पर भूखी प्रजाओं तक नहीं पहुंचने दिया गया है। जो लोग संसारकी अन्न-समस्याको हल करनेके लिअे विज्ञान पर निर्भर रहते हैं, वे यह भूल जाते हैं कि विज्ञान मानवके लोभ, अहंकार, कल्पना-हीनता, मानसिक आलस्य, जड़ता या रुपये-पैसे और आर्थिक प्रक्रियाओंका अत्यधिक मूल्य आंकनेकी बुराअियोंका अिलाज नहीं कर सकता। अिस प्रकार जितनी तेजीसे मानव-जातिके मन, हृदय और आदतें बदल रही हैं, अुतनी ही तेजीसे या अुससे भी ज्यादा तेजीसे होनेवाले धरती-कटावके कारण हमारे अन्न अुत्पादनके साधन नष्ट हो रहे हैं।

संसारकी जनसंख्यामें वृद्धि

खाद्य-पदार्थोंकी अिस सतत बढ़ रही कमीके साथ साथ (क्योंकि धरती-कटावका परिणाम यही होता है) अब संसारकी जनसंख्या बड़ी तेजीसे बढ़ रही है। पिछले ढाअी सौ वर्षोंमें अिसकी गति और भी बढ़

* 'कान्क्वेस्ट आफ दि लैण्ड थ्रू ७,००० ओयर्स'।

गअी है। ससारके अितिहासमें पहली बार अैसी स्थिति पैदा हुअी है कि मालके यातायात, चुगी-कानून या पैसेकी बाधाये न रहते हुअे भी मौजूदा अनाज अुत्पन्न करनेवाली जमीनकी पैदावारसे जितने लोगोको भोजन दिया जा सकता है अुससे अधिक लोग दुनियामे हो गये है। यह राय सयुक्त राष्ट्रसघकी खुराक और खेती-सबधी सस्थाने खेती तथा जनसख्याके अुत्तम अधिकारियोसे विचार-विमर्श करनेके बाद प्रकट की है। जनसख्या और खेती-सबधी प्रश्नोके अनेक स्वतन्त्र विशेषज्ञोका भी यही मत है। यहा मै कुछ विस्तारसे अिस पर प्रकाश डालूगा।

‘हमारी लुटी हुअी पृथ्वी’ (अवर प्लन्डर्ड प्लेनेट) नामक अपनी पुस्तकमें फेयरफील्ड ऑस्बर्न यह अनुमान लगाते है कि सारे जगतमे ४ अरब अेकडसे अधिक खेतीके लायक जमीन नही है। सयुक्त राष्ट्रसघकी खुराक और खेती-सम्बन्धी सस्थाने जनवरी १९५० की अपनी मासिक पत्रिकामें यह अनुमान लगाया है कि ससारमें कुल भूमि ३३ अरब १२ करोड ६० लाख अेकड है और कृषियोग्य भूमि ३ अरब ७० लाख अेकड है। कॉर्नेल विश्वविद्यालयके पियर्सन और हेअीसने ‘ससारकी भूख’ (दि वर्ल्ड्ज़ हगर) नामक अपने ग्रथमें कुल भूमिके क्षेत्रफलका अन्दाज ३५ अरब ७० करोड अेकड लगाया है। अुन्होने यह भी अनुमान लगाया है कि अिस सारे क्षेत्रफलकी ४३ प्रतिशत भूमिमें ही फसल अुगानेके लिअे काफी वर्षा होती है। अुन्होने वार्षिक १५ अिच वर्षा ही पकडी है, जो पर्याप्त नही मानी जा सकती। अिस सारी जमीनके ३४ प्रतिशत भागमें ही अितनी वर्षा होती है, जो पर्याप्त और विश्वस्त दोनो है। अुनका यह विश्वास है कि ३२ प्रतिशत जमीन पर ही फसल अुगानेके लिअे पर्याप्त वर्षा, विश्वस्त वर्षा और पर्याप्त गर्मी पडती है। २१ प्रतिशत जमीन पर ही पर्याप्त वर्षा, विश्वस्त वर्षा और पर्याप्त गर्मी पडती है और वह अितनी ढालवाली है जिससे खेतीमें बाधा न पडे। अन्तमें अुन्होने कहा है कि केवल ७ प्रतिशत भाग पर ही भरोसेके लायक वर्षा होती है, पर्याप्त गर्मी पडती है, वह लगभग बराबर सतहवाला है और अुसकी मिट्टी अुपजाअू है। ३५ अरब

७० करोड अेकडका ७ प्रतिशत भाग २ अरब ४९ करोड ९० लाख अेकड कृषियोग्य जमीनके बराबर होता है। अिस प्रकार ससार भरमें २ अरब ५० करोड और ३ अरब ७० करोड अेकडके बीच अैसी भूमि है, जो मनुष्यके लिअे खुराक पैदा कर सकती है। मनुष्य जलवायु या भूगोलको नही बदल सकता। विशेषज्ञोने काफी सोच-विचारके बाद यह राय प्रकट की है कि किसी भी अुपायसे अिससे अधिक जमीनको खेतीके लायक बनाना सभव नही है। और कुल मिलाकर खेतीकी पैदावारकी वृद्धि अितनी नही हो सकेगी जितनी दुनियाकी जनसख्याके बढनेकी सभावना है। खेतीकी १० से १५ प्रतिशत जमीनका अुपयोग पटसन और तम्बाकू वगैराकी पैदावारके लिअे किया जाता है, अिसलिअे खाद्य-पदार्थोंके लिअे अुपरोक्त अंकों द्वारा बताअी गअी जमीनसे वास्तवमें कम ही जमीन अुपलब्ध है।

सयुक्त राष्ट्रसघकी खुराक और खेती-सबधी सस्थाने, जिसके भूमि-सबधी आकडे अूपर अुद्धृत किये गये है, १९५० में दुनियाकी सपूर्ण जन-सख्याका अनुमान २ अरब ३५ करोड २० लाख लगाया है। अिस बात पर सभी सहमत मालूम होते है कि यह सख्या १९५० में २ अरब २५ करोड और २ अरब ३५ करोड २० लाख मनुष्योके बीच थी। सयुक्त राष्ट्रसघकी खुराक और खेती-सबधी सस्थाके अनुमानके अनुसार १.२ प्रतिशत वार्षिक वृद्धिको मान ले, तो १९५७ में दुनियाकी जनसख्या २ अरब ४८ करोड ५० लाख और २ अरब ५५ करोड ७० लाखके बीच होगी।

भूमिका जनसख्यासे सम्बन्ध

ससारकी कुल कृषियोग्य जमीनके सबसे बडे अनुमानित आकडेसे ससारकी (१९५७ की) सारी जनसख्याके अधिक छोटे अनुमानित आकडेका भाग लगानेसे दुनियाके हर व्यक्तिके हिस्सेमे १.२ अेकड जमीन आती है। २ अरब ५० करोड कुल कृषियोग्य भूमिका अनुमान और सयुक्त राष्ट्रसघकी खुराक तथा खेती-सम्बधी सस्थाका १९५७ वाला जनसख्याका अनुमान ले, तो प्रति व्यक्ति १ अेकड जमीनसे कुछ कम ही हिस्सेमें आती है। अिसे प्रति व्यक्ति १.२ अेकड कह लीजिये। अिससे

अनुमार १९५० के लिअे ये आकडे प्रति व्यक्ति १.८, १.३ और १.५ अेकड होंगे। अिम कमीका कारण १९५० के वाद मसारकी जनसंख्यामें हुअी वृद्धि है। मामान्यत माना हुआ हिमाव यह है कि हर व्यक्तिके लिअे पाश्चात्य मापदण्डके अनुमार कमसे कम पर्याप्त खुराक मुहैया करनेके लिअे २½ अेकड जमीन चाहिये। शाकाहारके लिअे यह अनुमान लगाया गया है कि प्रति व्यक्ति १½ अेकड जमीन काफी हो सकती है। अिस अन्तरका कारण यह है कि मासाहारके लिअे जो जानवर चराये जाते हैं, अुन्हें मनुष्यके खानेके लिअे अनाज, तरकारियों और फलोंके रूपमें पर्याप्त पौष्टिक तत्त्व पैदा करनेके लिअे जितनी भूमि चाहिये अुनसे लगभग ९ से १५ गुनी अधिक भूमिकी जरूरत होती है। अिसका अर्थ यह हुआ कि मासाहारी प्रजाओंकी अपेक्षा भारतवर्ष मुख्यत शाकाहार पर निर्वाह करके अपने भूमि-साधनोंकी सीमामें अधिक वुद्धिमानीसे रह रहा है।

मव कोअी जानते हैं कि भिन्न भिन्न देशोंमें जनसंख्याका घनापन अलग अलग है, और कुछ देशोंके पाम अैसी आर्थिक और राजनीतिक शक्ति है जिससे वे कुछ अन्य राष्ट्रोंकी अपेक्षा ससारके दूसरे भागोंसे अधिक सफलतापूर्वक खुराक खीचकर ला सकते हैं। अिसलिअे कुछ राष्ट्रोंको अन्य राष्ट्रोंसे ज्यादा अच्छी खुराक मिल जाती है। परन्तु अुपरोक्त आकडोंसे प्रकट होता है कि अगर सारी जमीन ससारके तमाम लोगोंमें समान रूपसे और न्यायपूर्वक वाट दी जाय, व्यापार-वाणिज्य पूरी तरह आदर्श वन जाय और खुराक लाने-ले जानेके लिअे ढुलाअीका खर्च और भावके प्रतिवन्ध न हो और अगर सारी दुनिया शाकाहारी वन जाय, तो भी ससारके सारे लोगोंको मुश्किलसे पूरा खाना मिलेगा।

सयुक्त राष्ट्रसघकी खुराक और खेती-सम्बन्धी संस्थाने 'खुराक और खेतीकी दशा' पर अपनी सितम्बर १९५५ की रिपोर्टमें कहा है कि ससार-व्यापी आधार पर अन्नकी प्रति व्यक्ति प्राप्ति १९३४-३८ के औसतसे १९५४ में कुछ अधिक थी। परन्तु शायद भारत-सहित सुदूर पूर्वके देशोंमें अिस अवधिमें अन्नके अुत्पादनसे जनसख्या ज्यादा तेजीसे वढी।

जनसंख्यामें तीव्र गतिसे वृद्धि

पिछले २५० वर्षोमें ससारकी जनसंख्या ही बहुत नही बढी है, बल्कि अिस वृद्धिकी गति भी पिछले ३०० वर्षोंमे तेज हो गअी है और आज भी जनसंख्या दिनोदिन बढती ही जा रही है। पृथ्वीतल पर प्रतिदिन ६८ हजार नये मनुष्य जन्म लेते हैं। आज सारी दुनियामें खालिस वार्षिक वृद्धि लगभग १ २ प्रतिशत होती है। भारतमें यह वृद्धि शायद कुछ अधिक है— १९३१ मे १ २५ और १९४१ में १ ३० प्रतिशत थी। यदि ससार भरमें अिस वृद्धिकी तेज गति रुक जाय और आजकी गति ही कायम रहे, तो भी ७५ वर्षमें ससारकी आबादी दुगुनीसे ज्यादा हो जायगी। अैसा अनुमान है कि अगले १० वर्षोमे दुनियाकी जनसंख्या १० से १७ प्रतिशत तक बढेगी और पूर्वी देशोकी ९ से १८ प्रतिशत तक बढेगी। १९८१ में भारतकी आबादी ५२ करोडके आसपास होगी। अगर १९२१ से १९४१ की औसत गति बनी रहे तो सन् २००० में भारत और पाकिस्तानकी जनसंख्या कुल मिलाकर लगभग ८० करोड हो जायगी। परन्तु ससारके खाद्य-पदार्थोकी अुत्पत्ति अुस समय तक दुगुनी होनेकी सभावना नही है।

विदेश-गमन सहायक नहीं

सिद्धान्तके रूपमें विदेश-गमन द्वारा भूमि-सबधी साधनोंके अनुसार जनसंख्याका अधिक न्यायपूर्ण बटवारा करनेसे कुछ राहत मिल सकती है। विदेश-गमन और सतति-नियमन दोनोंके मेलसे किसी खास देशको राहत मिल सकती है, जैसा कि १८४५ से आयरलैंडके विषयमें हुआ है। परन्तु जन्मसंख्या अूची बनी रहे तो कोअी राहत नही मिलती, जैसा कि अिटलीके अनुभवसे प्रगट होता है। १८८० और १९२० के बीच ४५ लाख आदमी अिटलीसे जाकर सयुक्त राज्य अमरीकामें बस गये और १ करोड २० लाख आदमी दूसरे देशोमें चले गये। फिर भी जन्मसंख्या अूची बनी रहनेसे अिटलीकी जनसंख्या अुसी अर्सेमें २ करोड ९० लाखसे बढकर ३ करोड ९० लाख हो गअी। सिसिलीसे बडीसे बडी संख्यामें विदेश-गमन हुआ, फिर भी वहाकी जनसंख्या अुन वर्षोमें शेष

अिटलीसे लगभग दुगुनी तेजीके साथ बढी। अधिकसे अधिक विदेश-गमनके वर्षोमें अिटलीकी जनसख्या जितनी तेजीसे बढी अुतनी पहले या बादमे कभी नही बढी।

अब तो अितना ही स्पष्ट कर देनेकी जरूरत है कि जनसख्या और खुराकके सम्बधकी समस्या न केवल भारतके सामने बल्कि सारी दुनियाके सामने है। क्योकि यह स्थिति समस्त ससारके लिअे पहले कभी नही रही और क्योकि अिसके गूढार्थ अितने भयकर है, अिसलिअे लोग अिसे समझने और स्वीकार करनेके लिअे बहुत अनिच्छुक है। हमें अप्रिय सत्य अच्छा नही लगता, विचार करनेकी हमारी तैयारी नही होती, अपनी पद्धतिया बदलना हम नापसन्द करते है। परन्तु मानवकी जडतासे प्रकृति, मृत्यु और जन्म अधिक बलवान है। जिसे माल्थूस-वादका नया पुजारी कहा जाता है वह मै नही हू। मै नही मानता कि मनुष्य-समाज विनाशकी ही ओर बढ रहा है और अुसका कोअी अिलाज नही है, परन्तु मै मानता हू कि मनुष्य-जातिको जिन समस्याओका मुकाबला अब तक करना पडा है, अुनमें यह समस्या सबसे ज्यादा कठिन और पेचीदा है।

हिंसाके खतरे

आधुनिक युद्ध और घरेलू लडाअियोके विनाशकारी परिणामोकी चर्चा शायद ही जरूरी है। पिछले ४० वर्षोमे अिसकी विषैली शक्तिका परिचय हमें मिल गया है। यूरोप और अमरीकाकी सभ्यता अिसीके कारण विनाशके किनारे पर पहुच गअी थी। टॉयनबीके विश्व-अितिहासके गहरे अध्ययनसे प्रगट होता है कि मुख्यत युद्धका सहारा लेनेकी मानव-समाजकी आदतने २१ सभ्यताओको नष्ट कर दिया है। शायद युद्धका सबसे बुरा नतीजा यह है कि अुससे धरती, जगल, सिचाअीकी नहरे और भूमि-रक्षाके अुपाय नष्ट होते है। दूसरे दुष्परिणाम ये है कि युद्धके कारण अुत्तम नौजवानोकी हत्या होती है और समाजको कल्पनातीत नैतिक हानि होती है। आधुनिक हथियारोकी ताकत बढ जानेसे विनाशकी गति और व्यापकता बहुत ज्यादा

वढ गअी है। शायद यह मूर्खता तब तक जारी रहेगी जब तक मनुष्य आत्माके स्वभावके वारेमें अपनी वर्तमान भ्रामक कल्पनाको कायम रखता है और अुस कल्पनाके आधार पर आत्मरक्षाकी वैसी ही भ्रामक धारणा बनाये रखता है। बेशक, अणुवम या हाअिड्रोजन बमके अिस्तेमालसे सारी मानव-जाति नष्ट हो सकती है, यद्यपि मेरे विचारसे अिस भयकर आपत्तिके शिकार होनेसे हम वाल-वाल बच जायेंगे। लेकिन यदि भयकर हथियारोंसे लडा जानेवाला तीसरा युद्ध टल भी जाये तो अुसके स्थान पर चल रहा हिंसाकी विभिन्न पद्धतियोंवाला 'ठडा' युद्ध सर्वत्र जीवनको वुरी तरह विपन्न, दु खी और निराशापूर्ण बना देगा।

सत्ताके खतरे

पहले राजनीतिक और आर्थिक दृष्टिसे पराधीन रह चुके देशके नाते समग्र भारतको सत्ताके असमान विभाजनकी कटुताका अनुभव हो चुका है। और भारतके भीतर, पहलेकी तरह आज भी, हरिजन, आदिवासी, कारखानोके मजदूर और किसान भी सत्ताके अन्यायपूर्ण विभाजनकी बुराअिया जानते हैं। शक्तिशाली व्यक्तियो, समूहो और जातियोकी भी नैतिक, मानसिक और आध्यात्मिक दृष्टिसे हानि हुअी है, भले ही अुन्हे अपनी हानिका ज्ञान न हो। लॉर्ड अेक्टनका यह कहना सही है कि "सत्तामें मनुष्यको भ्रष्ट करनेकी प्रवृत्ति होती है, और अनियन्त्रित सत्ता पूरी तरह भ्रष्ट करती है।" अुन्होने यह नही कहा है कि सत्ता अनिवार्य रूपसे और अवश्य ही भ्रष्ट करती है, अुन्होने अितना ही कहा है कि अुसमें यह प्रवृत्ति होती है। परन्तु अितिहाससे और प्रतिदिनके हमारे अवलोकनसे पता चलता है कि अुस प्रवृत्तिको रोकनेमें बहुत ही कम लोग सफल हुअे हैं। किसी हद तक अिसका असर छोटे और वडे लोग, आप और मैं तथा बहुत महत्त्वपूर्ण व्यक्ति —सभी पर पडता है। यह जरूरी नही है कि वह भ्रष्टता आर्थिक या राजनीतिक ही हो। वह हेतुकी हो सकती है, कल्पनाकी हो सकती है, भावनाकी हो सकती है, मनकी हो सकती है, नीतिकी हो सकती है

या हृदयकी हो सकती है। सत्ता आर्थिक, औद्योगिक, व्यावसायिक, राजनीतिक हो सकती है या शिक्षा, धर्म और भूस्वामित्वकी भी हो सकती है। जब सत्ताका गलत वितरण या गलत अुपयोग होता है तब सारे मानव-समाजकी हानि होती है। सत्ताकी महत्त्वाकांक्षाने सारे साम्राज्योंको बनाया और बिगाड़ा है, और साम्यवादी और पश्चिमी पूंजीवादी गुटोंके बीच चल रहे प्रबल संघर्षोंका मुख्य कारण भी सत्ता ही है। भारत-सहित सारे राष्ट्र अिस समय सत्ताके घोर असमान वितरणके कारण खतरेमें पड़ गये हैं।

यह सच है कि प्रत्येक मानव-समाजमें सत्ता अवश्य होती है, और अुसका अुपयोग होगा तथा होना चाहिये। संगठनका स्वरूप कुछ भी क्यों न हो, सूर्यकी शक्ति १६ अश्वशक्ति प्रति वर्गगजकी औसत मात्रामें पृथ्वी पर अुतरती रहती है। अिसलिअे अिस शक्तिके अुपयोग पर जिस किसीका अधिकार होगा, भले वह जमीनका मालिक किसान हो, जमींदार हो, धर्मसंस्था हो, मठ हो या राज्य हो, अुसीके हाथमें आर्थिक और राजनीतिक सत्ता होगी और वही अिसका अुपयोग या दुरुपयोग करेगा। यही बात पानीके अुपयोगके नियंत्रणके बारेमें है। और चूंकि मनुष्य प्रतीकोंका सर्जन करनेवाला और अुनका अुपयोग करनेवाला प्राणी है और प्रतीक मानव-शक्तिको प्रेरित और संचालित करते हैं, अिसलिअे प्रतीकोंका संचालन सत्ताका दूसरा स्रोत है। कुछ व्यक्ति हमेशा अैसे होंगे जो कुछ प्रतीकोंके संचालनमें खास तौर पर चतुर होते हैं। ये प्रतीक पैसा या धार्मिक प्रतिमाअें और मंत्र या राजनीतिक झंडे और सारे तमगे सामाजिक दर्जे और प्रतिष्ठाके चिह्न हो सकते हैं। अिसलिअे प्रत्येक मानव-समाजमें, भले ही अुसके मूल्यों और अर्थोंका स्वरूप कुछ भी हो, कुछ लोग अैसे हमेशा रहेंगे जो प्रचलित मूल्यों और अर्थोंके सम्बन्धमें दूसरोंकी अपेक्षा अधिक समृद्ध होंगे और कुछ अैसे रहेंगे जो दूसरोंसे गरीब होंगे। जैसा जीसस मसीहने कहा है, "गरीब तुम्हारे साथ सदा लगे हुअे ही रहते हैं।"

बडी सत्ता और बढती हुअी सत्ताकी अभिलाषा लगभग सार्वभौम मानव-दुर्बलता है। शायद जीनेकी अिच्छा — जिजीविषा — का यह विकृत रूप है। अिसलिअे अिसे नियत्रणमें रखना बडा कठिन है। परन्तु लोग — व्यक्ति और समूह दोनो — कुछ दिशाओमें सयम सीख गये हैं और अुसका पालन करते हैं। अुदाहरणके लिअे, मलेरिया या पीले बुखारका शिकार होना साधारण मानव-दुर्बलता है। अब चूकि हम समझ गये हैं कि ये बीमारिया क्यो होती हैं, अिसलिअे बहुतसे लोग मच्छर-दानियोमें सो सकते है या अुनकी सरकार या नगरपालिकाअें मच्छर पैदा होनेवाले स्थानो पर तेल या रासायनिक पदार्थ छिडकवा कर अिन बीमारियोको टाल सकती हैं। क्षयकी रोकके लिअे सुनिश्चित वैयक्तिक और सामाजिक अुपायोका प्रयोग करके पश्चिममें अिस रोगका लगभग अुन्मूलन हो चुका है। शराबके अत्यधिक अुपयोगसे पैदा होनेवाली बुराअिया नियत्रणमें रखी जा सकती हैं। अिस्लामने यह काम पूर्ण धार्मिक निषेध द्वारा किया है। पश्चिमी राष्ट्रोने कानूनी प्रतिबन्ध लगाकर आशिक नियत्रण स्थापित किया है। जिनके हृदय कमजोर हैं वे समझदारीपूर्वक अूची पहाडियो पर रहनेसे परहेज करते है। अैसे ही दूसरे अुदाहरणोकी कल्पना की जा सकती है।

अिसी तरह, यदि हम अपने प्रति सच्चे हो, तो सत्ताकी अति-शयतासे पैदा होनेवाले नैतिक, आर्थिक और राजनीतिक रोग भी बुद्धि-पूर्वक योजित अुपायोंसे कम किये जा सकते हैं। अितिहासने हमे अिसके बहुतसे कारण और अुनके कार्यकी पद्धतिया सिखा दी है। जमीन, पानी, शिक्षा, कानूनी न्याय, बिजली और दूसरी शक्तियोको प्राप्त करनेके अधिकारो और दूसरे अवसरोका वितरण अिस प्रकार किया जा सकता है कि घोर अन्यायके अुदाहरण बहुत कम रह जाय और हर मनुष्यके भीतरकी आत्माको विकासका पूरा मौका मिल जाय। धनवान या बलवान मनुष्य सदा जन-साधारणकी भलाअीके सरक्षक बनकर काम कर सकते है। अगर वे सरक्षक बनकर न्यायपूर्वक काम करनेसे अिनकार करे, तो

अुनके नियत्रणके लिअे अतिम अुपायके रूपमे सत्याग्रहका आश्रय लिया जा सकता है।

वडे वडे सगठनोके खतरे

भारतमे वहुत लोग अब नौकरशाहीके वीमेपन, वरवादी, आये दिनकी गैर-जिम्मेदारी और भ्रष्टाचारमे अितने अधिक परिचित होते जा रहे है जितने पहले कभी नही थे। ये किमी विशेप व्यक्ति या किमी राजनीतिक दलके दोप नही है। अिनका कारण राष्ट्रके राजनीतिक मगठनका भीमकाय होना है। अगर मत्ताधारी दल या वर्तमान पदाधिकारी वदल दिये जाय तो भी यह वुराअी वनी रहेगी। यह वुराअी हर राष्ट्रमे पाअी जाती है, भले अुनकी जाति या मामान्य राजनीतिक विचारधारा कुछ भी हो। यह वुराअी ग्रेट ब्रिटेन जैसे छोटे राष्ट्रमे अितनी वडी नही होती जितनी मयुक्त राज्य अमरीका या रूम जैमे वडे राष्ट्रोंमें होती है। वह अमरीका जैसे नये देशकी अपेक्षा, जिमकी जनमख्या कअी देशोंमे आये हुअे लोगोंमे वनी है, किमी अेकरगे और राजनीतिक दृष्टिसे अनुशासनमें रहे हुअे राष्ट्रमें कम होती है। वह स्टैण्डर्ड ऑअिल कम्पनी जैमे वडे औद्योगिक मगठनमे किमी राजनीतिक मगठनकी अपेक्षा कम होती है, क्योकि लोगोके माथके व्यवहारोकी अपेक्षा पैमे और पदार्थोंके माथके व्यवहार कही अधिक मापने लायक, मुनिश्चित, व्याख्या करने जैमे, नियत्रणमे रखने योग्य और राजनीतिक हस्तक्षेपके अधीन होते है।

वडे आकारकी पूजा लोभ, महत्त्वाकाक्षा और मत्ताकी भूखके माथ चलती है और अुन्हे अुत्तेजन देती है। अिनके माथ-माथ आम तौर पर अेक और भूल भी पाअी जाती है — वह यह कि किमी वडे भौगोलिक प्रदेशकी समग्र तथा व्यापक मानव-अेकता राजनीतिक ही होनी चाहिये। प्राचीन अेशियाने, जिसमे भारतवर्ष शामिल था, मेरे खयालसे गाव और परिवारकी दो छोटी मस्थाओंके महत्त्व पर जोर देनेमें और अुसने वडे-वडे प्रदेशोकी व्यापक अेकताओंको राजनीतिक रूप देनेके वजाय मुख्यत सास्कृतिक रूप देनेमे गहरी वुद्धिमानी की थी। अेशियामें भी समय-

समय पर बडे-बडे राजनीतिक सगठन जरूर खडे हुअे थे, परन्तु अेशियाके महान राजनीतिक सगठन अपेक्षाकृत कमजोर थे। अुदाहरणके लिअे, चीनमें सैनिकोको घृणाकी दृष्टिसे देखा जाता था। और मै भूल नही कर रहा होअू तो भारतमें क्षत्रियोका मुख्य कार्य युद्ध करना नहीं बल्कि शासन करना था और वह शासन अधिकतर छोटे-छोटे प्रदेशोंका होता था। अवश्य ही पश्चिमका यह विश्वास है कि व्यापक अेकताअें मुख्यत राजनीतिक होनी चाहिये। मेरे खयालसे यह अेक बडी भूल है। हा, प्राकृतिक साधनोकी रक्षा तथा कुछ और विषयोकी, जिनकी चर्चा आगे की गअी है, बात दूसरी है। आधुनिक शिल्प-विज्ञान और अुद्योगवादको अपनानेके फलस्वरूप सगठनका कुछ हद तक बडा हो जाना अनिवार्य है।

आधुनिक राज्योंमें राजनीतिक लोकतत्रकी अधिकाश कठिनाअिया और कमजोरिया लोकतत्रकी मूलभूत कठिनाअिया और कमजोरिया नही है। परन्तु वे अुनके विशाल आकार और बडी जनसख्या अर्थात् बहुत बडे पैमाने पर किये जानेवाले सगठनके कारण होती है। दिनमें मात्र २४ ही घटे होते है और साधारण लोगोको अपने और अपने परिवारके लिअे रोटी कमानेमें ही अपना अधिकाश समय और शक्ति खर्च करनी पडती है। अुन्हे वे सारे तथ्य जानने-समझनेका समय ही नही मिलता, जो किसी बडी जनसख्याके सार्वजनिक व्यवहारो पर बुद्धिमत्तापूर्ण निर्णय करनेके लिअे जरूरी है। परस्पर विरोधी और स्वार्थपूर्ण हितो द्वारा विकृत हुअे बिना सारे तथ्य मालूम हो जाय तो भी अुनके लिअे अिन पर विचार करनेका समय निकालना सभव नही है। अिसके सिवा, बहुतसे लोग दूरके और जाहिरा तौर पर गूढ दिखाअी देनेवाले प्रश्नो पर सोचना पसद नही करते। वे अैसे किसी आदमीके पीछे चलना ज्यादा पसद करते है, जो अिन प्रश्नो पर विचार करनेके लिअे तैयार हो। अिसलिअे बडे-बडे मामलोंमें लोगोंको निर्णय करनेका अपना अधिकार मुट्ठीभर प्रतिनिधियोंके सुपुर्द करना पडता है। परन्तु थोडेसे आदमियोंके हाथमें सत्ताका अिस तरह केन्द्रित होना खतरनाक है। सत्तासे प्रलोभन और भ्रष्टाचारकी प्रवृत्ति पैदा हो

ही जाती है। परन्तु काफी छोटे पैमाने पर, अुदाहरणके लिअे किसी गावका, काम हो तो वहा लोगोकी अपनी स्थानीय समस्याओ पर समझ-बूझकर विचार करनेकी तैयारी होती है। जिसके लिअे अुन्हे समय मिल जाता है और अुनमें शक्ति भी होती है, और वे अपने निर्णय सफलतापूर्वक कर सकते और बता सकते है। छोटे क्षेत्रकी समस्याये पेचीदा भी कम होती हैं। अवश्य ही व्यावहारिक जीवनमे कुछ खतरे तो अुठाने ही पडते हैं। परन्तु यह भी व्यावहारिक बुद्धिमत्ता है कि खतरे कमसे कम रखे जाय। अिस बारेमें अधिकाश सगठनोमे स्वेच्छापूर्वक या कानून द्वारा आकार पर प्रतिबन्ध लगा देनेसे बडी मदद मिल सकती है। केवल छोटे-छोटे सगठनोंमें ही रहने और अुन्हींके द्वारा काम करनेका निर्णय करना अैसा ही है, जैसा अच्छा जीवन व्यतीत करनेके लिअे अपने वातावरण पर समझदारीके साथ कोअी और नियत्रण लगाना होता है। स्थानीय स्वशासन और समग्र अेकीकरणको परस्पर सम्बद्ध करनेके लिअे नये तरीके अीजाद करनेकी जरूरत है।

यदि आधुनिक यातायात और सपर्कके साधनो, प्रचारकी मनोवृत्ति और आधुनिक हथियारो द्वारा पहलेकी अपेक्षा आजकल लोगोकी बडी सस्याओ पर नियत्रण रखना आसान हो जाता है, तो अुनसे बडे पैमानेके सगठनके मानसिक और नैतिक खतरे भी बढ जाते हैं। किसी भी क्षेत्रमें बडे सगठनोका अनिवार्य परिणाम सत्ताका केन्द्रीकरण होता है और अुससे भ्रष्टाचारकी प्रवृत्ति भी लगभग अनिवार्य हो जाती है। अिसलिअे आधुनिक समाजके लिअे यह अेक बडा खतरा है। बडे सगठनसे कार्य-क्षमता बहुत घट जाती है और रहन-सहनका खर्च बढ जाता है।

साधन और साध्यके विरोधका खतरा

भी काममे सफलता तभी मिल सकती है जब कि साधन साध्यके अनुरूप ही हो। यह बात गुण और मात्रा दोनोंके लिअे सही है। आप हथौडे आदि भारी औजारोसे हाथकी घडी नही बना सकते। आप बडी पिचकारीसे रग छिडककर अजन्ताकी चित्रकारी नहीं कर सकते। बार-बार पीटकर आप किसी बालकमें या अुस बालकसे बढकर वयस्क बननेवाले व्यक्तिमें सुख या भावनाओका सतुलन पैदा नहीं कर सकते। स्पर्धाकी प्रबल भावनासे स्थायी मानव-अेकताका निर्माण नही होता। हिंसा पर आश्रित रहकर किसी दीर्घजीवी राष्ट्र या सस्कृतिका निर्माण नही किया जा सकता।

डार्विनकी खोजोंसे और अुसकी दिखाअी हुअी दिशामें की गयी अन्य खोजोसे यह साबित हो गया है कि मनुष्य-सहित सारे प्राणियो पर अपनी-अपनी परिस्थितियोका अनिवार्य प्रभाव पडता है। मनुष्यने औजारोका आविष्कार किया। वे मानवके मस्तिष्कमें विचारोके रूपमें शुरू हुअे। अपने मस्तिष्क, हाथो और आखोसे अुसने अुन्हे मूर्त रूप दिया और बादमें अुनका अुपयोग किया। मनुष्य सगठनो और विचारो जैसे अमूर्त साधनोको भी विज्ञापनो और प्रचारका मूर्त रूप देता है और अुनका अुपयोग करता है। ये चीजें, जिन्हे मनुष्य अपने भीतरसे निर्माण करता है और काममें लेता है, स्थूल हो या सूक्ष्म, अुसकी परिस्थितिका अग बन जाती हैं। हरअेक यह मानता है कि औजार और मशीनें मनुष्यकी परिस्थितिका अेक अग होती हैं। परिस्थितिका अग होनेके कारण वे अुसे प्रभावित करती है। अिसलिअे हमारे अुपयोगमे आनेवाले साधनोका जैसा स्वरूप होगा वैसा ही हमारे चरित्र पर अुनका असर होगा। यदि हम अनैतिक साधन काममें लेगे, जैसे हिंसा या अप्रामाणिकता, तो वे हमारे चरित्रको हानि पहुचायेंगे। यदि हम प्रामाणिकता, सत्य, विश्वास और प्रेमपूर्वक समझानेकी भावनासे काम लेगे, तो अिनसे हमारे चरित्रको सहायता मिलेगी, अुसका बल बढेगा। जिस तरह पौधा पानी, खनिज पदार्थ और सूर्यकी शक्तिको, जो अुसके विकासके साधन

है, अपने अन्दर खींच लेता है और पचा लेता है, अुसी तरह मानव-व्यवहारोंमें जिन ध्येयोंको सिद्ध करनेकी अभिलाषा रखी जाती है अुनका विकास धीरे धीरे होता है, और अुनकी सिद्धिके लिअे जो साधन काममें लिये जाते हैं अुन साधनोंको वे ध्येय अनिवार्य रूपसे अपने भीतर पचा लेते और आत्मसात् कर लेते हैं। जब किसी राज्यका निर्माण करने या अुसकी रक्षाके लिअे हिंसा काममें लायी जाती है, तो अुस राज्यका स्वरूप अैसा बन जाता है जो बहुत कुछ हिंसक होता है।

अदूरदर्शी होना बड़ा आसान है। हम अकसर अैसे मनुष्यको देखते हैं जो बेअीमानी या अन्यायपूर्ण अुपायोंसे प्राप्त की हुअी सत्ता, दौलत या जमीनका आडंबरपूर्ण ढंगसे अुपभोग करता है। और हमें भी बेअीमान या अन्यायी बनने और साथ ही सत्ता और दौलत प्राप्त करनेका प्रलोभन होता है और हम अैसा मान लेते हैं कि शायद अिससे हमारा कुछ नहीं बिगड़ेगा। परन्तु अुस आदमीको लम्बे अर्से तक देखते रहिये। अुसके चरित्रका, अुसके भीतरी संतुलनका, अुसके सुखका, अुसके बच्चोंका, अुसके पारिवारिक जीवनका और अुसके धनका क्या हाल होता है? जब तक आप किसी पेड़का फल देख और चख नहीं लेते, तब तक आप यह नहीं बता सकते कि पेड़ अच्छा है या बुरा। यही बात किसी मनुष्य और किसी विचारके बारेमें भी सच है। और फलके आने और पकनेमें तो अकसर देर होती ही है।

जब किसी आधुनिक युवकके सामने सत्ताके भ्रष्टाचार या गलत साधनोंके अुपयोगसे पैदा होनेवाले संकटोंके अैतिहासिक अुदाहरण रखे जाते हैं, तो वह शायद अपने मनमें कहता है "परन्तु अुस जमानेमें हवाअी जहाज, रेडियो, बिजली, रसायनशास्त्र, मानसशास्त्र, मोटर गाड़ियां और ये सब चीजें कहां थीं, जो आज हमें अपनी परिस्थितियों पर नियंत्रण रखनेकी शक्ति देती हैं? आज हमें पहलेसे कहीं अधिक ज्ञान है और अिसलिअे जैसे पुराने लोग फंस जाते थे वैसे मैं नहीं फंसूंगा। जिन चीजोंके जालमें वे फंस गये थे अुनसे मैं बचकर निकल सकूंगा

हू।" परन्तु बाह्य जगत पर नियत्रण करनेकी प्रगतिका परिणाम यह नही होता कि आत्माके भीतरी जगत पर हमारा नियत्रण बढ जाय। विज्ञानकी अितनी प्रगति होने पर भी मानवके मूल स्वभावकी शक्तिया और कमजोरिया दोनो ज्योकी त्यो बनी रहती है। आजकलकी अूपरी भद्रता और कार्योंके असली अर्थको छिपाने या अुसमे तोड-मरोड करनेके साधनोंके बावजूद हिटलर, स्टालिन, विन्सटन चर्चिल और अेफ० डी० रूजवेल्ट पर भी सत्ताके विषका अुतना ही असर होता था और वे भी अनुचित साधन काममें लेनेकी अुतनी और वैसी ही प्रवृत्ति रखते थे, जितनी और जैसी चगेजखा, सिकन्दर या जूलियस सीज़र रखते थे। नैतिक नियम भले ही धीरे-धीरे काम करते हो, परन्तु वे है अुतने ही शाश्वत, प्रबल और अनिवार्य जितना गुरुत्वाकर्षण है। स्थायी सफलता प्राप्त करनेके लिअे वही साधन पसद किये और काममें लिये जाने चाहिये जो वाछित ध्येयके अनुकूल हो — यह अेक सूक्ष्म और अदृश्य रूपमे काम करनेवाला नियम है, परन्तु यह अुतना ही निश्चित नियम है जितना कोअी तेज गतिसे कार्य करनेवाला और आकर्षक नियम होता है। साथ ही, यदि कोअी ध्येय नैतिक दृष्टिसे मूल्यवान है तो अुसके अनुकूल साधन भी खोज निकालना और अुनका अुपयोग करना सभव है। अिसका कारण यह है कि जहा तक मानव-व्यवहारोका सबध है हम अेक नैतिक विश्वमें रहते है। साधन और साध्यकी अिस अेकरसताकी परवाह न करना किसी व्यक्ति, किसी ध्येय और किसी राष्ट्रके लिअे भयावह है।

नैतिक नियमोंका अुल्लघन करनेवाले सगठनोका खतरा

फिर, यह मान्यता भी खतरनाक है कि सार्वजनिक मामलोंमे वैयक्तिक सदाचारको ठुकराया जा सकता है या अुसका अूपरी दिखावा-मात्र करके काम चलाया जा सकता है। यह चीज हम बहुतसे, शायद अधिकाश, देशोंके राजनीतिक कार्योंके प्रबन्धमें देख रहे है, यह बात हमें बडे-बडे अुद्योगो और व्यवसाय-सम्बन्धी सगठनोंके कामकाजमें भी दिखाअी देती है। अमरीका, रूस, आर्जेण्टीना और ब्राज़िल आदि बडे देशोमे तो यह

अवश्य ही फैली हुअी है, और छोटे देशोमे भी पाअी जाती है। राजनीतिज्ञ और कूटनीतिज्ञ अकसर झूठ बोलते या अर्ध-सत्य कहते हैं, क्योंकि अुनके खयालमें राष्ट्र या राज्यके हित सत्यसे अधिक महत्त्वपूर्ण होते हैं, या अुनके पास समय बहुत थोडा होता है, या और कोअी कारण होता है। परन्तु यह दिलचस्प बात है कि जब अुनकी अनैतिकताका पूरी तरह भंडाफोड हो जाता है तब अुनका प्रभाव किस प्रकार घट जाता है या अुन्हें कितनी बार सार्वजनिक जीवनसे निवृत्ति लेनी पडती है। लोग अुस आदमीको क्षमा कर देते हैं और अुसका विश्वास भी कर लेते हैं, जो खुले तौर पर यह स्वीकार कर लेता है कि अुससे प्रामाणिक भूल हो गअी है, परन्तु यदि वह झूठ बोला हो या अुसने धोखा दिया हो और जानते हुअे भी अिस चीजको अुसने छिपानेकी कोशिश की हो, तो कलअी खुलने पर अुसकी साख जाती रहती है और अुसकी निन्दा होती है।

यह सत्य है कि किसी समूह या समाजके मनुष्योंमें आपसी अेकता या सम्बन्ध अितना घनिष्ठ, अितना सम्पूर्ण, अितना सूक्ष्म सन्तुलनवाला और अितना कोमल नहीं होता, जितना किसी अेक मानव-प्राणीके भीतरी मानसिक, नैतिक और शारीरिक तत्त्वोमें परस्पर होता है। समाज अभी तक अेक वास्तविक सजीव शरीर नहीं बना है। अेक सूक्ष्म सत्ताके रूपमें समाजका अपना कोअी अन्तःकरण नहीं होता। जैसा कि कहा जाता है, "किसी संगठनके आत्मा नहीं होती"। परन्तु किसी समाजके दुराचारोंसे अुसके चरित्रका ह्रास और यदि वे चालू रहे तो अन्तमें विनाश अुतना ही निश्चित है, जितना किसी व्यक्तिका विनाश निश्चित है।

अुसका व्यक्तित्व खंडित हो जाता है, जिसका परिणाम कुछ अुदाहरणोंमें पागलपन तक पहुंच सकता है। यह सच है कि सामूहिक कार्यमें अकसर पेचीदा और परस्पर विरोधी स्वार्थ होते हैं। बहुधा अपना मार्ग स्पष्ट देख सकना अत्यन्त कठिन हो जाता है और मनुष्यसे गलतियां हो जाती हैं। परन्तु आध्यात्मिक और नैतिक सिद्धान्त बहुत समयसे जाने हुअे हैं और वे काफी सीधे-सादे हैं। सबसे बड़ी कठिनाअी तो समझौतोंके कोलाहलसे और भूतकालकी बुरी विरासतोंसे पैदा होती है। यदि अितिहास कोअी पाठ सिखाता है तो वह यह है कि समूहोंके नेताओंकी नैतिक असफलताअें समाजके लिअे गंभीर खतरे हैं।

आत्माकी अेकतामें अश्रद्धाका खतरा

अुपर्युक्त सूचीमें अंतिम खतरा है नेताओंमें, पुस्तकीय शिक्षा पाये हुअे लोगोंमें और वाचाल लोगोंमें आध्यात्मिक अेकताके अस्तित्व और सर्वोपरि सामर्थ्यमें अविश्वास।

केवल मार्क्सवादी और साम्यवादी ही नहीं, बहुतसे दूसरे समझदार लोग भी आत्माकी वास्तविकतासे अिनकार करते हैं और अैसा मानते हैं कि अर्वाचीन वैज्ञानिक ज्ञानने आत्मा और अुसके फलितार्थोंको बिलकुल दकियानूसी सिद्ध कर दिया है। अुनमें से कुछ संदेहवादी होते हैं, कुछ अज्ञेयवादी और कुछ नास्तिक होते हैं। और कुछ लोगोंको धर्मके प्रति तिरस्कार या घृणा होती है। मार्क्सने धर्मको 'लोगोंकी अफीम' बताया था और साम्यवादी अुसीकी बातको मानते हैं। बहुतोंको अैसा लगता है कि शिल्प-विज्ञान और विज्ञानने धर्मकी जड़ें नष्ट कर दी हैं। विज्ञान और शिल्प-विज्ञानने अनेक लोगोंके ध्यान और दिलचस्पीको बेशक आन्तरिक जगतसे हटाकर बाह्य जगतकी ओर मोड़ दिया है। सचमुच बहुतसे लोगोंके लिअे अब आन्तरिक जगतका अस्तित्व ही तर्कशुद्ध नहीं रह गया है।

गणितको अकसर "विज्ञानोंकी सम्राज्ञी" या "विज्ञानोंकी जननी" कहा जाता है, अिसलिअे हम देखें कि वह हमें कहां ले जाता है। अब

यह अनुभव कर लिया गया है कि गणितकी प्रत्येक शाखा आरभमें कुछ बातें मान लेती है और अुन पर आधार रखकर फिर तर्कशास्त्रके नियमोंके अनुसार आगे बढती है। जिन्होने रेखागणितका अध्ययन किया है अुन्हे यूक्लिडकी मान्यताअें (गृहीत सत्य) याद होगी — अुदाहरणके लिअे, "कोअी भी दो बिन्दुओंको जोडकर सरल रेखा खीची जा सकती है", या "समानान्तर रेखायें कभी आपसमे मिलती नही"। ये गृहीत सत्य न तो सही सिद्ध किये जा सकते है, न गलत। यह प्रयत्न कोअी दो हजार वर्षसे हो रहा है। अब यह समझ लिया गया है कि मानव-मस्तिष्कको हर क्षेत्रमें किसी न किसी जगहसे आरभ करना पडता है। वह खुद ही अपना प्रारम्भ करता है। यह बात बर्ट्रांड रसेल जैसे अत्यन्त सदेहवादी दार्शनिकने भी साफ तौर पर मानी है। अुदाहरणके लिअे, हममे से प्रत्येक अज्ञात रूपसे अपने मनमें यह मान लेता है कि 'मैं हू'। मार्क्सने भी अज्ञात रूपमें यह मान लिया था। यह 'मैं' शरीर नही है। यह वह अिन्द्रियातीत सूक्ष्म अस्तित्व है, जिससे हम सब सुपरिचित है। वह हमारे सपूर्ण जाग्रत जीवनमें हममें अुपस्थित रहता है। अिस घनिष्ठ 'मैं'के अस्तित्वको तर्क या वैज्ञानिक यत्र या क्रिया द्वारा हममे से कोअी दूसरे मनुष्यके सामने सचमुच सिद्ध नही कर सकता। फिर भी हममे से प्रत्येक बिलकुल निश्चयपूर्वक यह मानकर चलता है कि 'मैं हू'। यह अेक पूर्व-स्वीकृत धारणा ही है, परन्तु अिस पर हमारे सारे जीवनका आधार है। अच्छा, तो यह हमें कहा ले जाती है?

विज्ञान और मानव वंश-विज्ञानको जोडती है। वह गुरुत्वाकर्षण, बिजली तथा चुम्बककी शक्तियों और हरअेक परमाणुकी शक्तियोंको अेक-दूसरेमें बांधती है। अिसी सर्वव्यापक अेकताके कारण हम अपने विश्वकी बात कहते हैं। अिसी धारणाके साथ-साथ अेक और धारणा यह है कि "प्रकृतिके कानून समान हैं"।

और अगर हम अिसमें भी गहरे, जाकर विचार करें तो हमें पता चलता है कि हम यह भी मानकर चलते हैं कि अेक और भी अैसी गहरी अेकता है जो प्रकृतिकी अुन समग्र शक्तियों और घटनाओंको हमारे अप्रत्यक्ष, अदृश्य और सूक्ष्म आन्तरिक जगतके साथ — हमारे विचारों, मनोभावों, भयों, आशाओं और आकांक्षाओंके जगतके साथ — जोडती और बांधती है। अगर आन्तरिक और बाह्य जगतके बीच अैसा कोअी बन्धन न हो, तो हम बाह्य जगतको कुछ भी न समझ सकें।

सारी अेकताओं और सारी धारणाओंमें यह सबसे गहरी अेकता और धारणा है, जो सिद्ध नहीं की जा सकती। परन्तु हमारे जीवन, कार्यों और विश्वासोंका आधार अुस पर है। समग्र अितिहास-कालमें प्रत्येक जाति और प्रत्येक युगके विचारशील लोगोंने अिसे स्वीकार किया है। अुन्होंने अनुभव किया है कि वह सब लोगोंके लिअे मूल्यवान और महत्त्वपूर्ण है और हम सबको जाग्रत रहकर अपने जीवनका मेल अुसके साथ बैठाना चाहिये। यह वही वस्तु है जिसे हम आत्मा कहते हैं। कुछ लोग यह भी मानते हैं कि यह गहनतम अेकता निर्गुण है, कुछ लोग मानते हैं कि वह सगुण है। अिन दोनोंमें से अेक भी मान्यता प्रमाणित या अप्रमाणित नहीं की जा सकती। आत्माकी समझ और अनुभूतिकी शोधको तथा अपने जीवनमें अुसका अस्तित्व स्पष्टतः स्वीकार करनेको ही धर्म या दार्शनिक परम्परा कहा जाता है। अिसलिअे धारणाओंके अस्तित्वको मानना और अुस धारणाको स्वीकार करना, जो जीवनको सबसे अधिक सार्थक बनाती है और अधिकतर समस्याओंका स्पष्टीकरण करती है, पूरी तरह वैज्ञानिक और आधुनिक है।

यह सार्वभौम सत्य है कि बहुतसे लोगोंको, जिन्होंने अिस मूलभूत अेकताको समझनेमें विशेष योग्यता प्राप्त की है और अिसके पीछे अपना सारा समय लगाया है और अुसे समझानेकी कोशिश की है, अपने बारेमें और अपने ज्ञानके बारेमें घमण्ड हो गया है और वे स्वार्थी, लोभी और अत्याचारी बन गये हैं। अिस प्रकारकी गलती सभी तरहके पेशेवर लोगोंमें — अध्यापकों, चिकित्सकों, वकीलों, अिंजीनियरों और कूटनीतिज्ञों आदिमें समान रूपसे पाअी जाती है। परन्तु अेक चिकित्सक या बहुतसे चिकित्सकोंके अहंकार, लोभ या दुराचरणसे रोग-निवारण करनेवाली कलाकी कीमत और सचाअी नष्ट नहीं हो जाती। अनेक शिक्षकोंकी संकुचितता और अहंकारसे सच्ची शिक्षाका महत्त्व घट नहीं जाता। अनेक धर्मगुरुओं और पेशेवर धार्मिक लोगोंके अहंकार, असहिष्णुता, अत्याचार, लोभ, अप्रामाणिकतासे — वे बड़ी संख्यामें हों तो भी — आत्माका और सच्चे धर्म या सच्चे तत्त्वज्ञानका महत्त्व, मूल्य और वास्तविकता नष्ट नहीं हो जाती।

बहुत संभव है कि भ्रष्ट धार्मिक संस्थाअें धन-दौलत और सांसारिक अधिकारोंमें फंसकर दीर्घ कालसे लोगोंके लिअे अफीमका काम करती रही हों। परन्तु हमें धार्मिक संगठनों और संस्थाओंमें तथा आत्मारूपी अुस साध्यमें, जिसके लिअे मूलतः वे सब केवल साधन थे, भेद करना पड़ेगा। और जैसे हम नीमहकीमों और सच्चे डॉक्टरोंमें भेद करते हैं, वैसे ही हमें भ्रष्ट और सच्चे धर्ममें भी भेद करना पड़ेगा। धर्म स्वयं अफीम नहीं है।

परन्तु मार्क्सवादी और साम्यवादी लोग यदि धर्म और अुसके अनेक पापों पर नाक-भौंह सिकोड़ें और खुद वही काम करें, जिससे धर्ममें खराबी आअी है, तो अिससे काम नहीं चलेगा। मेरा मतलब यहां आर्थिक सत्ता और सामाजिक प्रतिष्ठाके पीछे पड़नेसे है। सत्ता धर्मगुरुओं और धर्मशास्त्रियोंको ही भ्रष्ट नहीं करती, वह मार्क्सवादियों और साम्यवादियोंको भी भ्रष्ट कर सकती है।

धारणाओमें प्रचड और दीर्घजीवी शक्ति होती है। अुदाहरणके लिअे, अुन धारणाओकी दीर्घ और सतत शक्तिका विचार कीजिये जो यहूदियो, चीनियो और अग्रेजोने अपनी अपनी सास्कृतिक श्रेष्ठताके बारेमें बना रखी थी। गोरोने जो यह धारणा बना रखी है कि वे रगीन जातियोंमे श्रेष्ठ है अुससे आज ससार भरमें कितना भयकर विनाश हो रहा है अुसे देखिये। अिस प्रचलित धारणाके परिणामोको देखिये कि मूल्यका सबसे महत्त्वपूर्ण मापदड पैसा है और पैसेकी सम्पत्ति रखनेवाले लोगोंके हाथोंमें समाजका नियत्रण रहना चाहिये। हिन्दू, बौद्ध, अिस्लाम और ओीसाओी धर्मकी परम्पराओकी वास्तविकता और भावनाके बारेमें अलग अलग धारणाओके जबरदस्त और स्थायी सास्कृतिक परिणामोको देख लीजिये। गाधीजीकी अिस धारणाकी शक्ति पर भी विचार कीजिये कि परमात्मा सर्वत्र मौजूद है और वह सारे मानव-व्यवहारोका असरकारक मार्गदर्शन करता है। अिस प्रश्न पर अधिक तर्क करनेकी जरूरत नही।

हम सब अनुभव करते है कि बाहरी और भीतरी खतरोंके सामने टिके रहनेके लिअे समाजमे अेकता और सूत्रबद्धता होनी चाहिये। मनुष्यकी धारणाओ, विचारो, भावनाओ, आशाओ और आवेगोके आन्तरिक और बाह्य जगत दोनो सूक्ष्म, पेचीदा, विविध और गहन होते है। परमाणुके पदार्थविज्ञानके नये आविष्कारोसे जाहिर होता है कि परमाणुके भीतर रही शक्तिकी गतिविधिया अुन तत्त्वोमे सचालित होती है जो काल और स्थानसे परे है।

अिन सब तथ्योको देखते हुअे वह असरकारी अेकता, जो किसी विशेष मानव-समाजके सारे तत्त्वो और अगोको सम्बद्ध रखे, अैसी होनी चाहिये जिसमे ये सारे तत्त्व और अग समाये हुअे हो, अर्थात् वह पूरी तरह अव्यक्त और स्थान तथा कालसे भी परे होनी चाहिये। अिन शर्तोको पूरा करनेवाली अेकमात्र वस्तु वह है जिसे मनुष्यने आत्मा कहा है। अिसलिअे आत्माको अनुभव करने और समझनेकी खोज — अर्थात् धर्म और आध्यात्मिक दर्शनकी परम्परा — किसी राष्ट्रके स्थायी जीवनके लिअे अत्यन्त

आवश्यक है। मानव-प्राणियोंमें जितनी ऊपरी विभिन्नताअें होने पर भी, वे चाहें या न चाहें तो भी, उनकी अेक विशिष्ट जाति है। उनमें सजीव सृष्टिकी निराली अेकता है। अधिक गहरी और अधिक व्यापक आध्यात्मिक अेकताको स्वीकार करके अिस अेकताको बढ़ाना चाहिये। अिस मान्यतासे और अिसके टिकानेसे उस अलौकिक अेकताके भीतर रही विभिन्नताओंको केवल सहन करना ही संभव नहीं होता, बल्कि उनका आदर करना और आनन्द लेना भी सम्भव बनता है।

चूंकि आत्मा बाह्य प्रकृतिके जगतमें और मनुष्यके भीतर भी विद्यमान है, अिसलिअे मनुष्यके मनमें प्रकृतिके प्रति आदर और पूजाका भाव पैदा करने तथा प्रकृतिके विरुद्ध उसकी लूट-खसोटको मर्यादित और नियन्त्रित बनानेके लिअे धर्मकी आवश्यकता है, अर्थात् सच्चा धर्म और बुद्धि दोनों नीरोग और उपजाऊ भूमिकी रक्षा करनेवाले हैं। विज्ञान प्रकृतिका आदर करवा सकता है, परन्तु उसकी पूजा और उससे प्रेम करनेकी प्रेरणा नहीं दे सकता। अिस प्रकार मनुष्यके लिअे स्थायी अन्न-व्यवस्था करने और मनुष्य तथा पृथ्वी और उसके अन्य सब प्राणियोंके बीच घनिष्ठ अन्योन्याश्रय सम्बन्ध बनाये रखनेके लिअे धर्मकी आवश्यकता है। याद रखिये, मैं धार्मिक संस्थाओंकी बात नहीं कर रहा हूं, परन्तु धर्मकी बात कर रहा हूं।

अिन कारणोंसे आत्माके अस्तित्व और सर्वोपरि सत्तामें विश्वास होना किसी भी राष्ट्रके लिअे बड़े महत्त्वकी बात है। जिस विश्वासके क्षीण होने या नष्ट होनेसे उसकी अेकता, उसकी स्वतंत्रता और उसके अन्न-जलकी व्यवस्थाके लिअे बड़ा खतरा पैदा हो जाता है।

सामाजिक व्यवस्थाओंकी तुलनामें खादधारीकी जरूरत

समाजका कोअी रूप सपूर्ण नही हो सकता। प्रत्येक मामाजिक गुणके साथ कोअी न कोअी दोप, त्रुटि या कमजोरी अनिवार्य रूपमे लगी हुअी रहती है। अुदाहरणके लिअे, भारतवर्षमें आत्म-साक्षात्कारकी शोध अर्थात 'साधना' को अितना महत्त्व दिया गया है कि भारतीय समाज, अिस बातको निश्चित बनानेके लिअे कि अनेक लोग अुस आदर्शको सिद्ध कर सके, हजारो अैसे दभी भिखमगोका पालन करता है और अुन्हें सहता है जो दूसरोसे अन्न-वस्त्र प्राप्त करनेके लिअे साधु होनेका बहाना मात्र करते है। प्रत्येक सामाजिक व्यवस्थाके विशेष गुणोके साथ साथ दोप भी लगे हुअे रहते हैं। हमें विभिन्न व्यवस्थाओंके गुण-दोपोकी तुलना करके देखना होगा और फिर जो सबसे बुद्धिमत्तापूर्ण दिखाओ दे अुसे चुनना होगा।

हरअेक समाज-व्यवस्थाका विवेचन दूसरी समाज-व्यवस्थाओ पर प्रकाश डालता है और अुन्हे समझनेमें हमारी मदद करता है। हरअेक व्यवस्था दूसरी व्यवस्थाओंकी आलोचना करने और अुनका मूल्याकन करनेमें सहायक होती है और अिस तरह हमें अपना तत्सम्बन्धी ज्ञान स्पष्ट कर लेनेमें मदद करती है। यह स्पष्टीकरण हममे विश्वास पैदा करता है और रोज-ब-रोज सही चुनाव करनेमें हमारी मदद करता है।

२

पूंजीवाद

पूंजीवादके मुख्य लक्षण

पूंजीवाद अेक सामाजिक और आर्थिक व्यवस्था है, जो अितने दीर्घ कालसे और अितनी अलग अलग परिस्थितियोंमें चलती आ रही है कि अुसकी व्याख्या करना कठिन है। लेकिन यह वाद अितना सुपरिचित है और अुसके बारेमें हमें अितना व्यापक अनुभव हो चुका है कि निश्चित व्याख्याका प्रयत्न किये बिना भी अुसकी चर्चा की जा सकती है। अुसके अनेक प्रकार हैं और अुनकी कम-अधिक मात्रायें हैं। आजकल वह संसारके अधिकांश देशोंमें कम-अधिक शक्तिसे और भिन्न भिन्न रूपोंमें प्रचलित है। अुसके कुछ मुख्य लक्षण ये हैं: (१) व्यक्तिगत सम्पत्ति और स्पर्धा पर जोर, (२) बढ़ता हुआ शिल्प-विज्ञान और अुद्योगवाद, (३) सतत बढ़ता हुआ श्रम-विभाजन और श्रम-विशेषज्ञता, (४) सतत बढ़ता हुआ वाणिज्य-व्यवसाय, (५) शहरीकरण या गांवोंकी जनताको शहरोंमें खींचनेकी प्रवृत्ति, (६) अधिकांश वस्तुओं और कार्योंका पैसेमें मूल्यांकन और अुन पर पैसेका नियंत्रण, (७) कर्मके लिये पैसेके नफेकी वृत्तिको सबसे विश्वस्त और सर्वोत्तम प्रेरणा समझकर अुस पर आधार, (८) पुलिस, थलसेना, जलसेना और हवाअी-सेनाके रूपमें संगठित हिंसाका व्यापक अुपयोग, (९) भूमिका वितरण, भूमिका अधिकार, भूमिकर और ब्याज आदिसे सम्बन्धित अैसी व्यवस्थायें, जो खेतीके खिलाफ अुद्योग और व्यवसायको लाभ पहुंचाती हैं और मौजूदा कानूनी और सामाजिक प्रणालीके साथ पक्षपात करती हैं और अिसलिये किसानोंमें गरीबी और अस्थिरताकी भावनाको तथा धरती-कटाव और भूमिकी अुर्वरताके नाशको बढ़ाती हैं। पूंजीवादका सबसे अधिक विकास यूरोप, ग्रेट ब्रिटेन, अमरीका और जापानमें हुआ है।

अुसकी सफलतायें

पूंजीवादमें पैसे, विज्ञान और शिल्प-विज्ञानके मेलने संसारकी काया-पलट कर दी है। भौतिक और अल्पकालीन दृष्टिसे अुसकी सफलता भव्य और अत्यंत प्रभावशाली है। अुसके अधीन नैसर्गिक शक्तिका और अुस शक्तिके नियंत्रणका खूब विकास हुआ है। कुल मिलाकर भौतिक सम्पत्तिमें भारी वृद्धि हुअी है। जिन राष्ट्रोंमें पूंजीवादका अत्यंत अुच्च श्रेणीका विकास हुआ है, अुन्होंने अपने अधिकांश लोगोंके पोषण, निवास-स्थान और वस्त्रोंकी मात्रा और गुणवत्तामें बहुत सुधार किया है, अुन्होंने अपनी प्रजाकी औसत आयु काफी बढ़ा ली है और अपनी जनताके तमाम संक्रामक रोगोंको बहुत कम कर दिया है। अुन्होंने साक्षरताको लगभग सार्वत्रिक और अुच्च शिक्षाको बहुत व्यापक बना दिया है। अुन्होंने गणितका व्यापक प्रचार किया है, जिसमें बुद्धिवाद पर जोर दिया जाता है। कुछ समयके लिअे अैसा लगा मानो पूंजीवाद और अुसके भाअी-बन्दोंने यह पता लगा लिया है कि संसार भरमें दारिद्र्य पर कैसे विजय पाअी जाय और भूखका खतरा कैसे दूर किया जाय। परन्तु अब ये आशाअें, जहां तक पूंजीवादका सम्बन्ध है, क्षीण हो गअी हैं। अब तो अिस विषयमें भी स्पष्ट शंका है कि वह कब तक टिकेगा।

आत्म-पराजयके लक्षण

पूंजीवादी अुद्योगवादके कुछ खास परिणाम दिखाअी देते हैं, जिनमें अुसकी अपनी सत्ताके लिअे ही नहीं, बल्कि अुसका अस्तित्व बने रहनेके लिअे भी खतरे पैदा होते हैं। अिनकी चर्चा करते हुअे मैं संयुक्त राज्य अमरीकासे कअी अुदाहरण चुनूंगा। कुछ अंश तक अिसका कारण यह है कि वहां अन्य किसी भी देशकी अपेक्षा पूंजीवादी अुद्योगवादका अधिक विकास हुआ है और अिसलिअे वहां अिस प्रक्रियाके प्रवाह अत्यंत स्पष्ट रूपमें प्रगट होते हैं। कुछ अंश तक अिसका कारण यह भी है कि संयुक्त राज्य अमरीका और भारत लगभग अेक ही आकारके महाद्वीप हैं

और जिसलिये जहा तक आकारका सम्बन्ध है अिन दोनों देशोंमें अुद्योगवादका विकास बहुत कुछ अेकसा होना सभव है।

(क) जगलोंका विनाश

जगलोंके विनाशकी बात लीजिये, जिसका पहले अुल्लेख हो चुका है। सारे पहाडो, पहाडियों और अत्यत ढालू जमीनोंका जगलोंसे अच्छी तरह ढका रहना भूमिकी रक्षा, जलकी पैदावार और अुससे पैदा होनेवाली सुरक्षितता, निश्चितता तथा समृद्धिके लिये और प्रत्येक राष्ट्र, सस्कृति या सभ्यताके टिके रहनेके लिये अत्यत महत्त्वपूर्ण है। जैसा जान स्टीवार्ट कोलिंसने लिखा है, "वृक्ष पहाडोंको जमाये रखते हैं। वे मेह-आधीके तूफानोंको हलका करते हैं। वे नदियोंको नियममें रखते हैं। वे बाढ पर काबू रखते हैं। वे झरनोंका पोषण करते हैं। वे पक्षियोंका पालन करते हैं।"* जगल वायुके तापमानको सौम्य बनाते हैं, वर्षाको बढाने और समान बनाये रखनेमें सहायता देते हैं और दलदलोंको सुखानेमें मददगार होते हैं। जगलोंके विनाशसे कभी महान प्राचीन सभ्यतायें कैसे नष्ट हो गअी, अिसकी कहानी 'टॉपसॉअिल अेण्ड सिविलाअिजेशन' नामक पुस्तकमें कही गअी है।

यद्यपि जगलोंका विनाश पूंजीवादी अुद्योगवादका अनिवार्य और आवश्यक परिणाम नहीं है, जैसा कि स्वीडन और पश्चिमी जर्मनीमें सिद्ध हुआ है, फिर भी अधिकाश अुद्योग-प्रधान पूंजीवादी देशोंमें यह विनाश सचमुच हुआ है और हो रहा है।

लिअे पशुपालन करनेवाले और भेड़ें चरानेवाले समूहोका तात्कालिक आर्थिक लाभका प्रलोभन और अिसके साथ छोटे जमीदारोकी लापरवाही जगलोकी अुचित देखभाल और स्थिर अुत्पादनकी रक्षामें बाधक होती है और पशुओकी चराअी पर पर्याप्त प्रतिबध नही लगाने देती। सयुक्त राज्य अमरीका यह सिद्ध करता है कि किसी देशके अन्न-जलकी रक्षा करनेवाले जगलोको और धरतीको अनियत्रित पूजीवादी अुद्योगवाद किस तरह नष्ट कर देता है।

मि० अीगोन ग्लेसिंगरने, जो हालमे सयुक्त राष्ट्रसघकी खुराक और खेती-सम्बन्धी सस्थाके वन-अुत्पादन विभागके मुख्य अधिकारी थे, १९४७ में लिखा है

"लकडीके अुपयोगकी अिन आदिम पद्धतियोके बावजूद और खराब जगल-व्यवस्थाके बावजूद, अमरीका वनस्पतिमें अब भी सम्पन्न है। फिर भी अिन सुन्दर साधनोका अितनी लापरवाहीसे दुरुपयोग होता है कि अिस राष्ट्रके सामने महाविपत्ति मुह बाये खडी है। सयुक्त राज्य अमरीका आज कार्यरूपमें अिस बातका श्रेष्ठ अुदाहरण पेश करता है कि अपने जगलोके साथ कैसा व्यवहार नही करना चाहिये। अगर वहा आजकी पद्धति बनी रही तो राष्ट्रकी अर्थ-व्यवस्थाको जल्दी ही जो हानि पहुचेगी अुसकी क्षतिपूर्ति नही हो सकेगी। सयुक्त राज्य अमरीकाकी अर्थ-व्यवस्थाके सामने लकडीकी कमीका भयकर खतरा खडा है, जिससे अुसके घर-निर्माणके कार्यक्रमको बडी हानि पहुच रही है और युद्ध-जर्जरित यूरोप और अेशियाको आवश्यक मदद देनेमें अुस राष्ट्रके सामने बाधा खडी हो रही है।"*

(ख) धरती-कटाव

मै धरती-कटावकी पहले ही सक्षिप्त चर्चा कर चुका हू। यहा महत्त्वपूर्ण बात यह है कि अधिकसे अधिक कटाव पिछले २५० वर्षोमें

* 'दि कमिंग अेज आफ वुड', पृ० २३, २७।

हुआ और यही काल आधुनिक अुद्योगवादके अुदय और विकासका काल था। बहुत स्पष्ट है कि पूंजीवादी अुद्योगवाद, जिसके साथ जनसंख्याकी बाढ़-सी आयी, अिस भयंकर धरती-कटावका कारण था और यह कटाव आज भी विपत्तिकी दिशामें आगे बढ़ रहा है।

(ग) पानीकी मात्रा घटी है

पानीके मामलेको लीजिये, जो कि जीवनका अत्यन्त आवश्यक तत्त्व है। नीचे दो पैरेग्राफोंमें दी गयी जानकारी आर्थर अेच० वहर्ट द्वारा लिखित 'वाटर ऑर यॉर लाअिफ' नामक पुस्तकसे ली गयी है।

(१) अेक गैलन पेट्रोल बनानेमें ७ से १० गैलन तक पानी लगता है। अेक टन नकली रेशम (रेयॉन) बनानेकी प्रक्रियामें रोगे तीन लाख गैलन पानीकी जरूरत होती है। अेक टन कृत्रिम रबर तैयार करनेमें अिससे तिगुना पानी चाहिये। आधुनिक कागजके कारखानोंमें अेक टन कागज बनानेके लिअे ५० से ६० हजार गैलन पानी जरूरी होता है। दूसरे महायुद्धके शुरूमें संयुक्त राज्य अमरीकामें लगभग कागजके ७०० कारखाने थे, जो अेक करोड़ टन या अिससे अधिक बढ़िया कागज तैयार करते थे। अिसका अर्थ हुआ पांच खरब गैलन पानी। कपड़ा-मिलमें १ टन सूती कपड़ा धोनेमें ६० हजार गैलन पानीकी और अुसे रंगनेकी प्रक्रियामें ८० हजार गैलन पानीकी आवश्यकता होती है। अेक पाउंड साफ की हुअी सफेद चीनी तैयार करनेमें ७ गैलन पानी जरूरी होता है। अेक पौण्ड अेल्युमिनियम बनानेके लिअे १६० गैलन पानीकी जरूरत रहती है। १ टन साबुन तैयार करनेमें ५०० गैलन पानी लगता है। जब किसी हवाओ जहाजके अेंजिनकी परीक्षा की जाती है तो अुसे ठंडा करनेके लिअे ५० हजारसे १ लाख २० हजार गैलन पानी लगता है।

अिस्पात बनानेमे पानीका अेक बडा अुपयोग बडे बडे भभको और अुनके दरवाजोको ठडा करनेमे होता है, ताकि वे गले हुअे फौलाद और अीधनकी भयकर गरमीको सह सके और भट्ठोके पास कर्मचारी काम कर सके। अिस तरह १५० टनवाले अेक भट्ठेको ठडा करनेके लिअे लगभग २८ लाख गैलन पानी रोजाना चाहिये। फौलादकी चादरे बनानेवाले कारखानोमे भी चादरे साफ करनेके लिअे बहुत पानी काममें लिया जाता है। हालमे मेरीलैण्डके स्पैरोज पाअिन्ट स्थित बेथलहेम स्टील कॉरपोरेशन अपना माल तैयार करनेके लिअे प्रति मिनट १५,००० गैलन पानी जमीनसे पप द्वारा खीच रहा था। अवश्य ही यह सारा पानी अिन प्रक्रियाओमे अितना खराब नही हो जाता कि बिलकुल बेकार हो जाय, परन्तु अधिकाश पानी मनुष्यके पीने या कपडे धोने लायक नही रहता या कमसे कम खेतीके लायक तो नही ही रह जाता। १९५० मे सयुक्त राज्य अमरीकामे लगभग ७०० भाप और बिजलीसे चलनेवाले बडे कारखाने थे, जिनकी क्षमता कुल ४०,२५०,००० किलोवाट घटाकी थी। अिन सब कारखानोको कुल मिलाकर प्रति मिनट ४४,८८३,००० गैलन पानीकी जरूरत होती थी। पानीकी यह मात्रा बहुत ज्यादा है। यह सारा पानी अेक बारमें ही खर्च नही हो जाता, क्योकि अुसमे से बहुतसा बार बार काममें आता है। फिर भी ये आकडे आदमीको विचारमे डाल देते है। पानीकी व्यवस्था अब सयुक्त राज्य अमरीकामें अेक नअी गभीर औद्योगिक समस्या बन गअी है, और १९५७ मे राष्ट्रपति आअिजनहॉवरने कांग्रेसके सामने दिये गये अपने पहले अभिभाषणके कअी पैरामे जिसका अुल्लेख किया था। ३ मार्च, १९५३ के 'न्यूयार्क टाअिम्स' के पृष्ठ १०८ पर अेक शीर्षक था "पानीकी कमीसे राष्ट्रके असीम विस्तारके स्वप्नको खतरा" और "सात राज्योमे पानीकी भारी कमी"। अिंग्लैण्डमें लदनका जल-प्रबन्ध अपर्याप्त सिद्ध हो रहा है।

शहरोंके गदे पानी, कोयलेकी खाना, मिट्टीके तेल और [illegible] क्षेत्रो, खाद्य-पदार्थोंको साफ करनेकी प्रक्रिया, [illegible] [illegible] [illegible],

फौलादके कारखाना, कपडेकी मिलों और रासायनिक अुद्योगोंमें नदियां और झरने गदे और विषाक्त होते हैं। अिनमें नदियोंकी तमाम मछलियां मर जाती हैं और पानी किसी भी घरेलू अुपयोग या खेतीके अुपयोगके लिअे बेकार और खतरनाक हो जाता है।

अुद्योगवादमें बडे बडे शहर बनते हैं। प्रत्येक मनुष्यको जिन्दा रहनेके लिअे ६ से ८ पिंट पानी रोज चाहिये। जितना बडा शहर होता है अुनमें अुतने ही अधिक कारखाने होते हैं, अुतना ही अुसका प्रति व्यक्ति पानीका खर्च अधिक होता है। संयुक्त राज्य अमरीकाके किसी बडे अुद्योग-प्रधान नगरमें अेक आदमी पर अेक दिनमें १२५ से ३०० गैलन पानी खर्च होता है। वहां अेक आदमीके खाने-पीनेके पदार्थ पैदा करनेमें प्रतिवर्ष ५,००० टनसे अधिक पानी लगता है।

जैसा कृषि-अनुसंधानसे सिद्ध हुआ है, खेतीके लिअे भी विपुल मात्रामें पानीकी जरूरत होती है। अमरीकी कृषि-विभागकी १९५५ की वार्षिक पुस्तकमें पृष्ठ ३५८ पर कहा गया है "बढते हुअे पौधे बहुत अधिक पानी हवामें अुडाते हैं, जो वे जमीनमें से ग्रहण करते हैं। आयोवाका अनाजका अेक खेत फसलके मौसममें जितना पानी हवामें अुडाता है, जिससे १२ या १६ अिंच तक खेत पानीसे डूब जाय। ग्रेट प्लेन्स नामक मैदानोंमें अेक टन अल्फाल्फा नामक सूखी घास अुत्पन्न करनेमें हरे पौधों द्वारा ७०० टन पानी हवामें अुडाया जाता होगा। अिसका आधार वायुमंडलकी वाष्पीकरणकी शक्ति पर रहता है।"

किया है कि कुछ पौधोके अेक पौंड सूखे द्रव्यके अुत्पादनके लिअे जौको ३१० पौण्ड पानी, गरमीके दिनोंमे पकनेवाले राय नामके अनाजको ३५३ पौण्ड, जअीको ३७६ पौण्ड, गरमीके गेहूको ३३८ पौण्ड, कोर्न-वीन नामक दालको २८६ पौण्ड, मेमको २७३ पौण्ड, और बकह्वीट नामके गेहूको ३६३ पौण्ड पानी चाहिये। अेक टन सूखा द्रव्य पैदा करनेके लिअे यह ३२५ टन पानीका औसत हिसाब है। अेक पेड द्वारा अेक पौण्ड सूखी लकडी पैदा करनेके लिअे १,००० पौण्ड तक पानी हवामे भाप बनकर अुड जाता है।

अुपलब्ध पानीकी कुल मात्राको मुख्यत अुद्योग और खेतीमें बाटना पडता है। सयुक्त राज्य अमरीकामे विश्वस्त रूपसे अदाज लगाया गया है कि कुल अुपलब्ध पानीका ४८ प्रतिशत सिचाअीमें, ४३ प्रतिशत सीधा अुद्योगोमें और ९ प्रतिशत घरके कामो आदिमें अुपयोग किया जाता है।

भारत जैसे देशमे, जहा वर्षाकी मात्रा प्रतिवर्ष अनियमित रहती है, प्रतिवर्ष तीन-चार महीनोमें ही सारी वर्षा हो जाती है और जिसकी जनसख्याका खुराकके लिअे जमीन पर बुरी तरह दबाव पड रहा है, अुद्योगवादके बहुत पीछे पडनेमें खतरा ही है। अन्न औद्योगिक अुत्पादनसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। सरकारको जमीनकी सतह परके पानीका और सतहके नीचेके पानीका कृषि और अुद्योगके बीच बडी सावधानीसे बटवारा करना पडेगा।

फिर, अधिक पानीकी अनिश्चित मात्राके लिअे ट्यूबवेल (पाताल-कुअें) पर निर्भर करनेसे भी काम नही चलेगा। भारतीय मैदानोमें जमीनके नीचेका पानी पहाडोंसे आनेवाली भूगर्भ-स्थित धाराओसे मिलता हो या स्थानीय वर्षासे आसपासकी जमीनमे जज्ब हुअे पानीसे मिलता हो, अुस जमीनके नीचेके पानीकी मात्रा सीमित है।

सयुक्त राज्य अमरीकाके कैलीफोर्निया राज्यके लास अेजेलिस शहरने अपने कामके लिअे नलो द्वारा जमीनके भीतरका अितना पानी खीचा है कि अुसके आसपासकी जमीनकी सतह कअी स्थानो पर आठ

आठ फुट तक नीचे बैठ गअी है। कैलीफोर्नियाके लाग बीच नामक क्षेत्रमें जमीनके भीतरके पानीको खींचनेसे अुसके जमीनके नीचेके पानीकी सतह समुद्रकी सतहसे ७५ फुट नीचे चली गअी है, और समुद्र-तटके अुस सारे भागमें कुओंका पानी खारा होने लगा है। १९१० में कैलीफोर्नियाकी सान्ता क्लेरा घाटीमें भरपूर पानीवाले अेक हजार पाताल-कुअें थे, जो अधिकतर खेतीके काम आते थे, अुनके सिवा, कम गहरे पाताल-कुअें भी थे, पपसे निकाला जानेवाला पानी १९१५ में ३५,००० अेकड-फुट था, जो बढकर १९३३ में १३४,००० अेकड-फुट हो गया। जमीनके नीचेके पानीकी सतह हर साल ५ फुट गिरने लगी, यहां तक कि १९३३ में वह ७१ फुट नीचे चली गअी। खुद घाटीकी धरती २० बरसमें ५ फुट नीचे धंस गअी, जिससे मकानों, गलियों, नलों और फलोंकी बाड़ियोंका करोड़ों रुपयेका नुकसान हो गया। टेक्सास प्रान्तके टेक्सास नगरमें अुद्योग-सम्बन्धी कामोंके लिअे अितने अधिक पानीकी आवश्यकता हुअी कि वहां नये पाताल-कुअें खोदने पड़े, जिनमें से कुछ तो १,१०० फुट तक गहरे गये। १९३९ में अिन कुओंसे पप द्वारा रोज लगभग अेक करोड़ गैलन पानी खींचा जा रहा था। दूसरे महायुद्धने अुद्योगकी मांग अितनी ज्यादा बढ़ा दी कि १९४५ में ये कुअें २ करोड़ २५ लाख गैलन पानी प्रति दिन मुहैया कर रहे थे। नतीजा यह हुआ कि वहां अेक पाताल-कुअेंमें पानीका स्तर समुद्रकी सतहसे १०२ फुट नीचे चला गया, अेक और कुअेंने जमीनसे अितना अधिक पानी खींचा कि अुसकी सतह समुद्रकी सतहसे १६७ फुट नीची हो गअी।

किया है कि कुछ पौधोंके अेक पौंड सूखे द्रव्यके अुत्पादनके लिअे जौको ३१० पौण्ड पानी, गरमीके दिनोंमें पकनेवाले राय नामके अनाजको ३५३ पौण्ड, जअीको ३७६ पौण्ड, गरमीके गेहूंको ३३८ पौण्ड, कोर्न-वीन नामक दालको २८६ पौण्ड, मेमको २७३ पौण्ड, और बकव्हीट नामके गेहूंको ३६३ पौण्ड पानी चाहिये। अेक टन सूखा द्रव्य पैदा करनेके लिअे यह ३२५ टन पानीका औसत हिसाब है। अेक पेड द्वारा अेक पौण्ड सूखी लकडी पैदा करनेके लिअे १,००० पौण्ड तक पानी हवामें भाप बनकर अुड जाता है।

अुपलब्ध पानीकी कुल मात्राको मुख्यत अुद्योग और खेतीमें बाटना पडता है। सयुक्त राज्य अमरीकामें विश्वस्त रूपसे अदाज लगाया गया है कि कुल अुपलब्ध पानीका ४८ प्रतिशत सिंचाअीमें, ४३ प्रतिशत सीधा अुद्योगोमें और ९ प्रतिशत घरके कामो आदिमें अुपयोग किया जाता है।

भारत जैसे देशमें, जहा वर्षाकी मात्रा प्रतिवर्ष अनियमित रहती है, प्रतिवर्ष तीन-चार महीनोमें ही सारी वर्षा हो जाती है और जिसकी जनसख्याका खुराकके लिअे जमीन पर बुरी तरह दबाव पड रहा है, अुद्योगवादके बहुत पीछे पडनेमें खतरा ही है। अन्न औद्योगिक अुत्पादनसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। सरकारको जमीनकी सतह परके पानीका और सतहके नीचेके पानीका कृषि और अुद्योगके बीच बडी सावधानीसे बटवारा करना पडेगा।

फिर, अधिक पानीकी अनिश्चित मात्राके लिअे टचूबवेल (पाताल-कुअें) पर निर्भर करनेसे भी काम नही चलेगा। भारतीय मैदानोमें जमीनके नीचेका पानी पहाडोसे आनेवाली भूगर्भ-स्थित धाराओंसे मिलता हो या स्थानीय वर्षासे आसपासकी जमीनमें जज्ब हुअे पानीसे मिलता हो, अुस जमीनके नीचेके पानीकी मात्रा सीमित है।

सयुक्त राज्य अमरीकाके कैलीफोर्निया राज्यके लॉस अेंजेलिस शहरने अपने कामके लिअे नलो द्वारा जमीनके भीतरका अितना पानी खीचा है कि अुसके आसपासकी जमीनकी सतह कअी स्थानो पर आठ

आठ फुट तक नीचे वैठ गअी है। कैलीफोर्नियाके लाग वीच नामक क्षेत्रमें जमीनके भीतरके पानीको खीचनेसे अुसके जमीनके नीचेके पानीकी सतह समुद्रकी सतहसे ७५ फुट नीचे चली गअी है, और समुद्र-तटके अुस सारे भागमे कुअेंका पानी खारा होने लगा है। १९१० में कैलीफोर्नियाकी सान्ता क्लेरा घाटीमें भरपूर पानीवाले अेक हजार पाताल-कुअें थे, जो अधिकतर खेतीके काम आते थे, अुनके सिवा, कम गहरे पाताल-कुअें भी थे, पपने निकाला जानेवाला पानी १९१५ में २५,००० अेकड-फुट था, जो वढकर १९३२ में १३४,००० अेकड-फुट हो गया। जमीनके नीचेके पानीकी सतह हर साल ५ फुट गिरने लगी, यहा तक कि १९३३ में वह २१ फुट नीचे चली गअी। खुद घाटीकी धरती २० वर्षमें ५ फुट नीचे धस गअी, जिससे मकानो, गलियो, नलो और फलोकी वाडियोको करोडो रुपयेका नुकसान हो गया। टेक्सास प्रान्तके टेक्सास नगरमें अुद्योग-सम्वन्वी कामोंके लिअे अितने अधिक पानीकी आवश्यकता हुअी कि वहुतसे पाताल-कुअें खोदने पडे, जिनमें से कुछ तो १,१०० फुट तक गहरे गये। १९३९ मे अिन कुओंने पप द्वारा रोज लगभग अेक करोड गैलन पानी खीचा जा रहा था। दूसरे महायुद्धने अुद्योगकी माग अितनी ज्यादा वढा दी कि १९४५ में ये कुअें २ करोड २५ लाख गैलन पानी प्रति दिन मुहैया कर रहे थे। नतीजा यह हुआ कि वहा अेक पाताल-कुअेंमें पानीका स्तर समुद्रकी सतहसे १०२ फुट नीचे चला गया, अेक और कुअेंने जमीनमे अितना अधिक पानी खीचा कि अुसकी सतह समुद्रकी सतहसे १६५ फुट नीची हो गअी। परिणामस्वरूप भूमिके अन्दरके पानीमें समुद्रका पानी घुस जानेसे वह खारा हो गया। अुसी प्रदेशमें स्वय भूमिका स्तर हर साल औसतन् २४ अिंच तक नीचे धसा, कुछ स्थलो पर धसनेकी यह क्रिया १५ फुट तक वढ गअी। अन्य स्थानोमें, जैसे लुअीविली, कैन्टकी आदिमें, जो समुद्रसे वहुत दूर है और जहा युद्धके कारण अुद्योग पर भारी दवाव पडा, पाताल-कुअें सूखने लगे। जितनी तेजीसे पानी जमीनमें आता अुससे कही ज्यादा जल्दी वह जमीनसे खीच लिया जाता था। कैलीफोर्नियामें

सिचाअीके कामोंके लिअे जमीनमें से खीचे जानेवाले पानीसे कअी जगहों पर जमीनके भीतरके पानीकी मतह कअी सौ फुट नीचे चली गअी है और पपसे पानी खीचनेका खर्च बूतेसे वाहर होने लगा है, जिससे फलोंके वगीचे और खेत छोड देने पडे है।

(घ) अन्य प्राकृतिक साधनोका अपव्यय

पूजीवादी अुद्योगवाद कोयला, पैंट्रोल और सब प्रकारके खनिज पदार्थ अपार मात्रामें खर्च कर रहा है। ग्रेट ब्रिटेनकी बची हुअी कोयलेकी खाने अब अितनी ज्यादा गहरी, ढालू तथा तग है कि वहा कोयला निकालना दिनोदिन अधिक कठिन और खर्चीला होता जा रहा है। अब अुसे अीधनके लिअे मुख्यत मध्य पूर्वके तेल पर निर्भर रहना पडता है। अुसे अपने अुद्योगोंके लिअे लगभग सारा ही कच्चा माल वाहरसे मगाना पडता है।

सयुक्त राज्य अमरीकाने १९०० की अपेक्षा १९५० में जलनेवाला कोयला अढाअी गुना, तावा तीन गुना, जस्ता चार गुना और विना साफ किया हुआ तेल (क्रूड ऑअिल) तीस गुना अधिक जमीनसे निकाला। राष्ट्रपति ट्रूमैन द्वारा नियुक्त सामग्री-नीति-आयोगकी १९५२ की रिपोर्टके अनुसार अधिकाश धातुओकी और खनिज अीधनोकी जो मात्रा पहले विश्वयुद्धके वाद सयुक्त राज्य अमरीकाने काममें ली है, वह १९१४ से पहलेके समस्त अितिहासमें सारे ससार द्वारा काममें ली हुअी सपूर्ण मात्रासे अधिक है। जहा अमरीकाकी जनसख्या पिछले ५० वर्पमें दुगुनी हुअी, वहा सारे खनिज पदार्थोंका अुत्पादन आठ गुना वढा, विद्युत्-शक्तिका अुपयोग ग्यारह गुना वढा, और अुसी कालमें कागज और पुट्ठेका खर्च चौदह गुना वढा। १९०० में सयुक्त राज्य अमरीकाने (अन्नके सिवा) अपने खर्चसे लगभग १५ प्रतिशत अधिक अुत्पादन किया, १९५० में वह अपने अुत्पादनसे १० प्रतिशत अधिक सामग्री खर्च कर रहा था।

सयुक्त राज्य अमरीकाके पास ससारकी गैर-साम्यवादी जनसख्याका १० प्रतिशतसे कम हिस्सा है और गैर-साम्यवादी क्षेत्रफलका केवल ८

प्रतिशत हिस्सा है, परतु १९५० मे वह पेट्रोल, रबर, कच्चा लोहा, मेंगेनीज और जस्ता जैसे बुनियादी कच्चे मालकी समूचे ससारकी अुत्पन्न मात्राका आधेसे ज्यादा खर्च करता था। यह आधारभूत अनुमान लगाया गया है कि १९५० और १९७५ के बीच सयुक्त राज्य अमरीकाकी कच्चे मालकी माग सम्भवत अिस प्रकार बढ जायगी कुल मिलाकर खनिज पदार्थोंकी जरूरत, जिनमें धातुअें, अीधन और अन्य पदार्थ शामिल हैं, लगभग ९० प्रतिशत या करीब करीब दुगनी, खेतीकी सारी पैदावारकी लगभग ४० प्रतिशत, अुद्योगोके लिअे आवश्यक पानी लगभग १७० प्रतिशत। अिस अवधिमें सयुक्त राज्य अमरीकाकी जनसख्या जितनी बढनेकी आशा है अुससे ये वृद्धिया बहुत अधिक हैं।

१९३९ से सयुक्त राज्य अमरीकाने कच्चे मालके निर्यातकी अपेक्षा आयात अधिक किया है और यह घाटा बढता जा रहा है। १९५० में सयुक्त राज्य अमरीकाने जिन महत्त्वपूर्ण कच्चे पदार्थोंका आयात किया था कच्चा पेट्रोल, अुपयोगमें आने योग्य कच्चा लोहा, मैगनेशियम, टगस्टन, फ्लोअर स्पार, तावा, जस्ता, सीसा, बौक्साअिट, पारा, ग्रेफाअिट, अेन्टी-मनी, कोबाल्ट, मेंगेनीजकी कच्ची धातु, आस्बेस्टस, गिलट, टीन, क्रोमाअिट, तथा औद्योगिक अुपयोगके हीरे।

अिन आकडोंसे केवल दुनियाके सबसे ज्यादा अुद्योग-प्रधान राष्ट्रमें कच्चे मालकी अदम्य भूख और अुसके अविचारपूर्ण खर्च तथा पूजीवादकी अिस विशेष प्रवृत्तिका ही प्रमाण नही मिलता, अुनसे यह भी सिद्ध होता है कि पूजीवादमें मर्यादाका कोअी सिद्धान्त नही होता, कोअी आत्म-सयम नही होता। निरन्तर बढते रहनेवाले बाजारका सिद्धान्त पूजीवादका मूलभूत सिद्धान्त है। पूजीवादी अुद्योगवाद प्राकृतिक साधनोको अितनी तेजीसे खर्च कर रहा है कि न्यायपूर्वक यह कहा जा सकता है कि वह हमारी भावी सन्तानो, कमजोर राष्ट्रों और जातियोंकी सम्पत्ति पर मौज अुडा रहा है और अच्छे जीवनकी सामग्रीसे अुन्हे वचित कर रहा है।

सिद्धान्त रूपसे अैसा नही मालूम होता कि आत्म-सयमका यह अभाव पूजीवादका आवश्यक और अनिवार्य तत्त्व है। परतु व्यवहारमें पूजीपतियो और अुद्योग-व्यवस्थापकोकी सत्ताकी भूख, सफलताके प्रचलित आर्थिक मापदण्ड, सब वर्गोके अधिकाश लोगोकी अत्यन्त आराम और सुविधा भोगनेकी अिच्छायें तथा शहरी जीवनके नीरस और यात्रिक क्रमसे बाहर निकलकर मनोरजन करनेकी आकाक्षा — ये सब बातें मनुष्य पर काबू कर लेती हैं। अिन हेतुओकी प्रधानता अखबारो, मासिक पत्रो, आकाशवाणी, टेलीवीजन, चलचित्रो, खेलकूद, शिक्षा, विधान-सभाओ और राजनीतिमें अितनी अधिक है कि लगभग प्रत्येक मनुष्य यह देखनेमें असफल रहता है कि अैसी सभ्यता किस दिशामें जा रही है और अपनी अिस पसदकी वह क्या कीमत चुका रही है। अमरीकाके रहन-सहनका अूचा स्तर अधिकतर बरबादीका ही अूचा स्तर है।

सभवत पूजीवादी अुद्योगवाद अपना विनाश स्वय कर रहा है। सत्तामें मनुष्यको भ्रष्ट करनेकी प्रवृत्ति होती है, लॉर्ड अेक्टनके अिस कथनका यह दूसरा अुदाहरण मालूम होता है। अिस अुदाहरणमें भ्रष्टता कल्पनाकी, दूरदर्शिताकी, निर्णयकी और आत्म-सयमकी मालूम होती है।

(ङ) स्वास्थ्यकी हानि

अिसकी अेक और कमजोरी सामने आ रही है।

यद्यपि हमारे पास अिसके निश्चित आकडे नही है कि अुद्योग-प्रधान समाजमें कम अुद्योगवाले या अुद्योग-रहित समाजकी तुलनामें तदुरुस्ती या बीमारी अधिक है या कम, फिर भी यह सभव है कि अुद्योग-प्रधान राष्ट्रोमें सक्रामक या छूतकी बीमारिया या पराश्रयी बीमारिया कम हो। पैदा होने पर शिशुओके जीवनकी आशा अधिक अुद्योग-प्रधान समाजोमें अल्प अुद्योग-प्रधान समाजोकी अपेक्षा अधिक होती है। परन्तु जिन्हे शरीरका क्षय करनेवाले रोग कहा जाता है — अुदाहरणार्थ, नासूर, हृदयरोग, रक्तचाप, बहुमूत्र और गुर्देकी बीमारी — वे अन्य स्थानोकी अपेक्षा अति अुद्योग-प्रधान राष्ट्रोमें अधिक होते हैं। सयुक्त

राज्य अमरीकामे पेटके फोडेकी वीमारी अन्य किसी राष्ट्रसे अधिक मात्रामे होती है।

अमरीकन मेडिकल अेसोसियेशनके मुखपत्रके अनुसार यदि १५ वर्ष और अुससे अूपरकी आयुवाले १,००० अमरीकियोके समूहकी पाडु-रोग, हृदयरोग, नासूर, मुटापा, क्षयरोग और कोअी २० अन्य शारीरिक दोपो और व्याधियोके लिअे जाच की जाय, तो ९७६ मनुष्योमें रोग या व्याधि पाअी जायगी। दूसरे महायुद्धके पहले और अुसके दौरानमें जिन १४,०००,००० के लगभग अमरीकी नौजवानोकी फौजी भरतीके लिअे परीक्षा की गअी थी, अुनमे से केवल २,०००,००० ही पूरी तरह योग्य निकले। प्रथम महायुद्धमें जो अमरीकी नौजवान सेनामे भरती किये गये थे अुनमें से १५ प्रतिशतसे कुछ कम शारीरिक परीक्षामें अयोग्य माने जाकर अस्वीकार कर दिये गये थे, दूसरे महायुद्धमें ४१ प्रतिशतसे कुछ अधिक नौजवानोको नही लिया गया था। यह परिणाम जाचके वाद युद्धकालीन स्वास्थ्य अेव शिक्षा-सवधी अेक अमरीकी ससदीय अुपसमितिने निकाला था। सयुक्त राज्योमें मधुमेहके रोगियोका अनुपात जन्मसख्याके अनुपातमे अधिक है। ७० लाखसे अधिक अमरीकी सधि-प्रदाहके शिकार है। तथाकथित 'स्वस्थ' अमरीकी पुरुषोमें से १० प्रतिशतके पेटमें फोडा होता है। हर छहमें मे अेक अमरीकी नपुमक होता है। जो देश सामान्यत भौतिक मापदण्डमे दुनियाका मवसे वलगाली, 'प्रगतिशील' और खुशहाल देश माना जाता है, अुसका यह कोअी मुन्दर चित्र नही है।

अगर आपको यह आश्चर्य हो रहा हो कि वुरे स्वास्थ्यका दोप पूजीवादी अुद्योगवादके मत्थे कैसे और क्यो मढा जा मकता है, तो अिसका अेक अुत्तर यह है कि धरतीका कटना और अुमका कम घटना तथा मिट्टीके क्षारोका कम होना, जिसकी चर्चा पहले की जा चुकी है, अैमे खाद्यान्न अुत्पन्न करता है जिनमें प्रोटीन तत्त्व, क्षार और जीवन-तत्त्व (विटामिन) कम होते है। अुद्योगवादमे भूमिके तत्त्वोका नाश हुआ है और अिसलिअे वह अेक हद तक अुन लोगोकी स्वास्थ्यहानिके लिअे जिम्मेदार है, जिन्हे

अैसी जमीनसे अुत्पन्न हुअी कम पोषणवाली खुराक काममें लेनी पडती है।

अुदाहरणके लिअे, प्राध्यापक विलियम आल्व्रेगने, जो मिसूरी विश्व-विद्यालयमे कृषि-महाविद्यालयके भूमि-विभागके अध्यक्ष है, दूसरे महायुद्धमें अमरीकी सेनाके दन्तरोगोंके आकडोका विश्लेषण किया है। अिस सेनामें कअी लाख नौजवान थे। अिसलिअे यह सामग्री अितनी वडी है कि अुससे निर्णयके लिअे ठोस आधार मिलता है। कमसे कम खोखले दातोवाले लोग कॉलोराडो और विओमिंग जैसे अूचे, सूखे पश्चिमी राज्योंसे आये थे, जहाकी धरतीमें क्षार खूब है और जिसके क्षार भारी वर्षासे वहे नही है या दीर्घकालीन अथवा विस्तृत खेतीके कारण नष्ट नही हो गये है। काफी वडी सख्यामें खोखले दात रखनेवाले आदमी अुन राज्योंसे आये थे, जिनमें वर्षा अधिक होती है और जहा जमीनकी खेती व्यापक रूपमें और दीर्घकालसे होती रही है। सबसे ज्यादा खोखले दात और दन्तरोग अुन जवानोमें पाये गये, जो दक्षिण-पूर्वी राज्योसे आये थे, जहा धरतीका कटाव सबसे अधिक है, वर्षा भारी होती है, क्षार पानीमें वह जाते है और खेती —ज्यादातर कपास और तम्बाकूकी —अुसी समयसे होती रही है, जबसे गोरे लोग पहले-पहल अिस देशमें आकर बसे थे।

अुद्योगवाद बीमारियोंके लिअे क्यो जिम्मेदार है, अिसका दूसरा कारण यह है कि अुद्योगसे पैदा होनेवाला शहरीकरण अन्नके अुत्पादकोंको अुसके अुपभोक्ताओसे अलग कर देता है। रहन-सहनके शहरी ढगके साथ विज्ञापनवाजी और यत्रीकरणका परिणाम यह होता है कि अधिकाश गृहस्वामिनियोमें अपना आटा आप पीस लेनेकी अिच्छा या शक्ति नही रहती। वे अुसे बनियेकी दुकानसे खरीद लेती है। शायद ज्यादातर गृहिणिया —पश्चिममें तो अवश्य ही —रोटीके कारखानोसे डबल रोटी खरीद लेती है। अधिक रुपया बटोरनेके लिअे चक्कीवाले गेहूका सारा चोकर पीसते समय छानकर निकाल देते है, जिसमें फॉस्फोरस जैसे खनिज तत्त्व, जो मानव-स्वास्थ्यके लिअे आवश्यक है, अधिकाश

प्रोटीन तथा विटामिन 'बी' जैसे पोषक तत्त्व होते है। यह सत्त्वहीन आटा पूर्ण गेहूके मोटे आटेकी तरह जल्दी खट्टा नही होता और न कृमि या कीटाणुओको ही आकर्षित करता है। ये छोटे जीव-जन्तु अितने समझदार है कि वे भी अैसे नि सत्त्व आटेको खानेकी कोशिश नही करते। अिस तरहका नि सत्त्व आटा दूर दूर तक भेजा जा सकता है और दुकानदारके यहा महीनो रखा रह सकता है, और फिर भी अुन मानव-प्राणियोंके हाथो बेचनेके काबिल रह सकता है, जिनमे कीटाणुओ जितनी भी बुद्धिमानी नही होती। अिसके सिवा, अैसे आटेकी रोटी खानेवाले बेवकूफ मानव यह समझते है कि मैंदेकी रोटी हाथचक्कीसे रोज घरमें पीसे हुअे साधारण भूरे आटेकी रोटीसे ज्यादा शानदार चीज है। अिस प्रकार वे अपने पेट और अहकार दोनोको मूर्खताके भोजनसे तृप्त करते है। अितना ही नही, चक्कीवाले आटेको रासायनिक पदार्थोंसे साफ करके ज्यादा सफेद बनाते है और रोटीके कारखाने रोटीको हलकी और गीली रखनेके लिअे आटेमें दूसरे रासायनिक पदार्थ मिलाते है। अैसी नि सत्त्व रोटी, जिसमें हानिकारक रासायनिक पदार्थ मिले होते हैं, पश्चिममें लोगोका स्वास्थ्य बिगाडनेवाले कारणोमें से अेक है। यही बात मिलमें कूटे और पालिश किये हुअे चावल और सफेद 'बढिया' शक्कर पर लागू होती है। अधिकाश लोग अब यह जानते हैं कि मुख्यत पालिश किये हुअे चावल खानेसे बेरीबेरीका रोग हो जाता है। प्राकृतिक विटा-मिन और क्षार निकाल लेनेके बाद कृत्रिम विटामिन मिलानेसे पोषक तत्त्वोकी कमी पूरी नही होती। पश्चिममें शहरी लोग डिब्बोमें बन्द खुराक बडी मात्रामें खाते है, मगर अुसमें विटामिन और मानव-स्वास्थ्यके लिअे आवश्यक अन्य तत्त्व बहुत कम होते है। पूजीवाद बडे बडे शहर खडे करता है और शहरवासियोका भोजन ज्यादातर दूर दूरसे आता है और वह बासी तथा सत्त्वहीन होता है। हालके वर्षोमें टीनके डिब्बो, बोतलो या कागजके डिब्बोमें बन्द खुराकमें खाद्योंकी रक्षाके लिअे कअी हानिकारक रासायनिक पदार्थ मिला दिये जाते हैं। शाक-

भाजी और फलो पर सीसा, गवक, सखिया अथवा डी० डी० टी० जैसे कृमि-नाशक द्रव्य छिडके जाते है, जो मानव-प्राणियोंके लिअे अुतने ही जहरीले होते हैं जितने कीटाणुओंके लिअे। अुनमें से अधिकाश धोकर साफ नही किये जा सकते और कुछ तो पौधोके तन्तुओमें गहरे पैठ जाते हैं। रासायनिक पद्धतिसे खाद्य-पदार्थ बनानेवाले अुद्योगोंने अुपभोक्ताओंकी रक्षाके लिअे बनाये गये कानूनोको दो अर्थवाली भाषामें प्रस्तुत करवा कर अथवा विधान-सभाओको यह समझाकर कि कानूनका अमल करानेवाले शासकोको पर्याप्त धनसे वचित रखा जाय, अुन कानूनोंको पगु बना दिया है। रासायनिक पद्धतिसे तैयार किये जानेवाले अैसे खाद्योमे होनेवाली हानिके काफी प्रमाण मिलते हैं। घटिया खुराकके अलावा स्पर्धा, कारखानेके कामके अस्वाभाविक दबाव, यान्त्रिक जीवनकी गति, धुअेंसे भरी हवा, रहनेके तग और घिचपिच मकान, स्वास्थ्यको हानि पहुचानेवाली अुत्तेजनाअें और शहरी जिन्दगीकी निराशाअें सब मानसिक तनाव पैदा करते हैं।

यद्यपि सयुक्त राज्य अमरीकामें अस्पतालोके आधे बिस्तर मानसिक बीमारियोंसे पीडित रोगियोके होते है, फिर भी अभी तक अिस बातका कोअी स्पष्ट प्रमाण नही मिला है कि किसी समाजमें मानसिक रोगोंकी मात्रा अुद्योगीकरणके कारण बढती है। बहुत सभव है कि अुद्योगीकरणसे अिन रोगोकी वृद्धि होती हो, परन्तु अभी तक यह साफ तौर पर साबित नही हुआ है।

(च) शिक्षाकी हानि

जगलोके विनाशकी ही तरह पूजीवादी अुद्योगवादमें जन्मजात अैसा कोअी दोष नही है जिसके कारण शिक्षाकी हानि हो। परन्तु वस्तुस्थिति यह है कि सबसे अधिक अुद्योग-प्रधान देशोमें से दो देशोंमें, अर्थात् सयुक्त राज्य अमरीका और ग्रेट ब्रिटेनमें, स्कूलो और कॉलेजोकी अिमारतोकी और प्राथमिक शालाओ, हाअीस्कूलो और कॉलेजोके लिअे शिक्षकोकी बडी कमी है। औद्योगिक कर्मचारियोसे शिक्षकोका सामाजिक दर्जा और वेतन बहुत नीचा है, और सयुक्त राज्य अमरीकामें तो वह सचमुच अेक अच्छे

वढओी, नलसाज (प्लम्बर) या कुशल यत्रकारसे भी अकसर नीचा होता है। सयुक्त राज्य अमरीकामें कअी हजार शिक्षक हर साल शिक्षाका धधा छोडकर अैसे दूसरे धधोंमें जा रहे है, जिनमें सभ्य जीवनके लिअे आवश्यक पर्याप्त जीविका मिल सके। अमरीकामे आबादीके वढनेके कारण शिक्षाके क्षेत्रमे ये कठिनाअिया लगातार अधिकाधिक भारी होती जायगी।

मुझे पता नही कि पश्चिम जर्मनी, स्वीडन और यूरोपके दूसरे अुद्योग-प्रधान देशोंका भी यही हाल है या नहीं। अिसका कारण सभवत लडाअीकी तैयारियो पर होनेवाला बहुत भारी सरकारी खर्च हो। फिर भी सोवियट सघमें, जहा फौजी खर्च बहुत भारी है, शिक्षा पर, खास कर विज्ञान और शिल्प-विज्ञानकी शिक्षा पर, अूपरसे नीचे तक ज्यादा ध्यान दिया जाता है तथा शिक्षकोंको वेतन और सामाजिक प्रतिष्ठा भी ज्यादा अच्छी दी जाती है। सोवियट रूस अमरीका और ग्रेट ब्रिटेन दोनोंसे कही अधिक नौजवान वैज्ञानिको और यत्र-निष्णातोंको शिक्षा दे रहा है।

(छ) अुपभोक्ताओंको भ्रष्ट किया जाता है

पूजीवादी अुद्योगवादमें मशीनो पर अितना अधिक रुपया लगा दिया गया है कि सभव हो तो वे अैसी व्यवस्था करना चाहेंगे जिसमें लोग मशीनोंसे तैयार हुआ माल खरीदते ही रहे। ज्यो ज्यो आदमीकी सहायताके विना ही अपना काम करनेवाली मशीनोंकी सख्या वढेगी, त्यो त्यो अुपभोक्ताओ पर यह दबाव वढेगा। अखबारो, मासिक पत्रों, रास्तेके किनारे लगी तख्तियो, आकाशवाणी, टेलिवीजनो और चलचित्रोंमें विज्ञापनों और विक्रीकी चर्चाओंकी लोगो पर वर्षा की जाती है। किस्तोंके आधार पर भारी मात्रामे खरीदारी होती है, थोडी थोडी अदायगी हर महीने की जाती है और अिस प्रकार अुपभोक्ताओंकी भावी आय गिरवी रख ली जाती है। कभी कभी माल जान-बूझकर घटिया वनाया जाता है, ताकि वह जल्दी घिस जाय और लोगोंको मजबूर होकर फिरसे खरीदना पडे। अिस प्रकार अधिकाधिक महगी और अनेक चीजोंके मालिक बनकर और

अुनका प्रदर्शन करके अपनी सामाजिक प्रतिष्ठा बढानेकी मूर्खतापूर्ण अिच्छा और झूठा दिखावा करनेकी वृति प्रजामें बढती है। अिस तरह अुपभोक्ताओको भ्रष्ट किया जाता है।

(ज) नीरस जीवन

अुद्योगवादसे लाखो मजदूरोको केवल नीरस और निस्तेज जीवन मिलता है। वे परम्परागत जीवन-क्रमकी शान्ति, सुरक्षा और सुदरतासे वचित हो गये हैं। अुनके जीवन मशीनोमे और मशीनो द्वारा विशाल पैमाने पर तैयार होनेवाले मालसे यात्रिक बनते हैं और अेक ही साचेमें ढलते जाते है। नगरवासी होनेके कारण अुनके जीवन अितने कृत्रिम होते है कि अुनमें वास्तविकता या सौन्दर्य बहुत ही कम हो जाता है। वे जीवनके सच्चे मूल्योसे और अेक-दूसरेसे अलग हो जाते हैं। अुन्हे अपना जीवन तुच्छ प्रतीत होता है, अुनका जीवन नीरस और दुखी होता है। अिस नीरसतासे बचनेके लिअे अनेक लोग शराब, दूसरी नशीली चीजो या जुअेका आश्रय लेते है। १९५१ में १००,००० की आबादी पर आत्महत्याओके सबसे अूचे आकडोवाले पाच देश थे — डेन्मार्क, स्विट्ज़रलैण्ड, फिनलैण्ड, स्वीडन और सयुक्त राज्य अमरीका। अिनमें से तीन बहुत ज्यादा विकसित अुद्योगोवाले देश है। अिग्लैण्डमें घुडदौड, फुटबॉल और क्रिकेटके मैचो पर जबरदस्त जुआ खेला जाता है। और किसी भी देशके बनिस्बत अमरीकामें अेक लाखकी आबादी पर सबसे अधिक शराब पीनेवाले हैं। मेरे खयालसे सयुक्त राज्योमें नीरसताका अेक चिह्न यह था कि प्रारभिक अनिच्छा दूर हो जानेके बाद सभी वर्गके लोग दोनो महायुद्धोमे अुत्साहके साथ शामिल हो गये।

(झ) अतिशीघ्र होनेवाले परिवर्तन

अुद्योग-प्रधान समाजमें समाज-व्यवस्था परम्परागत या स्थिर नहीं रह गअी है। अिसके बजाय अुसका आधार परिवर्तनके साथ शीघ्र ही मेल बैठानेकी क्षमता पर रहता है। सामाजिक प्रक्रियाओमें बाह्य परिवर्तन मुख्यत यातायात तथा सपर्कके साधनोकी गतिमें हुअे परिवर्तनो

और शिल्प-विज्ञान सम्बन्धी दूसरे परिवर्तनोंके फलस्वरूप होते हैं। अवश्य ही अंतिम कारण तो विचारों और ज्ञानमें होनेवाला परिवर्तन ही है। परन्तु जब तक ये परिवर्तन शिल्प-विज्ञान द्वारा मूर्त रूप नहीं ग्रहण करते तब तक अुनसे समाज नहीं बदलता। यातायात और सम्पर्कके साधनोंमें होनेवाले अिन परिवर्तनोंकी गति लगातार तीव्र होती जा रही है और सारी सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक प्रक्रियाअें भी जल्दी जल्दी बदल रही हैं।

और अब तो बिजलीकी अैसी मशीनोंका भी विकास हो गया है, जिनमें अत्यंत पेचीदा गणितकी समस्याअें जल्दीसे जल्दी हल कर देनेकी तथा अमुक प्रकारके निर्णय देने और नियंत्रण करनेकी भी क्षमता होती है। अिन्होंने न केवल अनेक शरीर-श्रम करनेवाले मजदूरोंकी, बल्कि कलमके मजदूरों और 'सफेदपोश' मजदूरोंकी भी जगह ले ली है और कअी मिलों, फेक्टरियों, तेल साफ करनेवाले कारखानों और रासायनिक कारखानोंको लगभग पूरी तरह स्वयंचालित बना दिया है। मनुष्यकी सहायताके बिना केवल मशीनोंसे सारा काम करनेकी अिस प्रणालीमें अिस बातकी जरूरत होती है कि जो भी व्यवसाय अिस प्रणालीका अुपयोग करे अुसकी प्रक्रियाओंका पूर्ण पृथक्करण और संयोजन किया जाय, जिसके लिअे अेक अैसी मंडीकी भी आवश्यकता होती है, जिसमें अुतार-चढ़ाव बहुत कम हो और जो सतत् बढ़ती ही रहे। अिसका सामाजिक परिणाम कदाचित् स्थायी बेरोजगारीके रूपमें अितना नहीं आयेगा, जितना अिन मशीनोंको चलानेके लिअे अुच्च शिक्षित और कुशल कर्मचारियोंकी जबरदस्त मांगके रूपमें आयेगा। अिससे संयुक्त राज्य अमरीकामें शिक्षाके क्षेत्रमें संकट बढ़ जायगा। परन्तु अैसी स्वयंचालित मशीनोंके अुपयोगसे बेशक कअी अन्य महत्त्वपूर्ण तथा शीघ्रगामी परिवर्तन होंगे। यह पद्धति अेक दूसरी औद्योगिक क्रान्तिका रूप भी ले सकती है।

आधुनिक अुद्योग-प्रधान राष्ट्रोंमें सामाजिक, आर्थिक और राजनीतिक परिवर्तनोंकी गतिसे कुछ अत्यन्त गंभीर समस्याअें और शंकाअें पैदा होती

है। जैसा सर ज्यॉफ्रे विकर्स (वी० सी०) ने अेक ब्रिटिश रेडियो-भाषणमें कहा है

"हम यह बहस करते रह सकते हैं कि यह या वह परिवर्तन अच्छा है या बुरा। हम क्वचित् ही यह देख पाते हैं कि परिवर्तनकी गति स्वयं ही निर्णायक हो सकती है। मान लीजिये कि मानव-जातिमें परिवर्तनोंके अनुसार बदलनेकी, अुनके अनुकूल बननेकी असीम शक्ति है — यद्यपि हम यह मानते और प्रार्थना करते हैं कि अैसा नहीं है। परन्तु अुसमें अैसी शक्ति हो तो भी अुपस्थित परिस्थितियोंके साथ सुमेल साधनेकी अुनकी शक्ति अेक पीढ़ी दूसरी पीढ़ीका स्थान जिस गतिसे ले अुसके अनुरूप होनी चाहिये। हममें से प्रत्येक जो कुछ सीख सकता है वह सीमित है, परन्तु प्रत्येक पीढ़ी अेक नअी जानकारी और अनुभवकी सामग्री लेकर शुरू होती है। सामाजिक और प्राणिसृष्टि सम्बन्धी परिवर्तनोंका क्रम पीढ़ियोंकी संख्याके अनुसार होता है, न कि केवल वर्षोंकी संख्याके अनुसार। जल्दी जल्दी होनेवाले परिवर्तनोंके लिअे जल्दी जल्दी बदलनेवाली पीढ़ियां जरूरी होती हैं। परन्तु पीढ़ियां अधिक जल्दी नहीं बदल रही हैं। यद्यपि अन्य सब परिवर्तनोंकी गति बढ़ती जा रही है, फिर भी मानव-जीवन अधिक लम्बा होता जा रहा है और प्रत्येक पीढ़ीका प्रभाव पहलेसे अधिक काल तक महसूस किया जाता है। जब यह स्थिति है तब अेक पीढ़ीकी परिवर्तनकी क्षमताकी सीमा अवश्य होगी और अुसका अुल्लंघन निर्भय होकर नहीं किया जा सकता।

"अुदाहरणार्थ, मान लीजिये कि वस्तुओंका परिवर्तन अितनी तेजीसे होने लगे कि जो कुछ प्रत्येक पीढ़ी तीस वर्षकी अुम्रमें सीखे वह बाकीके तीस या चालीस वर्षमें अुसकी सन्तानोंका या स्वयं अुस पीढ़ीका ही मार्गदर्शन करनेमें असमर्थ हो। यह स्थिति आत्म-पराजयकी स्थिति होगी, हम अेक अैसी दुनियाका सर्जन करेंगे

जिसमें हमें अपने मार्गका कोओी चिह्न दिखाओी नही देगा। क्या यह दूरकी सभावना है? काश, मुझे यह विश्वास होता कि आज हमारी अैसी स्थिति नही है। हम अेक अैसी आर्थिक प्रणालीमें फसे हुअे है, जिसमे अुत्तरोत्तर वढता हुआ माल, वढती हुओी जरूरतें और वढती हुओी जनसख्या अेक-दूसरेको निरन्तर अुत्तेजित करते है। मानव-जातिकी आर्थिक समस्या यह नही है कि हम सम्पन्न वने रह सकते है या नही, परन्तु यह है कि हम मनुष्य और प्रकृतिके आपसी सवधोको अितना स्थायी वना सकते है या नही, जिससे मानव-जीवनका कोओी स्वीकार करने योग्य आधार मिल जाय।

"हम अिस समस्याका सामना अेक वुनियादी मुश्किलके साथ कर रहे है। हम अस्पष्ट रूपमे यह महसूस करते है कि हमें जिस सुख या कल्याणकी अिच्छा है, अुसकी कल्पना अुस समृद्धिसे अधिक व्यापक है जिसके पीछे हम पडे हुअे है। हमें धुवला-सा यह दिखाओी पडता है कि हमारे सुख या कल्याणके लिअे समृद्धिके अलावा कुछ और सयोग भी आवश्यक है — अैसे सयोग जो हमारी समृद्ध होनेकी शक्तिका निर्माण भी कर सकते है और नाश भी। परन्तु अभी तक हम अिन सयोगोको अितना स्पष्ट नही देख पा रहे है कि हमारे हाथमें सीमित मात्रामें जो नियत्रण-शक्ति है, अुसकी मर्यादामें रह कर भी समृद्धिको हम अुनका सेवक वना सके।"*

(ञ) समाजकी अेकता और सगठन पर कुठाराघात

अुद्योगवाद और शहरीकरण पारिवारिक जीवनको वहुत अधिक कमजोर कर रहे है और अिसके परिणामस्वरूप सदाचार और समाजकी अेकताको चिन्ताकी हद तक कमजोर वना रहे है। जैसा अेल्टन मेयोने वताया है, "हमारी सभ्यताका सिद्धान्त अिस धारणाको लेकर चलता है कि यदि

* 'दि लिसनर', लदन, २९ सितम्वर, १९५५।

शिल्प-विज्ञान सम्वन्धी अुन्नति तथा भौतिक अुन्नति कायम रखी जाय, तो किसी न किसी तरह मानव-सहयोग अनिवार्य होगा।" परन्तु "किसी औद्योगिक समाजमें सहयोगको भाग्यके भरोसे नहीं छोडा जा सकता।" अुद्योग-सम्वन्धी प्रक्रियाओंमें सतत और शीघ्रतासे होनेवाले परिवर्तनोंने मजदूरोंको अुन दीर्घकालीन सतत सक्रिय सम्बधोंसे वंचित कर दिया है, जिनके द्वारा परिणामकारी सम्पर्क और सहयोग प्राप्त होते थे।

"लगभग दो सदियोंसे आधुनिक सभ्यताने मानवकी सहकारी शक्तियोंके विस्तार और विकासके लिअे कुछ नही किया है और सच तो यह है कि अुसने भौतिक विकासके शास्त्रोंके पवित्र नाम पर अनजानमें सामूहिक कार्य और सामाजिक दक्षताके विकासको हतोत्साह करनेका काम किया है।" सव लोग सक्रिय स्वयप्रेरित सहयोगके साथ दुनियाका काम करे, यह सभ्य समाज-व्यवस्था और प्रवृत्तिके लिअे अत्यत आवश्यक है। "सामाजिक जीवन कमसे कम अेक दृष्टिसे तो प्राणी-जीवनसे मिलता-जुलता है, जब सहज प्रक्रिया वन्द हो जाती है तब अस्वास्थ्यकर वृद्धि—सडाव—शुरू होती है।" "हम शिल्प-विज्ञानकी दृष्टिसे आज जितने दक्ष है अुतना अितिहासका कोअी और युग नही रहा, और साथ ही हममें वडीसे वडी सामाजिक अदक्षता भी है।"* हम मजबूरीसे औसाका यह कथन याद करते है, "अुनके फलोसे तुम अुन्हे जान लोगे।"

---

* अेल्टन मेयोकी पुस्तकमें से लिये गये ये अुद्धरण केवल अुन्हीके मत नही है, यद्यपि वे वजनदार और अधिकारपूर्ण है। लगभग वीस वर्ष तक वे हार्वर्ड विज़िनेस स्कूलके औद्योगिक सशोधन-विभागमें मुख्य प्राध्यापक थे। यह पुस्तक (दि सोशल प्रॉब्लेम्स ऑफ अेन अिडस्ट्रियल सिविलिज़ेशन) अेक पचवर्षीय प्रायोगिक सशोधन पर आधारित है, जो वेस्टर्न अिलेक्ट्रिक कपनीमें और अुसीके द्वारा किया गया था। यह कपनी अमरीकाकी विशाल टेलीफोन प्रणालीमें काम आनेवाले यत्र वनाती है। साथ ही अिस पुस्तकमें मानव-वशशास्त्र और समाज-शास्त्रके क्षेत्रोंमें जो अध्ययन और विचार हुआ है, अुसका भी अुपयोग किया गया है।

(ट) प्रकृति पर आक्रमण

पूजीवादी अुद्योगवादकी अेक धारणा यह है कि प्रकृति अेक बाधा है जिसे जीतना है और कच्चे मालका अनन्त स्रोत है जिसका मनुष्य अपनी अिच्छाके अनुसार अुपयोग या अपव्यय कर सकता है। अुसकी यह धारणा भी है कि मनुष्य 'प्रकृतिका स्वामी' है। अिस धारणाके दोनो पहलू अत्यन्त भ्रमपूर्ण है। मनुष्य प्रकृतिकी सतान और अुसका अग है, अुनका स्वामी नही। वह अुसके खजानेको लूटकर बरबाद कर सकता है और यह काम अुसने तेज गतिसे किया है, परन्तु प्रकृति अुससे अधिक बलवती है और वह मनुष्यसे अिसकी कीमत लेकर रहेगी। यह कीमत भारी और कटु होगी। पूजीवादकी यह धारणा मनुष्य और प्रकृतिके सम्बन्धोंके बारेमें अुसकी भयकर भूल है। मनुष्य अधिकसे अधिक स्थायी रूपमें प्रकृतिका अेक विनीत, भक्तिशील और अधीन साझेदार हो सकता है। जॉन स्टीवार्ट कोलिसको फिर अुद्धृत करे तो "अब हम अैसी स्थितिमें आ पहुचे है जब या तो हमें प्रकृतिमें मनुष्यके स्थानकी अपनी कल्पना बदल लेनी होगी, या हमें अैसे परिणाम भुगतने होंगे जिनका हमें अपनी विजयोकी प्रक्रियामें कभी ध्यान भी नही आया होगा। अन्तमें जीत प्रकृतिकी ही होगी।"* और चूकि सारी प्रक्रियायें, जिनमें प्राकृतिक साधनोंका विनाश भी शामिल है, सतत तीव्र गतिसे होती जा रही है, अिसलिअे पूजीवादी अुद्योगवादके पास अितना समय ही नही रह गया है, जिसमें वह प्रकृतिके प्रति अपने दृष्टिकोणमें आवश्यक बडा परिवर्तन कर सके।

(ठ) अुसके अपने ही अेक सिद्धान्तका भग

पूजीवादके दोषोका यह अग पहलेवाले कुछ अगोका पुनःकथन या सार है, जिससे अुनका सिद्धान्त और अर्थ समझमें आ जाय तथा अुनकी विनाशक असगतता प्रगट हो जाय।

पूजीवादको यह गर्व है कि अुसने हिसाब-किताब सम्बधी कुशल पद्धतियोका विकास किया है। हिसाब-किताबकी विद्यासे किसी भी

* 'दि ट्रायम्फ ऑफ दि ट्री'।

व्यवसाय पर निश्चित नियंत्रण रहता है। ध्यानपूर्वक और पूरा पूरा हिसाब रखे बिना कोअी व्यवसाय नहीं किया जा सकता। बैंक जो रुपया अुधार देते हैं और सरकार जो व्यवसायोंके परवाने देती है और अुन पर कर लगाती है — दोनों पूरा हिसाब रखनेका आग्रह रखते हैं।

अच्छे हिसाब-किताब और वित्तीय बुद्धिमत्ताके सिद्धान्तोंमें से अेक यह है कि किसी व्यक्ति या संगठनको अपनी पूंजीरूपी साधन-सम्पत्ति दैनिक जीवन और कार्यों पर खर्च नहीं करनी चाहिये। चालू खर्च — व्यवस्था खर्च — पूंजीकी आयसे लिया जा सकता है, न कि स्वयं पूंजीसे। अगर अिस नियमका भंग होता है तो आगे-पीछे वह व्यक्ति या व्यवसाय दिवालिया हो जाता है।

पूंजीवादी अुद्योगवाद अिस नियमका भंग कर रहा है, और दिनों-दिन कोयला, तेल, खनिज पदार्थ और दूसरे प्राकृतिक साधनोंकी पूंजी खर्च कर रहा है, साथ ही अपने लोगोंकी शिक्षा और अेकताको भी नष्ट कर रहा है। जिसे वह आमदनी कहता है अुसका खासा हिस्सा अमलमें घिसाअी और घाटा ही है। प्रकृतिके हिसाबकी हमेशा पूरी अुपेक्षा की जाती है और जब अुसका विचार किया भी जाता है तो अुसे गलत रूपमें पेश किया जाता है। यहां कोअी अमीर चाचा नहीं बैठा है जो अपने नौजवान फिजूलखर्च भतीजेके लिअे कोअी जायदाद छोड़ जायगा, जिसके बल पर वह मूर्खताका अपना व्यवहार चालू रख सकेगा।

(ड) सैनिकवाद

अपने प्रास्ताविकमें हमने सारे राष्ट्रोंके लिअे जो सात खतरे बताये थे, अुनमें हिंसाका भी अेक खतरा था। परन्तु पूंजीवादी अुद्योग-प्रधान देशोंमें हिंसाके साथ अेक और वस्तु भी जुड़ी रहती है। मेरा आशय भावी युद्धोंकी लगातार चलनेवाली तैयारियोंसे है। यह वस्तु आज पश्चिमी देशोंमें जैसे व्यापक बन गअी है अुसी तरह जब सारे समाजमें फैल जाती है तब वह सैनिकवादका रूप ले लेती है। और अिसके परिणाम खुली हिंसासे अधिक सतत होते हैं और कुछ भिन्न प्रकारके होते हैं।

ये तैयारिया रचनात्मक नही हैं, अुनका अुद्देश्य विनाश है। और आजके हाअिड्रोजन बमसे तो विनाश केवल हमारे शत्रुका ही नही होगा, बल्कि अपने राष्ट्रका, अपना और सारी मानव-जातिका होगा। अब तो अिसने सामूहिक पागलपनका रूप ले लिया है और अिसका नतीजा सामूहिक आत्मघात होगा।

सयुक्त राज्य अमरीकाके १९५७ के बजटमें सपूर्ण सरकारी आयका दो-तिहाअी भाग युद्धके खर्चके लिअे रखा गया है। पश्चिमके अधिकाश देश अपनी २५ से ६६ प्रतिशत आय अिसी तरह खर्च कर रहे हैं। सरकारें अपने प्रजाजनोको सभावित युद्धके खतरोंके बारेमें सतत डराती रहती हैं और कहती रहती हैं कि सैनिक तैयारियोसे ही राष्ट्रकी रक्षा हो सकती है। अिसके फलस्वरूप विधान-सभाओंमें जनताके प्रतिनिधि ये विशाल धनराशिया मजूर कर देते हैं। जो धातुअें अुत्पन्न की जाती हैं अुनका बडा भाग जल और स्थलसेनाके हथियारो और दूसरी सामग्री तैयार करनेके काम आता है। आजकल सयुक्त राज्य अमरीकाकी सारी अर्थ-व्यवस्था लडाअीकी तैयारियोंके अनुरूप की जाती है। अगर ये तैयारिया अचानक बन्द कर दी जाय तो वहा भयकर आर्थिक मदी आ जायगी।

यह सैनिकवाद राष्ट्र-जीवनके सभी पहलुओ पर हमला करता और अुन्हें नुकसान पहुचाता है। नौजवानोको अेक या दो सालकी सैनिक नौकरीके लिअे अैसे समय भरती किया जाता है, जब अुन्हें किसी काममें लग जाना चाहिये और अपनी शादी कर डालनी चाहिये। फौजी कवायदसे अुनका दिमाग जड हो जाता है। अुन्हें दूसरे राष्ट्रोसे अरुचि या द्वेष करना सिखाया जाता है, वे अपनी सूझ-बूझसे कार्य करनेकी शक्तिसे वचित किये जाते हैं, कहा जाता है कि वे स्वतत्र विचार न करें, बल्कि अधे बनकर आज्ञा-पालन करें। सैनिक जवानो और अनुभवी सेनाधिकारियोंको विशेष डॉक्टरी, आर्थिक और शिक्षा-सम्बन्धी सुविधाये दी जाती हैं, वे विशेषाधिकार भोगनेवाले वर्ग बन जाते हैं। समाज अुनके रचनात्मक कार्यसे वचित रहता है, वे समाज पर अेक बडा आर्थिक भार बन जाते

है। स्त्रियोंकी संगतिसे अैसी अुमरमें दूर रहनेके कारण वेश्यावृत्ति और गुप्त रोगोंकी वृद्धि होती है। स्कूल और कॉलेज दोनोंकी शिक्षाको सैनिकवादकी वृत्तिसे ओतप्रोत बना दिया जाता है। विज्ञानको सैनिकवादके लिअे ही सीमित कर दिया जाता है और अुसीके लिअे अुसका दुरुपयोग किया जाता है। सारा सामाजिक और राजनीतिक जीवन गुप्तता, टालमटूलकी वृत्ति और सन्देहसे भर जाता है। स्वतंत्रता और लोकतंत्रके ध्येयोंको गंभीर हानि पहुंचती है। सरकारकी विदेश-नीति पर युद्ध-सम्बन्धी विचार हावी हो जाते हैं। नेताओंकी निर्णय-शक्ति भ्रष्ट हो जाती है।

अितना ही सैनिकवाद अब साम्यवादी देशोंमें भी पाया जाता है, परन्तु अिसका प्रारंभ पूंजीवादी देशोंने किया। १९१८ में सोवियट शासनके शुरू होते ही ब्रिटिश और अमरीकी सेनाओंने रूस पर हमला कर दिया और नअी सरकारको कुचल देनेकी कोशिश की। अुस समय रूसी फौजोंने जर्मनीसे लड़ाअी बन्द कर दी थी और वे बिखर गअी थीं। रूसी सैनिक संघटनका विकास पूंजीवादी आक्रमणसे रक्षा करनेके हेतुसे आरम्भ हुआ था।

यह सब कितनी भयंकर मूर्खता है! शायद यह अुद्योगवादकी सबसे बड़ी मूर्खता है, जो पाश्चात्य औद्योगिक संस्कृतिके विनाशमें बहुत बड़ा योग दे रही है। मुझे यह बुद्धके अिस कथनका अेक प्रबल और तादृश अुदाहरण मालूम होता है कि "क्रोध हवामें थूकनेकी तरह है, वह सदा तुम पर ही आकर गिरता है।" डर, सन्देह, घमण्ड आदि सभी भेदवर्धक भावनाओंका यही हाल है। "जो तलवार अुठाता है वह तलवारसे ही नष्ट होगा।" संघर्षसे निपटनेका अेकमात्र सुरक्षित और व्यावहारिक अुपाय गांधीजीकी पद्धति ही है।

(ढ) सार

पूंजीवादी अुद्योगवादके अिन १३ हानिकारक परिणामोंको मैं अेक बार फिर गिना दूं: जंगलोंका विनाश, पानीका असामुन्य अुपयोग, स्त्री-

कटाव, दूसरे प्राकृतिक साधनोका अपव्यय, स्वास्थ्यकी हानि, शिक्षाकी हानि, अुपभोक्ताओका कुशिक्षण, शहरो और कारखानोंके जीवनकी नीरसता, अतिशीघ्र परिवर्तन, समाजकी अेकता पर कुठाराघात, प्रकृति पर आक्रमण, हिसाब-किताबके सिद्धान्तोका भग और सैनिकवाद। अिनमें से अेक भी वस्तु प्राचीन कालके स्वर्णयुगकी भावनापूर्ण आकाक्षाको नही बताती, ये सब आजके युगके वास्तविक और बहुत अशमे भौतिक खतरे है।

प्रतिस्पर्धा

प्रतिस्पर्धा पूजीवादके आवश्यक सिद्धान्तोमें से अेक है। पूजीवादकी वादकी मजिलोमें छोटी छोटी स्पर्धाशील अिकाअिया अेकत्र होकर अेकाधिकारयुक्त व्यवसाय-सघो, ट्रस्टो, कार्टेलो और मडलोका रूप ले लेती है। परन्तु अिन बडे सघोंके बीचकी प्रतिस्पर्धा पहलेकी छोटी छोटी अिकाअियो या व्यक्तियोंके बीचकी प्रतिस्पर्धासे कही अधिक भयकर रूप ले लेती है। युद्धोकी वृद्धिसे यह साफ हो जाता है।

दूसरे खतरे

अिस निबधके आरम्भमें बताये गये भारतके सात खतरोमें से पहला खतरा पूजीवादका पैदा किया हुआ है और दूसरे सब खतरे अुसके बढाये हुअे है — खास तौर पर अुसने दुनिया भरमें सैनिक हिंसाका खतरा बढाया है।

पूजीवाद द्वारा धर्मका नाश

पूजीवाद धर्मका मौखिक गुणगान करता है और अुसके कर्मकाड-रूपी शरीरकी रक्षा करता है — कुछ हद तक शायद जान-बूझ कर 'जैसे थे' की स्थितिको कायम रखनेके लिअे, परन्तु अनजानमें शायद अिसलिअे भी कि सारे युगोमें — पूजीवादके पहले भी — मुट्ठीभर शासकवर्ग पुराणपथी हो जाते है और बाहरी कर्मकाडके भक्त बन जाते है। परतु व्यवहारमें पूजीवाद तमाम धार्मिक सिद्धान्तोका भग करता है और सारी धार्मिक धारणाओका खडन करता है। पूजीवादके परिणामसे यह जाना

जा सकता है। सिद्धान्तमें और बहुत हद तक व्यवहारमें भी पूजीवाद अुतना ही भौतिकवादी है जितना भौतिकवादी होनेका साम्यवाद पर दोष लगाया जाता है। विचारोंकी ठंडी लडाअीमें पूजीवादी राष्ट्रोंके प्रयत्न अितने निष्फल साबित हो रहे हैं अिसका अेक कारण यह भी है। शिल्प-विज्ञान अथवा पूजीके आधार पर होनेवाले अुन्नतर अुत्पादनकी कार्य-क्षमतासे सदाचार या बुद्धिमत्ताका अुत्पन्न होना आवश्यक नहीं है। नाजियोंका अुदाहरण अिसका प्रमाण है।

अुत्तरोत्तर घटते अुत्पादनके नियमके अधीन

पूजीवादकी सफलताओंको अब घटते अुत्पादनके नियमका सामना करना पड रहा है। ये सफलतायें बडी हद तक अिस कारण मिली कि अमरीका, आस्ट्रेलिया और न्यूजीलैण्ड जैसे प्रदेशोंके द्वार नये अुपनिवेश बसाने और वहांकी साधन-सम्पत्तिके अुपयोगके लिअे खुले, यूरोप और ग्रेट ब्रिटेनने अेशिया और अफ्रीकाका शोषण किया और विज्ञान तथा शिल्प-विज्ञानकी अुन्नति हुअी। अब कोअी खाली अुपजाअू प्रदेश नहीं रह गया है। यूरोप और ग्रेट ब्रिटेनके बाहर अुद्योगवादका विकास हो जाने और युद्धोंके कारण राजनीतिक परिवर्तन होने तथा दरिद्रता फैलनेसे सब जगह बाजारोंका क्षेत्र संकुचित हो गया है। यूरोप और अिंग्लैंडके सिवा सब जगह धरती-कटावके कारण अन्न-अुत्पादनका आधार लगातार कम हो रहा है। सत्ता दिनोंदिन थोडेसे लोगोंके हाथोंमें केन्द्रित होती जा रही है, विभिन्न दलोंमें विरोध बढ रहा है, सत्ताका भ्रष्टाचार बढ रहा है, स्पर्धाकी हृदयहीनता बढ रही है, युद्ध बार बार होते हैं, अुनकी व्यापकता बढती है और वे अधिकाधिक विनाशकारी होते जाते हैं। शोषण सिर्फ लोगोंके ही विरुद्ध काम नहीं करता, परन्तु भूमि तथा जंगलोंके विरुद्ध और अिसलिअे अन्न तथा जलके साधनोंके विरुद्ध भी काम करता है। लगभग यह कहा जा सकता है कि अेशिया, अिंडोनेशिया, अेशिया माअिनर और यूरोपमें किसानोंके विद्रोह और अफ्रीकामें घिर रहे तूफानी बादल असलमें शोषित भूमि और अत्याचारसे पीडित प्रकृतिके विद्रोह हैं।

किसान तो केवल अुसे मूर्त रूप देनेवाले अुसके साधन है। पूजीवादी अुद्योगवाद लगभग २५० वर्ष तक फूला-फला है। सभ्यताओंके अितिहासमें यह काल छोटा ही माना जायगा।

आत्मघाती स्वरूप

पूजीवाद पैसे और सत्ताको अपना अीश्वर बना लेता है और फिर अुस अीश्वरको प्रसन्न करनेके लिअे लगभग सब कुछ कुर्बान कर देता है। अुसने सारी सस्कृतियो और धर्मोको गम्भीर हानि पहुचायी है और अब मेरे विचारसे वह अपना ही विनाश कर रहा है। अुसका आधार कअी सापेक्ष धारणायें हैं, जिनको तर्क तो नही परन्तु अितिहास झूठी साबित कर रहा है। अिन धारणाओंमें से कुछ ये है मानव-प्रगति भौतिक पदार्थ अेकत्र करनेमें ही है, स्पर्धा मानव-प्राणियोंके बीचका आवश्यक और सबसे मजबूत सम्बध है, बाजार चाहे जिस सीमा तक बढाये जा सकते है, अन्तमें पैसा ही सब मूल्योका अुचित माप है, और राजनीतिक तथा आर्थिक सत्ताका सचालन सर्वोच्च मानव-प्रवृत्ति है।

नही, अनियन्त्रित पूजीवाद पर अब और विश्वास नही किया जा सकता। वह अब असह्य हो गया है। अपनी आरम्भिक अवस्थामें शायद अुसने मानव-जातिके लिअे अनेक कीमती काम किये। जिस विज्ञान और शिल्प-विज्ञानका अुसने प्रयोग किया, वे मानव-जातिकी महान मूल्यवान और स्थायी सिद्धिया है। परन्तु अब हर जगह पूजीवाद पर अकुश लगाया जा रहा है। सिद्धान्तके रूपमे पूजीवाद आत्मघातक है। मैं मानता हू कि अुसमें गहरा सुधार नही हो सकता। अुसमें आत्म-सयम या आत्म-मर्यादाका कोअी सिद्धान्त नहीं है। अुसके सिद्धान्त और अुसकी बुनियादें ही गलत है। अिसका यह अर्थ नही कि अुसका समर्थन करनेवालोंको दुष्ट समझा जाय, वे केवल अदूरदर्शी है और गहरी गलतीमें है। पूजीवादके विरुद्ध घोर युद्ध करके शक्ति बरबाद करनेकी कोअी जरूरत नही, क्योंकि वह अपने ही जन्मजात दोषोंके कारण लगातार और अब तो सचमुच तेजीसे टूट रहा है। अुस पर क्रोध करना भी अेक मनोवैज्ञानिक,

नैतिक और राजनीतिक भूल होगी। अुसके बजाय हम अपनी शक्ति कोअी ज्यादा अच्छी चीज बनानेमें लगायें। सयुक्त राज्य अमरीकाकी विशाल भौतिक शक्ति अपने भीतर अत्यत गम्भीर भीतरी कमजोरियोको छिपाये हुअे है, ये कमजोरिया थोडे ही वर्षोमें प्रगट हो जायगी। अुसके पास आज भी प्रकृतिकी कुछ साधन-सम्पत्ति सुरक्षित है, वहाके लोगोका खयाल है कि वे अुसे बरबाद करते रह सकते है। हिन्दुस्तानके पास अैसे अपव्ययके लिअे कोअी साधन-सपत्ति नही है। कुल मिलाकर पूजीवादकी अच्छाअियोसे अुसकी बुराअिया कही अधिक है।

पूजीवादी अुद्योगवादकी प्रणाली पर अपना भविष्य छोड देना भारतको पुसा नही सकता। थोडी मात्रामें पूजीवादी अुद्योगवादको अपनानेमें समझदारी हो सकती है। पुस्तकके अतिम दो परिच्छेदोमे अिसे मर्यादित रखनेका तरीका सोचा जायगा।

३

साम्यवाद

अच्छा, अगर पूजीवादी अुद्योगवाद भारतके लिअे बेहद खतरनाक है, तो साम्यवाद कैसा रहेगा?

साम्यवाद कुछ लोगोको आकर्षक क्यो लगता है?

साम्यवादके बहुत आकर्षक लगनेके कअी कारण है

१ अुसमें पूजीवाद द्वारा पैदा की गअी बुराअियोकी स्पष्ट और प्रबल प्रतीति है और अुसके विरुद्ध साम्यवाद द्वारा दिया गया न्याय और निष्पक्षताका वचन है।

२ मध्यम श्रेणीके अेक कोमल स्वभाववाले नम्र मनुष्यमें अकसर यह भावना होती है कि अुसने अपनेसे दुर्बल और गरीब लोगोको हानि पहुचाकर आराम और विशेषाधिकार भोगनेका सामाजिक और व्यक्तिगत अपराध किया है।

३ अितिहासकी साम्यवादी व्याख्या अेक वैज्ञानिक निश्चितता तथा सत्य और न्यायकी भावना प्रदान करती है।

४ साम्यवादी सिद्धान्त कुल मिलाकर अूपरसे तो वास्तविकताको, मनुष्योको और ससारमे जो कुछ हो चुका है और वर्तमानमें हो रहा है अुसे समझनेकी प्रतीति पैदा करता है और भविष्यमें निश्चित रूपसे क्या होनेवाला है अिसकी भविष्य-वाणी करनेका सामर्थ्य देता है।*

५ किसानो और शहरी मजदूरोको साम्यवाद वलपूर्वक यह आश्वासन देता है कि प्राचीन अन्याय दूर किये जा सकते हैं। वह रहन-सहनके स्तरमें काफी वृद्धिका और अधिक न्यायका भी वचन देता है।

६ वेकारोको — चाहे वे शहरी मजदूर हो, किसान हो या पढे-लिखे लोग हो — साम्यवाद स्थायी रोजगारका आश्वासन देता है और अिस प्रकार फिरसे स्वाभिमान, मनुष्यके आदर और प्रतिष्ठाकी स्थापना करनेका वचन देता है। अिन सूक्ष्म और अप्रत्यक्ष वस्तुओकी भूख मनुष्यमें गहरी, तेज और स्थायी होती है, और खास तौर पर शिक्षित समुदायमें जो अितनी साम्यवादी लगन, तीव्रता, कटुता और दीर्घ-प्रयत्न दिखाअी देता है अुसका कारण यही भूख है।

७ सर्व प्रथम साम्यवाद-नियन्त्रित देश रूसने अुद्योगीकरणमें और अपनी जनतामें शिक्षाका व्यापक प्रचार करनेमें वडी तेज प्रगति की। अिसलिअे जिन देशोमें अिन वातोकी प्रगति नही हुअी है, परन्तु जो अिन्हे प्राप्त करनेकी तीव्र अभिलाषा रखते है, अुनके लिअे साम्यवाद अिनकी प्राप्तिका अुपाय हो सकता है।

* समझनेकी और दूरदर्शिताकी यह अिच्छा और अुसके गर्भमें निहित जीवनका नियत्रण करनेकी क्षमताकी आशा सभी लोगोकी अेक गहरी और अुचित भूख होती है। जो भी प्रणाली ये तत्त्व प्रस्तुत करती है अुसका आकर्षण वलवान होता है।

८ साम्यवादके साथ अनिष्टोंवाले भूतकालके खिलाफ विद्रोहका विचार जुडा हुआ है। अुसमें अेक नये साहसकी अुत्तेजना पूरी तरह मौजूद रहती है।

९ वह तीन विचार देता है, जो अितने अर्थपूर्ण हैं कि मनुष्य अुत्तेजित हो जाय (१) समाजका व्यक्तिसे अधिक महत्त्व है, (२) साधनसे साध्य अधिक महत्त्वपूर्ण है और (३) विचारोंकी अपेक्षा वातावरणका अधिक महत्त्व है।

१० साम्यवादी दलमें शरीक होनेसे मनुष्यके मनमें यह भावना पैदा होती है कि वह अेक अत्यंत महत्त्वपूर्ण ध्येयका अंग है, समाजमें और अेक महान अैतिहासिक प्रक्रियामें अुसका निश्चित और सार्थक हाथ है, तथा अुसे अपने मानव-बन्धुओंके साथ आध्यात्मिक अेकता साधनेका और अुसके अनुसार कार्य करनेका आनंद प्राप्त होता है। वह कठिन कार्य करनेका और साहस, दृढता और हौसला दिखानेका मौका देता है। अुससे सामान्य अनुशासनकी और व्यवस्था तथा स्वयंपूर्णताकी भावना प्राप्त होती है।

११ साम्यवादी दलमें सम्मिलित होनेसे अेक महान ध्येयके लिअे पूरी तरह समर्पित होनेका सन्तोष और सुख प्राप्त करनेका आश्वासन मिलता है और हमेशा अूपरी चुनाव करते रहनेके बोझसे मुक्ति मिल जाती है। अुसमें किनारेका सहारा छोडकर मझधारमें कूदनेकी बात है, जिसका अर्थ यह है कि मनुष्य 'स्वतंत्रताके भारसे मुक्त है'।

१२ संघटन-बद्ध धर्मकी असंगतियों और अुसके जैसे विधानोंसे, जो सत्यको स्पष्ट करनेके बजाय अुसे छिपानेका काम ही अधिक करते हैं, कअी लोग अितने अूब गये हैं कि वे अैसे शब्दों या वाक्योंका प्रयोग तक सहन नहीं कर सकते जिनमें नैतिक अर्थकी ध्वनि हो। लेकिन अुनमें भी अनेक मानवीय वृत्तियां तो हैं ही। मार्क्सवाद अुन्हें ये वृत्तियां तृप्त करनेमें समर्थ बनाता है,

लेकिन वह अुन्हे विज्ञान और नैसर्गिक अैतिहासिक प्रक्रियाओके छद्मवेशमे पेश करता है, जैसा कि मार्क्सने स्वय किया था।

साम्यवादका मूल्याकन

अब हम साम्यवादका विस्तारसे मूल्याकन करनेकी कोशिश करे। अुनके दरिद्रता और शोषणको कम करने तथा सार्वत्रिक सामाजिक न्यायकी स्थापनाके अुद्देश्य अुत्तम है। अब अुन अुपायोकी छानबीन करनी चाहिये जिन्हे वह अिनकी सिद्धिके लिअे काममें लेना चाहता है। पहले हम साम्यवादी सिद्धान्तोका विचार करेगे और फिर अिस बातका विचार करेगे कि व्यवहारमें अुनका अमल कैसे किया जाता है।

अुसका अेक तत्त्वज्ञान है

पूजीवादका कुछ हद तक अेक ही समयमें अव्यवस्थित तथा अुतावलीवाले अवसरवादमें से विकास हुआ। परन्तु समाजवाद और साम्यवाद मार्क्स, अेंजल्स, लेनिन और स्टालिन द्वारा निर्मित तत्त्वज्ञानसे अुत्पन्न हुअे। अुनकी रचनाअे निश्चित ही महान और अत्यत प्रभावशाली दस्तावेज है। अपने प्रश्नोका अुत्तर देने और बुद्धिमत्तासे चुनाव करनेके लिअे हमे स्थानकी मर्यादामें रहकर अिस तत्त्वज्ञानकी परीक्षा करनी चाहिये। हम साम्यवाद या अुसकी शक्तिको तब तक नही समझ सकते, जब तक कि हम अुसके आधारभूत और अत्यत सश्लिष्ट तथा स्पष्ट दार्शनिक, अैतिहासिक, आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक तत्त्वज्ञानको — सिद्धान्तोको — भी न समझ ले।

साम्यवाद मानव-स्वभावका और ससारका वर्णन है। वह पिछले अितिहास और वर्तमान घटनाओका स्पष्टीकरण है और भविष्यका अेक निश्चित पूर्व-कथन है। अुसमे प्रकृति और मानव-घटनाओके नियत्रणका और मानव-कल्याण तथा सार्वभौम न्यायका आश्वासन है। अुसके वर्णन और स्पष्टीकरण कहा तक सत्य है? अुसने कहा तक अपने वचनोका पालन किया है? चूकि किसान और ज्यादातर शहरी मजदूर मूक और असगठित है, अिसलिअे शिक्षित मध्यम वर्गके आरम्भ और नेतृत्वके बिना

कोअी बड़े सामाजिक, आर्थिक या राजनीतिक परिवर्तन नही हो सकते। अिसलिअे अैसे भावी नेताओके लिअे यह महत्त्वपूर्ण है कि वे साम्यवादके सिद्धान्तोका बहुत ध्यानपूर्वक परीक्षण करे और अुन्हें समझनेकी कोशिश करे। या दूसरे शब्दोमें कहे तो दूसरोके लिअे यह विस्तारसे समझ लेना महत्त्वपूर्ण है कि अिन भावी नेताओको साम्यवाद क्यो आकर्षित करता है। आपके मनमें यह प्रश्न अुठता होगा कि साम्यवाद कोअी सही तत्त्वज्ञान भी है या नही, अथवा आप किसी समय बुद्धिपूर्वक अिसकी चर्चा करना चाहते होगे, अथवा अुसके बारेमें पक्ष या विपक्षमें तर्क करना चाहते होगे। यह परिच्छेद शायद अिसमें आपकी मदद करेगा। स्थानाभावके कारण मेरी आलोचनाअें सक्षिप्त और साररूप होगी।

साम्यवादी सिद्धान्त

मार्क्सके सपूर्ण सिद्धान्तका आधार दो बिन्दुओ पर है (१) चित्त और पदार्थके सम्बन्धके विषयमें अुसकी कल्पना, (२) वह वस्तु जिसे मार्क्स 'द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद' (dialectical materialism) कहता था।

पहले बिन्दुके बारेमें मार्क्स और अेंजल्सने अपने सवेदन-सिद्धान्तका निरूपण किया और अुसके आधार पर यह दलील दी कि मुख्य सत्य पदार्थ है और चित्त पदार्थका परिणाम या गौण अुपज है। यह विचार दार्शनिक भौतिकवादके नामसे प्रसिद्ध है। अिस धारणाके आधार पर कि पदार्थने चित्तको अुत्पन्न किया, मार्क्सने यह तर्क पेश किया कि मनुष्यके औजार और अुत्पादन-यत्र मनुष्यकी अन्य सब प्रवृत्तियोका कारण है और आर्थिक बल ही समस्त अैतिहासिक घटनाओका नियत्रण करते है। अिसलिअे जिनके हाथमें अुत्पादन-तत्रका नियत्रण होता है, अुनके हाथमें अन्य सब बातोका नियत्रण होता है।

क्या यह वैज्ञानिक है?

मार्क्स यह मानता था कि पदार्थके साथ चित्तके अिसी विशेष सबधके कारण हमें भौतिक जगतका ज्ञान हो सकता है और अिसी लिअे हमें विज्ञानकी प्राप्ति हो सकती है।

मार्क्सका यह दावा था कि अुसके सब सिद्धान्त वैज्ञानिक हैं। जहा तक अुसका सिद्धान्त गृहीत धारणाओके समूहसे निकाली हुअी निष्कर्ष-माला है, वहा तक अुसकी पद्धति वैज्ञानिक अवश्य है। सारे विज्ञानो और विज्ञानोके राजा गणितमें अैसा ही होता है। यही कारण है कि अनेक लोगोको अुसके सिद्धान्तने अितने व्यापक रूपमें आकर्षित किया है।* परन्तु जैसा हम देखेंगे, अुसका सिद्धान्त या तत्त्वज्ञान अपनी मूल धारणाओमें ही अवैज्ञानिक है, और वह अपने अिस दुराग्रहपूर्ण दावेमे भी अत्यत अवैज्ञानिक है कि वह सत्यकी अतिम और सम्पूर्ण अभिव्यक्ति और मार्गदर्शक है। विज्ञानमें अन्तिम सत्य होता ही नही।

मार्क्सकी और लेनिनकी भी पदार्थकी कल्पनाका आधार न्यूटनके द्रव्य-सम्बन्धी नियमो और विचारो पर तथा यूक्लिडकी भूमिति पर था। परतु आधुनिक भौतिकशास्त्रने न्यूटनकी कल्पनाओको छोडकर आअिन्स्टीनकी कल्पनाओको अपना लिया है और यूक्लिडकी भूमिति अब अति विशाल या अति सूक्ष्म वस्तुओके बारेमें भौतिक नियमोके व्यापारका निश्चित चित्र नही देती। जो तत्त्वज्ञान सब घटनाओका स्पष्टीकरण करनेका दावा करता है, अुसमें समस्त भौतिक क्षेत्रोका समावेश होना ही चाहिये।

मार्क्सका सवेदन-सिद्धान्त

सवेदनके बारेमें मार्क्स और अेंजल्सका सिद्धान्त यह था कि हमारी अिन्द्रियोके ज्ञानसे हमे भौतिक पदार्थोकी और वस्तुगत सत्यकी हूबहू नकलें, परछाअी या चित्र मिल जाता है। अुनका सिद्धान्त यह भी था कि ये पदार्थ जैसे हमे दिखाअी देते है वैसा ही वास्तवमें हमसे बाहर और हमसे स्वतत्र रूपमें अुनका अस्तित्व होता है। चूकि हमारे सवेदन

* विचारधाराओके युद्धमें पूजीवादी अुद्योगवाद जितना असफल साबित होता है, अिसका अेक कारण यह है कि जैसा सम्पूर्ण और सुगठित तत्त्वज्ञान साम्यवादका मालूम होता है वैसा पूजीवादी अुद्योगवादका नही है।

बाह्य जगतके पदार्थोंकी हूबहू नकल है, अिसलिअे अुनका कहना था कि हम बाह्य सत्यके जगतको निश्चित रूपमे जानते है। वह ठीक वैसा ही है जैसा वह हमें दिखाअी देता है।

परतु हालका विज्ञान और अुस पर आधारित तत्त्वज्ञान हमें बताता है कि यद्यपि स्वतत्र बाह्य सत्य विद्यमान हैं और वे हमारी अिन्द्रियोंको प्रेरित करते और हमारे सवेदनोंका आरम्भ करते हैं, फिर भी वास्तवमें वे बाह्य सत्य क्या हैं यह जानना हमारे लिअे सदा असभव होगा।

डॉ० अेडेल्बर्ट अेमीज़ (जूनियर) तथा सयुक्त राज्य अमरीकाके न्यू जर्सी प्रदेशके प्रिंसटन स्थित अेमोमिजेटेड रिसर्च अिन्स्टिटयूटके हालके सशोधनोंने भौतिक साधनोंकी मददसे कुछ बीसेक पूर्णतया वस्तुगत प्रदर्शनो या प्रयोगों द्वारा यह बताया है कि किसी विशेष भौतिक पदार्थके हमारे सवेदन वैसे पदार्थोंकी नकले या चित्र या प्रतिच्छाया नही हैं, परन्तु वास्तवमे अुनके द्वारा हमारी अिन्द्रियो पर अुत्पन्न प्रभावके अर्थकी व्याख्याअें हैं। अिन प्रदर्शनोसे प्रगट होता है कि ये व्याख्याअें दो अप्रत्यक्ष मानव-शक्तियोंसे निश्चित होती है। वे हैं (१) हमारी धारणाअें और (२) हमारे हेतु। अिन प्रदर्शनोसे यह भी प्रगट होता है कि हम यह नही जानते और न जान सकते हैं कि जिन वस्तुओंसे हम अिन्द्रिय-सवेदन प्राप्त करते है और जिन्हे हम बाह्य भौतिक अस्तित्व रखनेवाली समझते हैं, अुनका सच्चा स्वरूप क्या है।* अिन अिन्द्रिय-सवेदनोंकी सत्यता जिसे लेनिन अभ्यास (Practice) कहते थे अुससे नही जाची जाती। परतु अुनकी सत्यताकी सभावनाकी जाच क्रिया द्वारा की जाती है। अेक महान अग्रेज तत्त्वज्ञानी बर्ट्रण्ड रसेलने, जो आधुनिक विज्ञान, गणित और तर्कशास्त्रमें पारगत हैं, भी कहा है कि हम भौतिक पदार्थोंके बाह्य जगतके स्वरूपको नही जान सकते।

---

* अिन प्रदर्शनोके अधिक ब्यौरेवार वर्णनके लिअे मेरी पुस्तक 'अे कम्पास फॉर सिविलिज़ेशन' का 'वास्तविक क्या है' नामक चौथा परिच्छेद देखिये।

अिन्द्रिय-सवेदनके अनुसधानका यह परिणाम प्रथम महत्त्व पदार्थको नही देता, परतु चित्तको देता है, क्योकि चित्त ही हमारे अिन बोधोकी व्याख्या करता है।

अिन्द्रियोकी मर्यादाअें

हमारी अिंद्रिया सत्यको बतानेके लिअे पर्याप्त निश्चित साधन नही है। प्रमाणित न की जा सके अैसी धारणाअे, गणित, तर्कशास्त्र, प्रयोग और अवलोकन सभी अिसके लिअे जरूरी है और अिस शोधका कोअी अन्त नही है। अुदाहरणके लिअे, हमारी अिंद्रिया हमें बताती है कि सूर्य पृथ्वीके आसपास चक्कर लगाता है, परतु खगोल-शास्त्र और कोपरनीकस, केपलर, न्यूटन और आअिन्स्टीनका गणितशास्त्र अिसके विपरीत बताता है।

पुराने जमानेका भौतिकशास्त्र, जिसका आधार मार्क्स, अेंजल्स और लेनिनने लिया था, साधनोकी सहायतासे वचित अिंद्रियोके लिअे ही सच है। परतु जब हम अिद्रियोको केमरो, अेक्स-रेवाले अणुवीक्षण-यत्रो, साअि-क्लोट्रोन और दूसरे साधनोकी मदद पहुचाते है, तब हम परमाणुओके केन्द्रमें — प्रोटोन, अेलेक्ट्रोन और न्यूट्रोनके जगतमें — पहुच जाते है और वहा पुराने भौतिकशास्त्रके नियम लागू नही होते। अुस जगतमें यूक्लिडकी भूमिति भी सही नही अुतरती। अिन अणुओसे निकलनेवाली शक्तिका जिन बलो द्वारा नियत्रण होता है वे कालके क्षेत्रसे परे है।

मार्क्सवादियोको आधुनिक विज्ञानके परिणाम मानने ही होगे

मार्क्स, अेंजल्स, लेनिन और स्टालिन सबने विज्ञान और वैज्ञानिक पद्धतिके अत्यधिक महत्त्व पर जोर दिया है। अगर अैसा है तो मार्क्सके सिद्धान्तको आधुनिक विज्ञानके निर्णयोका और पदार्थके अुसके द्वारा किये गये विश्लेषणका अनुसरण करना होगा। मार्क्सवादी अैसा कहकर नही बच सकते कि पाश्चात्य परमाणु-वैज्ञानिकोके आविष्कार और विचार झूठे है, क्योकि वे 'बुर्जुआ' या 'आदर्शवादी' दिमागोकी अुपज है। यदि सोवियट

सरकार और साम्यवादी दल अणुबमोंको वास्तविक चीज समझते हैं (और वे जरूर समझते हैं, क्योंकि सोवियट सरकारने अुनका बनाना स्वीकार किया है और वह अुन्हें काममें लेनेकी धमकी भी देती है), तो मार्क्स-वादियोंको पहले-पहल जिन बमोंको बनानेवाले बुर्जुआ लोगोंके भौतिक विज्ञानको और अुस विज्ञानके तात्त्विक परिणामोंको स्वीकार करना ही होगा। अन्यथा मार्क्सवादियोंकी भी वैसी ही अटपटी और असभव स्थिति हो जायगी, जैसी रोमन कैथोलिक सम्प्रदायकी गैलीलियोके खगोल-सबंधी सिद्धान्तोंके बारेमें हुआी थी। यह सम्प्रदाय गैलीलियोको अिन शर्तं पर अपने विचार प्रतिपादित करने देनेको तैयार था कि वह पृथ्वीके घूमनेको केवल खगोल-सबंधी अेक सिद्धान्तके रूपमें माने, न कि हकीकतके तौर पर। अिसी तरह सोवियट सरकार क्वेन्टम-सिद्धान्तको यत्र-विज्ञानके प्रकाशनोंमें शोधकी अेक प्रणालीके रूपमें प्रयुक्त होने देती है, परतु अुसके तात्त्विक परिणामोंको माननेसे अिनकार करती है।

पदार्थकी आधुनिक कल्पना

परमाणु-सम्बन्धी भौतिकशास्त्र बताता है कि अिन्द्रियगम्य तथाकथित 'पदार्थ' अकशास्त्र पर आधारित अेक कल्पना है, अेक तात्त्विक कल्पना है, अेलेक्ट्रोन, प्रोटोन तथा न्यूट्रोनसे बने असख्य परमाणुओंकी सभाव्य क्रियाका परिणाम है। अेलेक्ट्रोन, प्रोटोन और न्यूट्रोन प्रकट रूपमें विद्युत्की गतिसे युक्त या अुससे रहित शक्तिकेन्द्र हैं। और कभी वे कणोंकी तरह तथा कभी तरगोंकी तरह व्यापार करते हैं। जो चीज अेक भौतिक-रासायनिक तत्त्व या अेक प्रकारके 'पदार्थ'को, जिसका हमारी अनघड अिन्द्रिया अनुभव करती हैं, दूसरे अैसे तत्त्व या 'पदार्थ'से अलग करती है, वह है अुन अुन तत्त्वोंके परमाणुओंमें रहे प्रोटोनों, अेलेक्ट्रोनों तथा अन्य परमाणु-कणोंकी सख्या और व्यवस्था या रचना।

अिन अतिम कणों या तरगोंके निश्चित व्यवहारका वर्णन शब्दोंमें नहीं किया जा सकता और न अुसे किसी प्रकारके यान्त्रिक साधनोंसे समझाया जा सकता है, क्योंकि जिन नियमोंसे अुनकी क्रिया निश्चित

होती है वे प्रत्यक्ष रूपमे हमारे परिचित स्थान और कालके क्षेत्रमे परे या बाहर है। अिस व्यवहारका वर्णन ऐसे पेचीदा गणित-सूत्रो द्वारा ही किया जा सकता है, जिनमें स्थान और कालके तत्त्व नही होते। जिस गणितसे अणुबमोका बनाना सभव हुआ, अुसे 'आदर्शवादी' कहकर मार्क्सवादी और लेनिनवादी सिद्धान्त द्वारा अुसकी निंदा की जानी चाहिये और अुसे गलत ठहराया जाना चाहिये। हमारी अिन्द्रिया अितनी स्थूल है कि वे हमें तथाकथित 'पदार्थ'की सच्ची या ठीक नकल अथवा प्रतिमूर्ति नही दे सकती। मार्क्स और लेनिनका खयाल बिलकुल गलत था और अुनके सिद्धान्त आजके युगमें वैज्ञानिक नही रहे।

अगस्त १९५२ के अणु-वैज्ञानिकोके बुलेटिन (शिकागो, सयुक्त राज्य अमरीका) में 'दि डायमेंट अेण्ड मॉडर्न साजिंस' पर प्रकाशित अेक लेखमें कहा गया है कि "'पदार्थ' प्रकृतिके अनिश्चित और विविध गुणोंके लिअे अेक अति व्यापक शब्द है। यह शब्द और 'भौतिक' शब्द १८वी सदीके विचारोके अवशेष है और आधुनिक विज्ञानके कोअी भी नियम बनानेमे अगभूत नही है।"

चित्त और पदार्थ दोनो शक्तिके प्रकार है

भौतिक तत्त्वोमे से अेक तत्त्व — यूरेनियम — जिसे हम सामान्यत पदार्थ समझते है, शक्तिमें बदल दिया गया है, जैसी कि आिन्स्टीनके प्रसिद्ध समीकरणमे भविष्य-वाणी की गअी थी, और अणुबमने अुसे प्रत्यक्ष सिद्ध कर दिखाया है। अिनके विपरीत, शक्तिको साअिक्लोट्रोनमे 'पदार्थ'के रूपमें बदल दिया गया है। आधुनिक शरीरशास्त्र और मनोविज्ञानने सिद्ध कर दिया है कि विचारके साथ साथ मस्तिष्कमें विद्युत्-प्रवाह भी पैदा होता है और वह शक्तिका ही अेक स्वरूप है और प्रगट रूपसे अवकाशमे अेक स्थानसे दूसरे स्थानको भेजा जा सकता है। अिन दोनो निर्णयोसे यह सम्भव प्रतीत होता है कि चित्त और पदार्थ दो विरोधी तत्त्व नही है, परन्तु अेक ही मौलिक सत्यके केवल दो अलग अलग पहलू है। अगर अैसा है तो अिससे मार्क्स और लेनिनका यह

दावा मदिग्ध हो जाता है कि अन्तिम मत्य 'पदार्थ' है। अन्तिम मत्यको 'पदार्थ' कहनेके वजाय शक्ति भी कहा जा मकता है, और हमारी कौनसी अिन्द्रिय हमें शक्तिकी मच्ची नकल या अुमका सच्चा चित्र प्रदान करती है?

अिसके सिवा, हमारे चित्तोंको वौद्धिक कल्पनाओंका और जिमे हम 'पदार्थ' कहते हैं अुमका भान होता है और वे दोनोंके माथ काम ले सकते हैं। परन्तु जहा तक हम जानते हैं 'पदार्थ' को अपना भान नही होता और न वह स्वय अपने साथ या वौद्धिक कल्पनाओंके साथ काम ले सकता है (यद्यपि वह दोनोंसे प्रभावित हो मकता है), अिमलिअे सत्यके अमूर्त पहलूका अर्थात् चित्तका सर्वोपरि महत्त्व मालूम होता है।

यह मच है कि मानव-शरीरके कुछ या सब भागोंके दोषोंके कारण या अुनके स्थगित हो जानेके कारण चित्तके कार्यमें गभीर वाधा पहुच सकती है, अथवा कभी कभी पहुचती है। परतु अुमसे यह मिद्ध नही होता कि पदार्थ चित्तसे श्रेष्ठ है। किसी वढओको खराब औजार देनेसे या सारे औजार अुससे छीन लेनेसे यह प्रमाणित नही होता कि औजारोंका अस्तित्व वढओके अस्तित्वसे पहले था या औजारोंने वढओको बनाया या औजार वढओसे श्रेष्ठ है अथवा अुसका नियत्रण करते हैं। अिम प्रकारका अेक अुदाहरण कुमारी हेलन केलरका है, जो शिशुकालसे ही विलकुल वहरी, गूगी और अधी थी। अेक प्रतिभावान और निष्ठावान शिक्षिकाकी मददसे और अपने अदम्य मकल्प-बलसे अुमने पढना-लिखना सीख लिया है और अपना विकास अेक अत्यत बुद्धिशाली और सुमस्कृत व्यक्तिके रूपमें, वस्तुत अेक महान महिलाके रूपमें, कर लिया है। अुसके चित्तने कठोर शारीरिक वाधाओ पर विजय प्राप्त की है।

जीवधारियोंके क्रमिक अैतिहासिक विकासमें चित्तके प्रगट विकासमें भी यह सिद्ध नही होता कि चित्त पदार्थका परिणाम है, जैमे किमी वढओको धीरे धीरे अधिकाधिक अच्छे औजार देनेसे यह सिद्ध नहीं होता कि वढओ औजारोंकी गौण अुपज है अथवा अुनका परिणाम है।

पदार्थ चित्तका मूल नहीं है

महान भौतिकशास्त्री श्री० श्रोडिंगरने अपनी मनोहर छोटीसी पुस्तक 'वॉट अिज़ लाअिफ'* में सिद्ध किया है कि प्रत्येक नये जीव-धारीका रूप माता-पिताके रज और वीर्यके अणु-परमाणुओंमें निश्चित नहीं होता, परन्तु अुनकी अिन्द्रियातीत रचना या व्यवस्थामें निश्चित होता है। किसी प्राणीके जीवनमें जिन अणुओंसे अुसके तंतु बनते हैं वे सतत प्राणीके भीतर आते और जाते रहते हैं। कोषके अिन अणुओंकी अिन्द्रियातीत रचनामें या व्यवस्थामें ही अुस जीवके विशेष रूपका आरम्भ हुआ था और अुसीमें वह टिका हुआ है। जीवित शरीरके ढांचेका नियंत्रण 'पदार्थ' नहीं करता, परन्तु अिन्द्रियातीत रचना करती है। अिसी तरह, अुदाहरणार्थ, सीसेको तांबेसे भिन्न बनानेवाले प्रोटोन अथवा अेलेक्ट्रोन नहीं हैं, परन्तु प्रत्येक धातुके अणुओंमें रहे अेलेक्ट्रोन और प्रोटोनोंकी संख्या और रचना है। यह रचना अिन्द्रियातीत है और अुसका ज्ञान निरी अिन्द्रियोंसे नहीं होता। केवल चित्त ही अुसे समझ सकता है।

अिन सब विचारोंसे दार्शनिक भौतिकवादकी सत्यतामें, अिस सिद्धान्तकी सत्यतामें कि मूल सत्य पदार्थ है और चित्त पदार्थकी गौण अुपज या परिणाम है, गहरी शंका अुत्पन्न होती है। अगर पदार्थ पुरानी पड़ चुकी तात्त्विक कल्पना ही हो, पुराणपंथी लोगोंकी मानसिक अुपज ही हो, तो वह चित्तका मूल कैसे हो सकता है? व्यक्तिगत रूपमें मेरा तो यह विचार है कि यह मार्क्सवादी सिद्धान्त तथ्यों, विज्ञान या तर्ककी कसौटी पर टिक नहीं सकता। अगर अैसा हो तो अब वह अितिहास या समाजके किसी सिद्धान्तके लिअे सही आधार नहीं समझा जा सकता।

भौतिक अुत्पादनके बलों द्वारा पूर्ण नियंत्रित अितिहासका सिद्धान्त

पदार्थकी प्राथमिकताका प्रतिपादन करके मार्क्स अपने अिस सिद्धान्त पर पहुंचा (परन्तु अुसने अिसे सिद्ध नहीं किया) कि दानावस्था विचारोंसे

* कैम्ब्रिज युनिवर्सिटी प्रेस, लन्दन।

श्रेष्ठ है, और असलिये मानव-अितिहासमें सारे परिवर्तन आर्थिक अुत्पादनकी पद्धतियों या साधनोंके परिवर्तनोंके कारण हुअे हैं। परंतु मालूम होता है अुसने अिस हकीकत पर ध्यान नहीं दिया कि मनुष्यकी विचार-शक्तिने ही नये नये औजारों और मशीनोंका आविष्कार किया है और अुत्पादनके साधनोंको बदल दिया है। आर्कराअिटकी बुद्धिने कताअी-यंत्र पैदा किया, जॉर्ज वाटने भापके अेंजिनका आविष्कार किया, अेक चीनीने छपाअीकी कला खोज निकाली और मानवोंकी संकल्प-शक्तिने ही अिन आविष्कारोंका अुपयोग किया। मानव-अितिहासमें आर्थिक अुत्पादनमें होनेवाले परिवर्तन सदा बहुत महत्त्वपूर्ण तो होते हैं, लेकिन वे ही अेकमात्र या अंतिम या सदा सबसे महत्त्वपूर्ण तत्त्व नहीं होते। कोअी अेक तत्त्व अैसा नहीं है जो सदा अंतिम या सबसे महत्त्वपूर्ण हो। जीवन और जगत अितने पेचीदा और परिवर्तनशील हैं कि अुनमें अैसी स्थिति रह ही नहीं सकती। यह तो हुअी चित्त और पदार्थके सम्बन्धकी मार्क्स-वादी कल्पनाकी बात।

द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद

चित्त और पदार्थके सम्बंधकी चर्चा करनेके बाद मार्क्सने दार्शनिक हेगलका अनुसरण करते हुअे बताया कि विचारोंमें कोअी भी परिवर्तन 'द्वन्द्वात्मक' प्रक्रिया द्वारा आगे बढ़ता है। अर्थात् पहले अेक कथन होता है, फिर अुसका खंडन होता है, फिर दोनों विचारोंमें संघर्ष होता है और अुसमें से अेक तीसरा कथन निकलता है, जो पहलेके दोनों विचारोंकी भूलोंको अस्वीकार करके अुनके सत्योंको अपने भीतर समा लेता है। यह तीसरा कथन पहलेके दोनों कथनोंका सुधार होता है। अिन तीन स्थितियोंको हेगलने पूर्वपक्ष, अुत्तर पक्ष और समन्वय कहा है। ज्यों ही समन्वय सिद्ध हो जाता है त्यों ही वह अेक नया पूर्वपक्ष बन जाता है और यह प्रक्रिया बार बार दोहराअी जाती है और अनन्त रूपमें चलती रहती है। मार्क्सने अिस बौद्धिक प्रक्रियाको पुराने तर्कशास्त्रके स्वरूपोंसे श्रेष्ठ समझकर अपनाया। अुसका यह भी दावा था कि तमाम मानव-व्यवहार

और अितिहास भी अिसी प्रक्रियासे आगे वढते हैं। अिसे अुसने द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद कहा और वताया कि वह सारे अितिहासका वुनियादी कानून है। और अुसकी तथा अुसके अनुयायियोकी विचारणामें द्वन्द्वात्मक भौतिक-वादका आधार दार्शनिक भौतिकवाद पर है और अिन दोनोका अकाट्य सम्वध है।

यह सिद्धान्त कि सारा अितिहास अेक द्वन्द्वात्मक प्रक्रिया है अुन्हें अिस विचार तक ले गया कि परिवर्तनमात्र प्रगति है और प्रगति अनिवार्य है। अिसका गूढार्थ यह भी हुआ कि सघर्षमात्र, जिसमें हिसा शामिल है, अच्छा है। और वेशक यह भी कि साम्यवादियो द्वारा किया हुआ कोअी भी परिवर्तन अच्छा है।

दार्शनिक भौतिकवाद और अितिहासकी द्वन्द्वात्मक प्रक्रियामें कोअी जरूरी सम्बन्ध नहीं

दार्शनिक भौतिकवाद और अितिहासकी द्वन्द्वात्मक प्रक्रियाका सम्बध जोडनेकी जो कोशिश की गअी है, अुसकी अुत्तम चर्चा मैंने अेच० वी० अेक्टन कृत 'दि अिल्यूज़न ऑफ दि अिपॉक' नामक पुस्तकके १४२ और १४३ पृष्ठो पर देखी है। वह अिस प्रकार है

> "लेनिनका अनुसरण करते हुअे स्टालिन तर्क करता है कि (१) यदि पदार्थ मूल तत्त्व और चित्त अुसकी अुपज है, तो 'समाजका भौतिक जीवन, अुसका अस्तित्व, भी मुख्य वस्तु है और अुसका आध्यात्मिक जीवन गौण वस्तु है', और (२) अगर चित्त अेक वास्तविक भौतिक जगतका 'प्रतिविम्व' है, तो 'समाजका आध्यात्मिक जीवन' 'समाजके भौतिक जीवन' का प्रतिविम्व है, जो 'मनुष्यकी अिच्छासे स्वतत्र अेक वास्तविक सत्यके रूपमें विद्यमान है।'
>
> "तो हम पहली वातका विचार करें। अुसका आशय यह है कि पदार्थ प्रथम अस्तित्वमें था और चित्त वादमें अुससे अुत्पन्न

हुआ — अिस भौतिकवादी पूर्वपक्षमे यह निष्कर्ष निकलता है कि 'समाजके भौतिक जीवनमें' यानी अुत्पादक शक्तियोंमें होनेवाले परिवर्तन सामाजिक जीवनमें तथा कला, धर्म और तत्त्वज्ञानमें महत्त्वपूर्ण परिवर्तन करते हैं। अधिक सक्षेपमें कहे तो अिसका मतलब यह है कि अैतिहासिक भौतिकवाद दार्शनिक भौतिकवादका परिणाम है। किन्तु यह समझमें आना कठिन नही कि बात अैसी नही है। दार्शनिक भौतिकवादमें जिस पदार्थको 'आदि तत्त्व' माना गया है वह गैसो, समुद्रो और चट्टानो जैसी वस्तुओमें है, परन्तु 'समाजके भौतिक जीवन' में औजारो, आविष्कारो और कुशलताओका समावेश होता है। अिसलिअे 'समाजके भौतिक जीवन' की तथाकथित सामाजिक प्राथमिकता चित्त पर पदार्थकी तथाकथित प्राथमिकतासे बिलकुल भिन्न वस्तु है, क्योंकि 'समाजके जिस भौतिक जीवन' से राजनीतिक और विचारधारा-सम्बधी स्वरूपोका निर्माण होता है वह खुद मानसिक तत्त्वोंसे बनता है, जब कि मार्क्सवादी दृष्टिसे चित्तरहित पदार्थमे चित्तकी अुत्पत्ति हुअी है। अिस पूर्वपक्षसे कि चित्तकी अुत्पत्ति पदार्थसे हुअी, सामाजिक विकासके कारणोंके बारेमें कोअी परिणाम नही निकाला जा सकता।

"(१) के विरुद्ध मेरी दलीलसे जिसे प्रतीति हो गअी हो वह (२) को भी नही मानेगा, क्योंकि (१) की तरह (२) का आधार भी 'विशुद्ध भौतिक' के अर्थमें 'भौतिक' और 'शिल्प-सबधी' के अर्थमें 'भौतिक' के बीचकी सदिग्धता है। वास्तवमें समाजका भौतिक जीवन वह वस्तु है जिसके बीच मनुष्य व्यक्तियोंके रूपमें जन्म लेते हैं और जिसे अुन्हे वैसे ही स्वीकार करना पडता है जैसे स्वय भौतिक जगतको वे स्वीकार करते हैं। परन्तु जिस प्रकार समाजका भौतिक जीवन सारी मानव-जाति पर निर्भर करता है, अुसी प्रकार भौतिक प्रकृति नही करती। अेक बार यह स्पष्ट हो

गया कि 'समाजके भौतिक जीवन' में सामाजिक अुत्तराधिकारसे प्राप्त कुशलताअें और अनुभव शामिल है, फिर तो अितिहासकी भौतिकवादी कल्पनाका और कॉम्प्ट जैसोंके सिद्धान्तोंका — जिनके अनुसार सामाजिक प्रगतिका कारण बौद्धिक विकास है — अन्तर बहुत कम हो जाता है।"

मार्क्स और अेंजल्स तथा लेनिन और स्टालिन सबका यह विचार था कि आपने अेक बार दार्शनिक भौतिकवादको स्वीकार कर लिया कि द्वन्द्वात्मक भौतिकवादकी सत्यता पूरी तरह स्पष्ट हो जाती है, क्योंकि यह अितिहासकी भौतिकवादी कल्पनाका अर्थ देनेवाला दूसरा शब्द ही है। सच पूछा जाय तो दोनोंका यह सम्बन्ध केवल मनभाती-सी बात है। अिनमें कोअी तर्कसिद्ध सम्बध नहीं है। अेक परसे निकाला गया दूसरा अनुमान सत्य नहीं है।

फिर जैसा बर्ट्रांण्ट रसेलने बताया, दार्शनिक और द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद अेक-दूसरे पर निर्भर या आवश्यक रूपमें परस्पर सम्बद्ध नहीं हैं। तर्ककी दृष्टिसे दोनोंका अेक-दूसरेके साथ कोअी मेल नहीं है। यदि दार्शनिक भौतिकवाद सच भी हो तो अिससे यह साबित नहीं हो सकता कि राजनीतिमें आर्थिक कारण आधारभूत होते हैं। अुदाहरणार्थ, किसी अैतिहासिक घटनामें निर्णायक तत्त्व जलवायु, भूगोल या स्त्री-पुरुषका आकर्षण हो सकता है। ये सब भौतिक हैं, परन्तु आर्थिक नहीं है। अगर दार्शनिक भौतिकवाद सही हो तो भी द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद (अितिहासकी भौतिकवादी कल्पना) गलत हो सकती है। अिसके विपरीत, दार्शनिक भौतिकवाद गलत हो तो भी अधिकांश राजनीतिक घटनाअें आर्थिक कारणोंसे हो सकती हैं। आर्थिक कारणोंके कार्यके पीछे स्त्री-पुरुषोंकी अधिकार और सत्ताकी अभिलाषाअें काम करती हैं, फिर भी सम्भवतः अुन अभिलाषाओंका पूरा स्पष्टीकरण अधिकतर भौतिकवादी शब्दोंके बजाय बौद्धिक और भावनामय शब्दोंमें किया जा सकता है। समस्त अभिलाषाओंका मूल या हेतु शारीरिक नहीं होता।

द्वन्द्वात्मक भौतिकवादके विषयमें अन्य शंकाअें

द्वन्द्वात्मक भौतिकवादके सही होनेमें और भी शंकाअें हैं। परस्पर विरोधी बातोंके बारेमें अुसकी व्याख्या दो अर्थवाली, भिन्न भिन्न, अस्पष्ट और कभी कभी बिलकुल नहीं होती। मार्क्स और अुसके अनुयायी अकसर जोर देकर कहते हैं कि कुछ दृष्टान्त अेक-दूसरेके विपरीत होते हैं, जब कि वास्तवमें वे केवल अेक-दूसरेसे भिन्न होते हैं। वे बार बार यह दावा करते हैं कि जो केवल परिवर्तन है वह असलमें प्रगति है। पूर्वपक्ष या अुत्तर पक्षके सम्बन्धमें कोअी समन्वय परिवर्तन हो सकता है, परन्तु यह जरूरी नहीं कि वह प्रगति ही हो। 'प्रगति' शब्द वैज्ञानिक नहीं है, वह नैतिकताका सूचक है। अिसका अर्थ केवल संग्रहसे अधिक है। कुछ सामाजिक परिवर्तन निरे समझौते होते हैं और सच्चे समन्वय बिलकुल नहीं होते। किसी भी संघर्षका सच्चा हल मूल सतह पर नहीं होता। सच्चे हलके लिअे अुसे सार्थकताकी किसी अूंची सतह पर ले जाना पडता है।

दलीलके लिअे माना जा सकता है कि तर्कशास्त्रमें द्वन्द्वात्मकताकी कल्पना और अितिहासमें द्वन्द्वात्मकताकी कल्पना अुचित है। परन्तु दोनों द्वन्द्वात्मक पद्धतियां अनिवार्य रूपसे समानान्तर या परस्परावलम्बी नहीं होंगी। किसी परिस्थिति-विशेषमें अुनमें से अेक कल्पना दूसरीकी यथार्थता पर असर डाले बिना अयथार्थ हो सकती है।

वर्गविहीन समाज

अिसके सिवा, अितिहास पर लागू किया जानेवाला द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद यह मान लेता है कि परिवर्तन सतत होता है और अुसका कभी अन्त नहीं होता। अगर अैसी बात हो और अैतिहासिक प्रक्रियाओंसे हम किसी दूरके भविष्यमें अेक वर्गविहीन समाज तक पहुंच जायं, तो क्या वही अितिहासका अन्त हो जायगा? क्या परिवर्तन होना ही बन्द हो जायगा? क्या वह स्थिति अेक अचल, अपरिवर्तनशील, स्वर्गकी स्थिति होगी? कुछ रूसियोंका दावा है कि अुन्होंने वर्गविहीन समाज सिद्ध कर

लिया है। परन्तु अितिहास और परिवर्तन रूसमें बन्द नहीं हो गये हैं। जैसा जॉन बीवर्स और प्रा० कार्ल बेकरका कहना है, अैसा मालूम होता है मानो द्वन्द्वात्मक भौतिकवाद अेक प्रक्रियाके नाते वर्गविहीन समाजको नष्ट कर देगा और अुसकी जगह कोअी प्रतिपक्ष खडा कर देगा। अैसी सूरतमें यह सारी शक्ति लडनेमें क्यों खर्च की जाय? अेक अमरीकी मार्क्सवादी, सिडनी हुक, का कहना है कि परिवर्तनसे अन्तिम वर्गविहीन समाजमें गडबड नहीं होगी, बल्कि वह मनुष्यके मन और हृदयमें आर्थिकसे अधिक अूचे स्तर पर काम करेगा। यदि अैसा हुआ तब तो, जैसा प्राध्यापक कार्ल बेकर बताते हैं, हमारी दुनियामें स्वर्ग अुतर आयेगा। और मार्क्सको अैसे काल्पनिक स्वर्गसे और स्वर्गके स्वप्न देखनेवालोंसे हमेशा घृणा होती थी।

नियतिवाद शंकास्पद है

अैतिहासिक भौतिकवादके समर्थक कहते हैं कि वह नियतिवादका अेक रूप है और अुसका आधार विज्ञान पर है। परन्तु आधुनिक विज्ञानने कट्टर नियतिवादको छोड दिया है। विज्ञानके नियम अब स्थिर और अटल नहीं माने जाते, वे दृढ संभावनाके कथनमात्र हैं। तब अधिकसे अधिक मार्क्सवादी सिद्धान्त केवल अैतिहासिक संभावनाओंका अनुमान ही हो सकता है। अिसलिअे कोअी भी मार्क्सवादी भावी घटना-क्रमके बारेमें निश्चित रूपसे भविष्य-वाणी नहीं कर सकता। अैतिहासिक घटना-क्रममें कोअी अनिवार्यता नहीं होती। सच कहा जाय तो मार्क्सकी कअी भविष्य-वाणियां गलत सिद्ध हुअी हैं, जिनमें से अेक यह है कि पहली क्रान्ति किसी अुद्योग-प्रधान देशमें होगी।

मार्क्सवादी अितने निःशंक क्यों हैं?

यद्यपि दार्शनिक भौतिकवाद और द्वन्द्वात्मक या अैतिहासिक भौतिक-वादके बीच जो सम्बन्ध जोर देकर बताया गया है वह तर्ककी दृष्टिसे झूठा है, दोनों परस्पर असंगत हैं और अलग अलग भी प्रत्येक यदि झूठा नहीं हो तो भी अत्यंत शंकास्पद तो है ही, फिर भी अुनके अलग अलग

सत्य होने पर और दोनोंके अनिवार्य सम्बध पर बार बार जोर देनेसे मार्क्सवादियोको यह लगता है कि दर्शन और अितिहासके क्षेत्रमें अिन सिद्धान्तोंमें गहरा और चिरस्थायी सत्य है। अिन सिद्धान्तोंकी प्रकट किन्तु भ्रमपूर्ण गहनता और सर्वग्राहिता घटनाओंको समझने और अुनका नियत्रण करनेकी मार्क्सवादियोकी भूखको तृप्त करनेकी आशा दिलाती है और अिसलिअे वे अत्यत आकर्षक हैं। अिससे अुनको विश्वास हो जाता है कि अुन सिद्धान्तोंमें जो कुछ कहा गया है वह होगा, और अवश्य होगा। अिससे अुन्हे अपने पर और अपने निर्णयो तथा विचारो पर पूरा विश्वास हो जाता है। वे कट्टरतापूर्वक यह विश्वास करते हैं कि अुनकी बात हमेशा बिलकुल ठीक होती है और जो कोअी अुनके सिद्धान्तको स्वीकार नही करता वह सर्वथा गलत और दुष्ट है। वे अकसर सिद्धान्तके जड पूजक और घमडी हो जाते हैं और मौका पडने पर निर्दय भी बन जाते हैं। विडम्बना तो देखिये कि मार्क्सवादी लोग वैसे ही कट्टरपथी बन जाते हैं, जैसा अुनका अेक मुख्य विरोधी — रोमन कैथोलिक चर्च अपने प्रारभिक कालमे था।

लेकिन अुपरोक्त कारणोंसे मेरा विश्वास है कि अिस बारेमें साम्यवादी विचारोंमें गहरी भूल है और अगर ये भूले छोडी नही गअी तो अुनके आधार पर बनी हुअी राजनीतिक प्रणाली असफल रहेगी। अितिहासकी प्रक्रियाओंमें आर्थिक बलोंका महत्त्वपूर्ण हाथ होता है। यह सिद्धान्तके द्वारा नही परन्तु घटनाओंकी सावधानीसे की गअी जाच और स्पष्टीकरणके द्वारा सिद्ध करके मार्क्सने अितिहासके अध्ययनकी बडी सेवा की। परन्तु अुसने अपने पक्षका निरूपण करनेमें अति कर दी और बहुतसे अैसे परिणाम निकाले जो गलत हैं। अगर दार्शनिक भौतिकवाद और अैतिहासिक भौतिक-वाद यथार्थ न हो और अुनका आपसमे सम्बध भी नहीं हो, तो साम्यवाद अितिहासका बिलकुल सही अर्थ नहीं देता या भविष्यकी बात बतानेके लिअे कोअी आधार नहीं देता है।

सत्यको प्रगट करनेके लिअे केवल तर्क काफी नहीं

मार्क्सवादी विचारधारा यह मान कर चलती है कि तर्क और बुद्धिसे हम पूर्ण सत्यको जान सकते हैं। परन्तु मार्क्सवादी अिस तथ्यको नही देखते कि गणितशास्त्रमें ही नही, बल्कि सारे क्षेत्रोमें चित्त कुछ अैसी धारणाये बना लेता है जिन्हे बनाये बगैर वह रह नही सकता, परन्तु जिन्हे वह तर्क या विज्ञानसे सच या झूठ भी सिद्ध नही कर सकता। ये धारणाये हमारे सारे विचारके प्रारभिक बिन्दु है। ये धारणायें तर्कसे पहलेकी चीज है और अन्त प्रेरणासे बनती है। अुदाहरणार्थ, मार्क्सने भी मान लिया था कि अुसका अस्तित्व है, परन्तु वह अपनी दसो अिन्द्रियोसे, तर्कसे या वैज्ञानिक यत्रोसे यह सिद्ध नही कर सकता था कि अिस आन्तरिक अिन्द्रियातीत आत्माका, जो सोचती है, अनुभव करती है, आशा करती है और भयभीत होती है, सचमुच अस्तित्व है। फिर भी मार्क्स यह जरूर मानता था कि अुनका अस्तित्व वास्तविक है। अिस प्रकार मार्क्सवादी तर्क भी हमें सत्यके बारेमें कोअी पूरा, समग्र और असदिग्ध चित्र नही देता।

साम्यवादकी धारणायें

साम्यवाद पूजीवादकी तरह कुछ धारणायें बनाता है, जिन्हे न तो अुसने सिद्ध किया है और न वह कर सकता है। ये श्रद्धाकी बाते है। अुनमें से कुछ ये है

१ अितिहासकी भौतिक प्रक्रियायें तर्कके क्रमिक विकासको दोहराती है।

२ द्वन्द्वात्मक भौतिक प्रक्रियाओका परिणाम सदा प्रगतिमें ही आता है।

३ मनुष्य सदा अपने वर्गीय स्वार्थोसे प्रेरित होकर ही काम करते है।

४ अन्तमें साम्यवादी पार्टी ही वर्गविहीन समाजकी स्थापना करेगी।

५ जब वर्गविहीन समाज कायम हो जायगा तब राज्यका अन्त हो जायगा और तब हिंसा बन्द हो जायगी।

(मेरी अपनी धारणा यह है कि जब तक मानव-जाति सघर्षका निपटारा करनेके अेक अुपायके रूपमें हिंसाको नही छोड देगी तब तक राज्यका अन्त नही होगा।)

चूकि सभी मनुष्योकी अपनी अपनी धारणायें होती हैं और अिसलिअे अुन्हे अशत श्रद्धाके आधार पर जीना पडता है, और धारणाओंकी वास्तविकता तर्क या शस्त्रके बलसे सिद्ध नही की जा सकती, अिसलिअे साम्यवादी और मार्क्सवादी यह मानकर नही चल सकते कि अुनकी धारणायें दूसरे लोगोकी धारणाओंसे अधिक सत्य हैं और न वे मानव-स्वभाव या अन्त प्रेरणाको बदलकर सारी धारणाओंको अेकसी ही बना सकते हैं। दूसरे लोगोको चाहिये कि मार्क्सवादियोको अपनी धारणायें बनाने दें और मार्क्सवादियोको चाहिये कि दूसरोको अुनकी भिन्न धारणायें बनाने दें। धारणाओ और मनुष्योके स्वभावकी प्रामाणिक और वैज्ञानिक स्वीकृति ही सहिष्णुता है।

समाजका महत्त्व अधिक या व्यक्तिका?

साम्यवादी और समाजवादी भी आग्रहके साथ कहते हैं कि समाज व्यक्तिसे अधिक महत्त्वपूर्ण है और चूकि आज राज्य या सरकारका आम तौर पर सबसे बडा सगठन होता है, अत अिस विश्वासका व्यावहारिक स्वरूप यह हो जाता है कि राज्य व्यक्तिसे अधिक महत्त्वपूर्ण है। यह विश्वास तुरन्त ही राज्यकी पूजाका विषय बन जाता है। अिसी विचारसे फलित अेक मान्यताके रूपमें मार्क्सवादी आम तौर पर यह आरोप लगाते हैं कि पूजीवाद व्यक्तिको समाजसे ज्यादा अूचा स्थान देता है, और यह विश्वास झूठा और बुरा है।

समाजका महत्त्व अधिक है या व्यक्तिका, यह प्रश्न अेक हद तक जीवशास्त्रके अिस प्रश्नसे जुडा हुआ है कि वातावरण या आनुवशिकतामें से कौन अधिक प्रभावशाली है। अिस बारेमें अधिकारपूर्ण जीवशास्त्री

दोनोंका प्रभाव लगभग बराबर बराबर बताते हैं। कोअी भी समझदार आदमी दोनोंमें से अेक भी तत्त्वके महत्त्वसे अिनकार करनेका प्रयत्न नहीं करता। किसी अेक पर यदि जरूरतसे ज्यादा जोर दिया जाता है, तो अुसके परिणामस्वरूप कठिनाअी पैदा होती है।

समाजका महत्त्व अधिक है या व्यक्तिका, अिस प्रश्नसे वह पुराना मूर्खतापूर्ण प्रश्न याद आ जाता है — मुर्गी पहले अस्तित्वमें आअी या अंडा? आज तक किसीने कोअी अेक ही व्यक्ति अैसा न तो देखा है, न सुना है, जिसके आसपास कोअी परिवार या समूह कभी नहीं रहा हो। समाज व्यक्तियोंसे बनता है। अेकको दूसरेकी जरूरत है, अेकके बिना दूसरा कभी नहीं रहा है। शायद समस्याको हल करनेका सबसे बुद्धिमत्तापूर्ण तरीका यह है कि प्रकाशके स्वरूप-सम्बन्धी सिद्धान्तके बारेमें भौतिकशास्त्रियोंके अुदाहरणका अनुसरण किया जाय। कुछ परिस्थितियोंमें प्रकाश अिस तरह काम करता है मानो वह शक्तिकी तरंगें हो, दूसरी परिस्थितियोंमें वह शक्तिके अणुओंकी तरह काम करता है। अिसलिअे भौतिकशास्त्रियोंने अिस बातका आग्रह छोड़ दिया कि प्रकाशको या तो तरंगरूप होना चाहिये या अणुरूप। किसी खास अवसर पर आप अुसे जिस तरह देखते हैं या काममें लेते हैं, अुसीके अनुसार प्रकाशमें दोनों गुण या कोअी अेक गुण होता है। अिसी तरह कभी व्यक्तिको ज्यादा महत्त्वपूर्ण समझना ठीक होगा, और कभी या किसी दूसरे हेतुके लिअे समाजको अधिक महत्त्व देना ज्यादा अुचित और बुद्धिमत्तापूर्ण होगा। किसी सभ्यताके व्यवहारमें दोनों सिद्धान्तोंका अपने अपने अुपयुक्त अवसर या हेतुके लिअे अुपयोग किया जायगा। अुदाहरणके लिअे, विचार और कार्य दोनोंमें पहल करनेके लिहाजसे व्यक्ति अधिक महत्त्वपूर्ण दिखाअी देता है, स्वीकृति और सातत्यके हेतुओंके लिअे समाजका अधिक महत्त्व है।

अिस सम्बन्धमें यह बात विपरीत-सी मालूम होती है कि रूसी साम्यवादी दलने, जो समूहवाद और समाजके श्रेष्ठ महत्त्वके बारेमें अितना आग्रही है, आकाश-पाताल अेक करके कुछ अैसे प्रमुख साम्यवादी व्यक्तियोंका

सरकार द्वारा 'सफाया' यानी वध कराया, जिन पर १९३६–३८ में पार्टीकी नीतिसे विचलित होनेका अभियोग लगाया गया था। और अुसके बाद बेरियाके जैसे और वध भी हुअे हैं। यदि व्यक्ति महत्त्वहीन है तो थोडेसे नास्तिकोंको चुनकर मौतके घाट अुतारनेमें अितना अुत्साह क्यों दिखाया जाय? और मार्क्स, अेंजल्स, लेनिन और स्टालिन चारों व्यक्ति ही हैं, फिर भी दुनिया भरके साम्यवादी अुनके बारेमें बहुत अूंचे विचार रखते हैं। नहीं, विचार व्यक्तियोंके मस्तिष्कमें अुत्पन्न होते हैं और व्यक्तियोंके द्वारा ही प्रसारित किये जाते हैं। राजनीति, अर्थशास्त्र, कला, धर्म और दूसरे क्षेत्रोंमें श्रद्धासे स्वीकार किये जानेवाले आजके सिद्धान्त मूलतः व्यक्तियोंकी ही नास्तिकतायें थीं। व्यक्ति सजीव अिकाअियां हैं और समाजकी अपेक्षा वे अधिक पूर्ण रूपमें, अधिक दृढ रूपमें और अधिक भावनात्मक रूपमें संगठित हैं। व्यक्तिकी श्रेष्ठ आरम्भ-शक्ति और विचार-शक्तिका यह अेक महत्त्वपूर्ण कारण है।

असंगतताओंका विचार

मेरे कहनेका यह मतलब नहीं है कि मानव-आचरणकी कोअी भी प्रणाली या समाजका कोअी भी महान सिद्धान्त तार्किक असंगतताओंसे मुक्त है, अथवा अैसी तार्किक असंगतताओंका होना लाजिमी तौर पर समाजकी अैसी जीवन-प्रणाली या समाजके अैसे सिद्धान्तको अस्वीकार करनेके लिअे कोअी सच्चा कारण है। लेकिन कुछ असंगततायें बड़ी गंभीर दुर्बलता हो सकती हैं और सभी असंगततायें कमसे कम सिद्धान्तके विषयमें जडता और कट्टरताको दबानेका अेक कारण तो होनी ही चाहिये। सभी सामाजिक सिद्धान्तोंको अस्थायी और प्रयोगके रूपमें ही मानना चाहिये।

व्यवहारमें साम्यवाद

यह बात तो हुअी साम्यवादी सिद्धान्तकी। अब हम यह देखें कि व्यवहारमें अुसने कैसा कार्य किया है।

जैसे हमने पूंजीवादके गुण और दोष दोनोंको समझनेकी कोशिश की, अुसी तरह हमें साम्यवादकी भी अुतनी ही पूरी छानबीन करनी चाहिये। हमने पूंजीवादके नौ लक्षण बताये हैं (१) निजी सम्पत्ति और स्पर्धा पर जोर, (२) बढ़ता हुआ शिल्प-विज्ञान और अुद्योगवाद, (३) निरन्तर बढ़नेवाला श्रम-विभाजन, (४) सदा बढ़नेवाला व्यापार-व्यवसाय, (५) शहरीकरण, (६) अधिकांश वस्तुओं और प्रवृत्तियोंका पैसेमें मूल्यांकन और अुन सब पर पैसेका नियंत्रण, (७) कर्मके लिअे अचूक और अुत्तम प्रेरणाके रूपमें पैसेके मुनाफेके हेतु पर आधार, (८) पुलिस, स्थलसेना, जलसेना और हवाओ सेनाके रूपमें संगठित हिंसाका विस्तृत अुपयोग, (९) भूमि-वितरण, भूमि-अधिकार, भूमिकर और पैसेके ब्याजकी अैसी पद्धतियां जो कृषिके मुकाबलेमें अुद्योग और व्यवसायको प्रबल प्रोत्साहन देती हैं, मौजूदा कानूनी और सामाजिक प्रणालीका पक्ष लेती हैं और अिसलिअे किसानों और काश्तकारोंमें दरिद्रता और अधीनताको बढ़ाती हैं तथा धरती-कटावको बढ़ाती और जमीनके अुपजाअूपनको घटाती हैं।

व्यवहारमें साम्यवादने निजी सम्पत्तिके अलावा और सब बातें कायम रखी हैं। न्यायकी दृष्टिसे यह कहा जा सकता है कि साम्यवादके मूल अुद्देश्योंमें से व्यक्तिगत संपत्तिका अुन्मूलन ही अेकमात्र अैसा अुद्देश्य है, जो रूसमें पूरी तरह सिद्ध हुआ है। साम्यवाद पूंजीवादकी अपेक्षा समाजके नियंत्रणके साधनके रूपमें हिंसा और भयका अधिक सतत और बुरे रूपमें अुपयोग करता है। साम्यवाद स्पर्धा और पैसेके रूपमें नफेके हेतु पर पूंजीवादसे कम जोर देता है, फिर भी अिन्हें काममें जरूर लेता है। अवश्य ही कोओ अैसा कह सकता है कि अिस समय जिसे साम्यवाद कहा जाता है वह केवल समाजवाद है और साम्यवाद अनिश्चित भविष्यमें ही किसी समय सिद्ध होगा। लेकिन चूंकि स्पर्धा और नफेके हेतुके ये तत्त्व अिस समय रूस, चीन पोलैंड, हंगरी, बल्गेरिया, पूर्व जर्मनी, रूमानिया और चेकोस्लोवाकियामें सचमुच काम कर रहे हैं, अिसलिअे हम आशा कर सकते हैं कि वे अपने साधारण परिणाम पैदा करेंगे ही। साम्यवाद

और पूजीवाद दोनो भौतिकवादी है। रूसमे अुद्योगवादका अधिक विकास होगा तब मै आशा रखता हू कि वहा भी अुसी तरहके हानिकारक परिणाम पैदा होगे, जिनका कि पूजीवादके परिच्छेदमें वर्णन किया गया है, क्योंकि साम्यवादी अुद्योगवादका भी पूजीवादी अुद्योगवादकी तरह मर्यादा या आत्म-सयमका कोअी सिद्धान्त नही होता।

साम्यवाद और पूजीवाद बहुत हद तक अेकसे हैं

अिस परसे यह प्रकट होता है कि पूजीवाद और साम्यवाद व्यवहारमें अनेक लोग अनुभव करते है अुनसे कही ज्यादा समान है और अिसलिअे अुनसे बहुत हद तक वही परिणाम पैदा करनेकी आशा रखी जा सकती है। सोवियट रूसके अनुभवने यह साबित कर दिया है कि अुत्पादनके साधनोंमें व्यक्तिगत सम्पत्तिके बिना भी अुद्योगवादी समाज स्थापित हो सकता है। परन्तु व्यक्तिगत सम्पत्तिका स्वामित्व व्यक्तियोंके हाथसे निकल कर राज्यके पास चला जानेसे राज्यगत पूजीवाद कायम हो सकता है। मौजूदा रूसी सरकारके कटु आलोचक मानते है कि वहाकी वर्तमान प्रणाली वास्तवमें राजकीय पूजीवाद ही है। अवश्य ही अुत्पादनके साधन राज्यके हाथोंमें पूरी तरह आ जानेसे व्यक्तिगत पूजीवादके परिणामोकी अपेक्षा अिसके परिणाम भिन्न होगे। लेकिन यह सवाल किया जा सकता है कि राजकीय पूजीवाद या राजकीय समाजवादके दीर्घकालीन परिणाम नैतिक दृष्टिसे पूजीवादी देशोकी अपेक्षा अधिक श्रेष्ठ होगे, या अिस समय पूजीवादी देशोमें जितना न्याय है अुससे अधिक समग्र न्याय अुत्पन्न करेगे या नही। बेशक, शुरूमें तो मनशा यही होगी कि अुत्पादनमें सभीका न्यायपूर्ण हिस्सा हो और सबको अपनी जरूरतके अनुसार मिले। और सचमुच, रूसमें मजदूरोको बेकारी, बीमारी और असमर्थता सम्बधी जितने अधिक लाभ आज मिलते है अुतने पहले कभी किसी और देशमें नही मिले। कहा जाता है कि लिंग, जाति, धर्म या जन्मस्थानकी बिना पर रूसमें किसी नागरिकको किसी काम, पद वगैराके लिअे अयोग्य नही ठहराया जाता। शिक्षा वहा सार्वभौम है। सामाजिक जीवनमें मानवताकी भावनाका बडी

हद तक प्रवेश हो गया है। भोजनका स्तर कुछ ऊंचा हो गया है। परन्तु अनेक रिपोर्टोंके अनुसार आम लोगोंके घरोंकी हालत बहुत नहीं सुधरी है। अिनके सिवा, वहां बहुत गरीबी है और वह ज्यादातर शायद अुत्पादक प्रयत्नकी दिशाको बदल कर अुसे शस्त्रास्त्रोंके निर्माणमें लगा देनेसे अुत्पन्न हुअी है।

सत्ताके केन्द्रित होनेका खतरा

परन्तु अेक नौकरशाहीके हाथोंमें, और अुससे भी ज्यादा, साम्यवादी दलकी अेक छोटीसी केन्द्रीय कार्यसमितिके हाथोंमें सत्ता केन्द्रित हो जानेके जहरीले और दूषित करनेवाले असरसे सकट खड़ा होनेका सबेत अैतिहासिक अनुभवसे मिलता है। चूंकि साम्यवादी अितिहासके महत्त्व पर अितना जोर देते हैं, अिसलिअे अुन्हें और अुनसे आकर्षित होनेवाले लोगोंको अिस निर्णयके लिअे युगोंका प्रमाण याद रखना चाहिये कि सत्ता सत्ताधारियोंको भ्रष्ट करती है। मुझे कठोर राजनीतिक और आर्थिक मान्यताओंके परिणामोंका भी भय है।

मुझे अिस बातका भी भय है कि साम्यवाद द्वारा लादे गये विचारोंकी समानता अंतमें कला, साहित्य और विज्ञानके क्षेत्रोंमें सारे सृजन-कार्यको बहुत सीमित कर देगी।

रूसमें खड़ा हो रहा नया शासक्वर्ग

वर्गविहीन समाजके जिस आदर्शकी घोषणा की गअी है अुसके विपरीत रूसमें पहले ही अूंचे-नीचे सामाजिक और राजनीतिक दर्जे पैदा हो गये हैं और व्यवस्थापकों तथा टेकनिशियनोंका अेक नया वर्ग बन गया है। आर्थिक वेतनमें भी भारी फर्क है। व्यवस्थापकोंको साधारण मजदूरोंसे कहीं ज्यादा वेतन मिलता है। अेक रिपोर्टके अनुसार सर्वोच्च श्रेणीके व्यवस्थापकोंको मजदूरोंके वेतनसे साठ गुना अधिक वेतन मिलता है। कुछ अमरीकी वकीलोंने १९५६ में रूसके कुछ भागोंका दौरा किया था। अुनकी रिपोर्टके अनुसार मिन्स्कके ट्रेक्टरके कारखानेमें अेक अुम्मीदवार मजदूरको

मासिक मजदूरी ३५० रूबल थी और मास्कोमें विश्वविद्यालयके अध्यक्षको १२,००० रूबल मासिक वेतन मिलता था, जो लगभग ३५ गुना अधिक है। संयुक्त राज्य अमरीकामें अेक चपरासी और अुसको नौकर रखनेवाली संस्थाके अध्यक्षकी कमाअीमें लगभग अितना ही अन्तर है। सोवियट रूसमें आयकर अधिकसे अधिक १२ प्रतिशत है, परन्तु संयुक्त राज्य अमरीकामें सबसे अधिक धनवान वर्गके लोगोंसे ९१ प्रतिशत आयकर लिया जाता है। रूसमें साम्यवादी दलने अधिकृत रूपमें वेतन और अवसरकी समानताको तिलांजलि दे दी है। दूसरे साम्यवादी देशोंमें अिस सम्बन्धमें क्या स्थिति है अिसका मुझे पता नहीं है।

सोवियट राजनीतिके अेक प्रसिद्ध अभ्यासी प्रो० वैरिंगटन मूरे (जूनियर) का विश्वास है कि जान-बूझकर संगठित की गअी सामाजिक असमानता, असमान वेतनकी स्पर्धापूर्ण प्रेरणाका प्रयोग और आन्तर-राष्ट्रीय राजनीतिके प्रचलित नमूनेकी स्वीकृति आदि सब बातें शायद अुद्योगवादी समाजके बने रहनेके लिअे जरूरी हैं। अभी अिस बारेमें निश्चित रूपसे कुछ नहीं कहा जा सकता, मगर फिर भी रूसकी सोवियट सरकारने अपनी मूल योजनायें बदल डाली हैं और अिन नीतियोंको अपना लिया है।

आर्थिक शोषणका सवाल

पूंजीवादकी तुलनामें सब बातोंको देखते हुअे रूसमें मजदूरोंका आर्थिक शोषण कुल मिलाकर घटा है या नहीं, यह कहना कठिन है। कोअी प्रत्यक्ष कसौटियां तो हैं नहीं, जिनके आधार पर शोषणका निश्चित नाप निकाला जा सके। अगर रूसमें शोषण हो तो वह राज्य द्वारा होता है। और मूल्यांकन तथा चुनावके खातिर स्वावलम्बन, आरंभ-शक्ति तथा वाणी, विचार, अखबारों, धर्म और संगठनकी स्वतंत्रता तथा राज्यका दबाव आदि अन्य बातोंको भी तराजूमें रखनेकी जरूरत हो सकती है। और आर्थिक स्वतंत्रता तथा राजनीतिक दबाव या आर्थिक दबाव और राजनीतिक स्वतंत्रता, अथवा बौद्धिक दबाव और आर्थिक स्वतंत्रता, अथवा अिसी तरहके अन्य तत्त्वोंके जोड़से अेक-दूसरेका सन्तुलन कैसे

बिगड जाता है? मनुष्यके चुनाव — अगर वह चुनाव करनेकी स्थितिमें हो — प्रत्यक्ष कसौटियोंके आधार पर नहीं हुआ करते, परन्तु आत्मगत तथा भिन्न मूल्यांकनों, धारणाओं और हेतुओंके आधार पर होते हैं।

संभव दीर्घकालीन परिणाम

मेरी आशा तो यह है कि समय पाकर अिस प्रकार सत्ताके केन्द्रित होनेका परिणाम यह होगा कि स्वामित्वके व्यक्तियोंके हाथोंसे निकलकर राज्यके अधिकारमें जानेके लाभ पूरी तरह मिट जायंगे। मैं समझता हूं कि अैसी परिस्थितिमें राज्य आम जनताकी आवश्यकताओं और आशाओंका प्रतिनिधि नहीं रह जायगा। अितिहाससे यही शिक्षा मिलती है। मेरे विचारसे साम्यवाद और सम्पूर्ण समाजवाद दोनों व्यक्तिकी आरंभ-शक्ति, स्वावलम्बन, कल्पना-शक्ति और बौद्धिक स्वतंत्रताको और अिसलिअे परिवर्तनके अनुकूल बननेकी समाजकी क्षमताको कमजोर बना देंगे। हो सकता है कि रूसी समाजवादके कमसे कम कुछ दोष अुन विशेष भौतिक, आर्थिक, परम्परागत और मनोवैज्ञानिक तत्त्वोंके कारण हों जो रूसमें विद्यमान हैं और दूसरे देशोंमें नहीं हैं। निःसन्देह हर देश समाजवादकी अेक विशेष सुवास पैदा करेगा। परन्तु, जैसा सदा होता आया है, महान सत्ताके केन्द्रीकरणका दूषित प्रभाव तो हर जगह काम करेगा।

जनताके प्रति हिंसाका अुपयोग

साम्यवादकी कट्टरता, अुत्साह और अधीरताने शीघ्रगामी परिवर्तनके लिअे जबरदस्त दबाव पैदा किया है। चूंकि मनुष्यकी विचार और कार्यकी आदतें सदा धीरे धीरे बदलती रही हैं और अुनकी विकासकी अपनी ही सजीव गति रही है, अिसलिअे जो भी देश अुनके नियंत्रणमें आया है अुसीमें साम्यवादियोंकी जल्दबाजीका परिणाम विशाल पैमाने पर आम जनताके दमन और हिंसामें आया है। हालांकि हम मानते हैं कि प्रतिक्रियावादी पूंजीपति और भूस्वामी अपनी सत्ताको बनाये रखना चाहते हैं, फिर भी परिवर्तनकी अनिच्छा केवल अुन्हींके जान-बूझकर किये हुअे

दूषित विरोधके कारण नही रही है। यह अनिच्छा अधिकतर मानव-स्वभावकी जडता और किसी प्रकारकी प्रचलित परपराके कारण होती है। यह मन्दता कुछ हद तक समाजकी सुव्यवस्थाकी गहरी जरूरतके कारण होती है, 'अिसका कारण यह भी होता है कि लोग नअी व्यवस्थाके प्रस्तावको स्वीकार करने और अुस पर विश्वास करनेमें मन्द होते हैं। लोग अेक बारमें अेक ही कदम और वह भी छोटा-सा कदम अुठाना चाहते हैं, और दूसरा कदम अुठानेसे पहले पहले कदमके परिणामको देख लेनेके लिअे ठहर जाते हैं।

यह सभव है कि बहुतसे साम्यवादी हिंसाका अुपयोग अिसलिअे नही करना चाहते कि अुनके ध्येयके लिअे हिंसा आवश्यक है, बल्कि अिसलिअे करना चाहते हैं कि मानव-स्वभावकी अुनकी दृष्टि बहुत छोटी है और वे न तो अुस पर विश्वास करते हैं और न अुसकी छिपी हुअी सूक्ष्म शक्तियोंको पहचानते हैं।

रूस और अुसके आश्रित देशोंमें अिस सारी असैनिक हिंसाने जनताको जबरदस्त दुख पहुचाया है। हमें यह कैसे मालूम हो कि अिसके परिणाम चुकाअी जानेवाली कीमतको अुचित ठहरानेवाले ही आयगे। अिस प्रश्नका साम्यवादी अुत्तर अभी तक अितिहास द्वारा अुचित सिद्ध नही हुआ है, यह निरी भविष्य-वाणी है। जैसा अेल्टन मेयोने कहा है, "अुत्सुक और हार्दिक सहयोग जाग्रत करनेमें जबरदस्ती कभी सफल नही हुअी है।" और स्थायी हार्दिक सहयोगके बिना हमें स्थायी दीर्घजीवी सभ्यता नही मिल सकती।

साम्यवादका सात बडे खतरोसे सबध

अब अिस निबधके आरभके भागको फिरसे देखें, तो भारत पर जो सात बडे खतरे मडरा रहे हैं अुनमें से पहले खतरेसे — अर्थात् जमीनके कटाव और जरूरतसे ज्यादा आबादीके खतरेसे — निपटनेके लिअे शायद पूजीवादकी अपेक्षा साम्यवाद अधिक अच्छी स्थितिमें है। परतु पूजी-वादियोंकी तरह मार्क्सवादी भी अिस विचार पर मुग्ध हैं कि मनुष्य

प्रकृतिका प्रभु और स्वामी है। जिसलिजे पूजीवादियोकी तरह साम्यवादी भी शायद मानव-सृष्टिके साथ अन्य सृष्टिके सम्बन्धको भलीभाति न समझनेके कारण वडी वडी गलतिया करेगे। किन्तु ये गलतिया दिखानेवाले परिणाम तो वहुत वर्षो वाद मालूम होगे। रूसमे जमीनकी रक्षा और पानीकी व्यवस्थाका कुछ हद तक वढिया काम हुआ है, लेकिन शायद वह पूजीवादी अमरीकासे अधिक अच्छा नही हुआ है। सोवियट रूसमे घासके समतल मैदानो पर जगलोकी कुछ वडी वडी रक्षापक्तिया स्थापित की गअी है, परतु यह वात अमरीकाके लिअे भी सही है।

जहा तक मुझे मालूम है साम्यवादने अभी तक कही भी अत्यधिक जनसंख्याके भयको दूर करनेका प्रयत्न नही किया है, यद्यपि रूसमे मेरा विश्वास है कि कुछ सतति-नियमन केन्द्रोने काम किया है। परतु दूसरी ओर रूसी सरकारने वडे परिवारोको वहुत वडे वडे 'वोनस' दिये है, और अिस प्रकार अुसने जनसंख्याको रोकनेके वजाय अुसकी वृद्धिको प्रोत्साहन दिया है। मै नही जानता कि चीनी सरकारने आवादीके नियत्रणके वारेमे क्या कदम अुठाये है। रूसी साम्यवादने पूजीवादी देशोकी अपेक्षा पैसे और सम्पत्तिके वटवारेको शायद कम अन्यायपूर्ण वनाया है। परतु अिस विषयमें दिये गये अपने गुरूके वचनोको अुसने सरकारी तौर पर तिलाजलि दे दी है। रूसमे सत्ता पैसेके द्वारा कम और राजनीति तथा राज्यके दवावके द्वारा अधिक काम करती है। मुझे अैसी कोअी चीज दिखाअी नही देती, जो सत्ताके भ्रष्टाचारको अिस विषयमे सिद्ध किये गये सारे लाभोका अत करनेसे रोक सके।

मालूम होता है। फिर भी अमरीकामें अब तक रूसकी तरह नजरबन्दी कैम्प और खुली बेगार नही है। अमरीकी सरकारने अभी तक जान-बूझकर लाखो किसानोको — या बेशक अेक भी किसानको — भूखो नही मारा है। गहरे सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन जल्दी जल्दी करनेके लिअे साम्यवादके दबावका अनिवार्य परिणाम जबरदस्ती और हिंसाका रूप लेता है। परतु पूजीवाद खास तौर पर काली जातियो और राष्ट्रोके प्रति हिंसाका अपराधी रहा है। अमरीकाने सोवियट रूसके आरभिक कालमें यानी १९१८ में अुसके खिलाफ हिंसाका अुपयोग किया था।

साम्यवादके पुजारी सगठनके बडे आकारके अुतने ही भक्त है जितने पूजीपति। चीनी साम्यवाद भिन्न होगा, मगर अुसका आरभ हुअे अितना थोडा समय हुआ है कि अभी अुसके अुदाहरणसे सही निर्णय करनेका कोअी आधार नही मिलता। साम्यवाद अविकृत रूपमें अिस विचारसे घृणा करता है कि जैसा साध्य हो वैसे ही अुसके साधन भी होने चाहिये।

साम्यवादी सदाचार

साम्यवादी सदाचार अपने ढगका निराला ही है। अुसका अुन नैतिक सिद्धान्तोंसे कोअी सबध नही है, जो ससारमें आज माने जाते हैं और पूजीवाद या अुद्योगवादके जन्मसे बहुत पहलेसे माने जाते रहे हैं। सदाचारकी लेनिनकी परिभाषा यह थी "सदाचार वह है जो पुराने शोषक समाजको नष्ट करनेमें और सारे श्रमजीवियोको अुन मजदूरोंके पक्षमें, जो अेक नये साम्यवादी समाजका निर्माण कर रहे हैं, अेक करनेमें मदद दे सके।" और अखिल रूसी युवक-काग्रेसमें अुसने यह कहा था "हमारे लिअे सदाचार गरीबोके वर्गयुद्धके हितोकी तुलनामें बिलकुल गौण वस्तु है।" अुसने यह भी लिखा था "हमें चालाकी, धोखाबाजी, कानून-भग तथा सत्य न बोलने और सत्यको छिपानेके लिअे सदा तैयार रहना चाहिये।" अुसने यह भी कहा था "तानाशाहीकी शास्त्रीय कल्पनाका अर्थ वह सत्ता है, जिसका आधार किसी कानूनकी

सीमामें न रहनेवाली हिंसा है। तानाशाहीका अर्थ वह सत्ता है, जो कानून पर नहीं बल्कि हिंसा पर निर्भर करती है।" स्टालिनने कहा था "अेक कूटनीतिज्ञके शब्दोंका अुसके कर्मोंसे कोअी सबंध नहीं होना चाहिये, अन्यथा वह कूटनीतिज्ञता ही क्या हुअी? शब्द अेक चीज है, कर्म दूसरी। शब्द दुष्कर्मोंको छिपानेके लिअे आवरणका काम करते हैं। प्रामाणिक कूट-नीतिज्ञता अुतनी ही असंभव है जितना सूखा पानी या लोहेका काठ।"

वचनों और वक्तव्योंकी यथार्थताका यह विनाश मुझे लगता है कि मानव-विश्वास और स्वेच्छापूर्ण सहयोगको नष्ट कर देगा। मेरा विश्वास है कि ये दोनों अेक स्थायी समाजके लिअे जरूरी हैं। मेरे खयालसे अिसका परिणाम यह होगा कि सरकार और साम्यवादी दलके भीतर अनन्त षड्यंत्र, अरक्षितता, डर और सत्ताके लिअे भयंकर कशमकश बढ़ेगी। यह तो सारी भारतीय संस्कृति और बुद्ध तथा गांधीकी शिक्षाके सर्वथा विपरीत है।

पूंजीवादी सदाचार

परन्तु पूंजीवादके बारेमें भी कठोर बातें कही जा सकती हैं। कुल मिलाकर पूंजीवादी गोरी सरकारों और प्रजाओंने हिंसा और छलसे काम लिया है, सैकड़ों बार अपना वचन भंग किया है, काली कमजोर जातियोंका यथासंभव अधिकसे अधिक शोषण किया है, स्वदेशमें तो अुन्होंने लोकतंत्र और अिनसाफियतको दिया है, परन्तु रंगीन जातियोंके साथ निरंकुशता, अत्याचार और बड़ी निर्दयताका व्यवहार किया है, और यह सब तिरस्कारकी या श्रेष्ठताकी भावनासे किया है।

शासन और वर्गविहीन समाज स्थापित करना है, परन्तु वास्तवमें वे अेक छोटेसे गुटका शासन चलाते हैं। अवश्य ही अिस तरीकेमें अुस गुटमें अेक स्थापित स्वार्थ बन जाता है, जो अपनी सत्तासे चिपके रहनेके लिअे कटिबद्ध रहता है।

सत्य यह है कि सत्ता पूंजीवादियों और साम्यवादियोंको, गोरी चमडीवालों और काली चमडीवालोंको — सभीको भ्रष्ट करती है। तोप-बन्दूकोंके आविष्कारसे पहले चंगेजखां और दूसरे अनेक काले निरकुश शासक थे। सभी मानव-प्राणियों पर सत्ताका जहरीला असर होता है।

मैं अिन सब बातोंका अुल्लेख न्यायके खातिर कर रहा हूं। मैं अिस बातकी हिमायत करता हूं कि पूंजीवाद और साम्यवाद दोनोंको अस्वीकार करके गांधीजीका कार्यक्रम अपनाया जाय, ताकि विशाल सत्ताके केन्द्रित होनेके खतरे कमसे कम किये जा सकें।

साम्यवाद और धर्म

जहां तक आध्यात्मिक अेकतामें श्रद्धा रखनेकी बात है, साम्यवाद तो धर्मको 'लोगोंकी अफीम' कहता है। अुसकी जीवन और अितिहास-सम्बन्धी कल्पना भौतिकवादी है। वह सारी धार्मिक संस्थाओंको अपने अधीन बना लेना चाहता है और आत्माके विश्वासको खंडित या नष्ट कर देना चाहता है।

अिस सम्बन्धमें, जैसा जॉन बीवर्मने बताया है, अुसकी अधिकृत स्थितिमें अनजाने ही कुछ विनोद भी मिल गया है। १९२६ के अप्रैलकी २७ से ३० तारीखके बीच हुअे धर्म-विरोधी प्रचार सम्बन्धी साम्यवादी पार्टीके सम्मेलनमें और रूसी साम्यवादी पार्टीकी केन्द्रीय समितिकी बैठकमें नीचेका प्रस्ताव स्वीकार किया गया था

> "श्रमजीवियोंके दिमागमें मार्क्सवादी विज्ञानके बुनियादी सिद्धान्त भर देनेका मार्ग साफ और तैयार करनेके लिअे हम धर्मको अस्वीकार करते हैं।"

अुन्होंने धर्मकी व्याख्या भी अिस प्रकार की थी

"धर्म-विरोधी प्रचारके विषय और पद्धतियोंकी व्याख्या करते समय यह याद रखना जरूरी है कि धर्मके आत्मलक्षी पहलू ये हैं:

(क) जीवन और विश्व-सम्बन्धी तत्त्वज्ञान, अर्थात् विश्वकी तरंगी कल्पनाओंकी अजीब प्रणाली, जिनका वास्तविकतामें मेल नहीं खाता और जो समकालीन विज्ञानके स्वीकृत तथ्योंसे विपरीत है।

(ख) अेक अनोखा आवेग और रहस्यमय भावना।

(ग) 'थोड़ी या बहुत सुसंगत व्यवहार-प्रणाली', जिसका बाह्य रूप आस्तिकोंकी 'धार्मिक पूजा या सम्प्रदाय' में व्यक्त होता है। (प्लेखानोव)

(घ) अेक सदाचारकी पद्धति ।"

मार्क्सवादके साथ लेनिन और स्टालिनके विचार जोड़ दिये जायँ, तो वह निश्चित ही 'जीवन और विश्वका अेक तत्त्वज्ञान' है। अनेक धर्मोंकी तरह अुसका आशय भी सम्पूर्ण जीवन और मानव-स्वभावको तथा अितिहासकी प्रक्रियाओंको समझाना है। वह अेक जागतिक दृष्टि है। वह अेक अैसा कारण है जिससे अितने लोग अुसकी ओर आकर्षित होते हैं, खास करके वे लोग जिन्होंने पुराने धर्मोंको छोड़ दिया है। किसी कल्पनाको 'तरंगी' कहना या नहीं, यह केवल अिस बात पर निर्भर करता है कि आप अुसे नापसन्द करते हैं या नहीं और तथ्योंकी धारणाओंसे वह फलित होती है या नहीं। धर्मका स्थान तर्कसे पहले आता है, क्योंकि वह मान्यताओं और धारणाओं पर विचार करता है, और विज्ञान तथा 'तथ्यों' का सम्बन्ध अुन वस्तुओंसे है जो तर्क और निरीक्षणके क्षेत्रमें आती हैं — और अिन दोनोंका आधार भी धारणाओं पर है। अिसलिअे धर्मका विज्ञानके स्वीकृत तथ्योंके साथ 'मेल बैठना' जरूरी नहीं है। दोनोंके क्षेत्र अलग अलग हैं।

जो साम्यवादी लेखक सोवियट साहित्य और प्रारंभिक सोवियट अुद्योगवादके वीरतापूर्ण सग्रामोंके बारेमें लिखते हैं, वे निश्चय ही आवेग और रहस्यमय भावनाकी भाषामे बात करते हैं, अुदाहरणार्थ, "बोल्शेविज्मकी हर्षपूर्ण रोमाचक कथाअें जिनमें जोश, अन्तर्दृष्टि और सकल्प-बल भरा है।" और अिससे कौन अिनकार कर सकता है कि मार्क्स और लेनिनकी बौद्धिक शब्दावलीके बावजूद अुनमें कितना प्रचड भावनापूर्ण प्रेरक बल था?

और अिसे भी कौन अस्वीकार कर सकता है कि साम्यवादियोकी "किसी हद तक अेक सुसगत व्यवहार-प्रणाली" है? साम्यवादी दलका प्रत्येक सदस्य अुसके लिअे प्रतिज्ञाबद्ध होता है। साम्यवादियोकी कवायदें, विशेष वार्षिकोत्सवोंके समारोह और लेनिनके समाधि-स्थलकी यात्राअें आदि अवश्य अेक प्रकारके धर्म-सम्प्रदाय या कर्मकाण्डका ही रूप हैं।

श्रमजीवियो, औद्योगिक कामगारो, सामान्य स्थितिके मजदूरो तथा पार्टीकी नीतिसे सम्बन्धित साम्यवादी अुल्लेख अकसर अुतना ही तर्कहीन होता है, जितनी नाजियोकी आर्यों सम्बन्धी बातचीत। साम्यवादके महान ग्रन्थ — मार्क्सका 'कैपिटल', अेंजल्सका 'अेण्टी-डुर्हिंग' और लेनिन तथा स्टालिनकी रचनाअें — लगभग अुसी तरह श्रद्धासे पूजे जाते हैं जैसे पुराने धर्मोंके धर्मग्रंथ। साम्यवादके सिद्धान्तके ये प्रवर्तक साम्यवादियो द्वारा अुसी दृष्टिसे देखे जाते हैं, जिस दृष्टिसे ओसाओ लोग अपने सन्तोको देखते हैं। 'लाल मोर्चा' जैसे अकसर दोहराये जानेवाले नारे वैसे ही हैं, जैसे "अल्लाह अेक है और मुहम्मद अुसका रसूल है" यह अिस्लामी नारा या "औसा रक्षा करता है" या "ओसाओ सैनिको, बढे चलो" का ओसाओ नारा। अेक दूरवर्ती ध्येयके रूपमें वर्गविहीन समाज ओसाअियोकी स्वर्गकी कल्पनासे बहुत भिन्न नही दिखाओ देता। धर्मोंकी तरह साम्यवाद या मार्क्सवाद अपने अनुयायियोमें किसी विशेष हेतुका भाव, सत्यके सम्पूर्ण स्पष्टीकरणकी भावना और मानवके सत्यका अश होनेका भान पैदा करता है। धर्मकी अुपरोक्त साम्यवादी व्याख्यामे प्रतीत होगा

कि साम्यवाद अपने अनुयायियोंके लिअे बहुत कुछ धर्म जैसा ही है। अिसे लौकिक धर्म या अैसा धर्म कह सकते हैं जिसका किसी अिन्द्रियातीत या आध्यात्मिक अेकतामें विश्वास नहीं होता। व्यक्तिगत रूपमें मेरा यह विचार है कि साम्यवादकी धारणाअें जितनी गहरी और अुनका कर्मकाण्ड शायद अभी अितना प्रभावशाली नहीं है जितना पुराने धर्मोंका है। परन्तु यह निर्णय करना मैं पाठकों पर ही छोडता हूं।

यदि साम्यवाद अपने अनुयायियोंके लिअे व्यावहारिक दृष्टिसे लगभग अेक धर्म जैसा हो, तो साम्यवाद द्वारा किया जानेवाला धर्मका निषेध सम्पूर्ण निषेध नहीं है। वह केवल पुराने धर्मोंके स्थान पर अपना अेक नया धर्म स्थापित करना चाहता है। वह अिसे 'मार्क्सवादी विज्ञानके बुनियादी सिद्धान्त' नाम देता है। लेकिन यह नाम शायद सर्वथा अुपयुक्त नहीं है या कमसे कम कड़ी बातको नरम शब्दोंमें कहने जैसा है। 'विज्ञान'की अपेक्षा 'विचारधारा' शब्द शायद अुसके लिअे अधिक अुपयुक्त होगा।*

सारी बातोंका सार यह निकलता है कि जहां साम्यवाद हिन्दुस्तानके सामने खड़े बड़े खतरोंमें से शायद पहले खतरेका सामना कर सके, वहां वह दूसरे खतरोंसे निपटनेकी पूंजीवादसे ज्यादा अच्छी क्षमता नहीं रखता दिखाअी देता। पूंजीवादकी तरह साम्यवादमें कोअी आत्म-संयमका सिद्धान्त नहीं है। साम्यवादके साथ जुड़े हुअे दूसरे खतरोंके कारण अुससे

* प्रकृति पर नियंत्रण और भविष्य पर निश्चय प्राप्त करनेकी तथा विज्ञानके साथ समन्वय साध कर किसी वस्तुके रहस्यको समझनेकी लालसा होना ठीक है और अुसकी तृप्ति होनी चाहिये। भारतके पास साम्यवादसे कहीं अधिक गहन दर्शनशास्त्र पहलेसे ही मौजूद है। वह पूंजीवाद और साम्यवाद दोनोंके प्रभावसे अलग रहकर विज्ञान और कुछ शिल्प-विज्ञानका अिस्तेमाल कर सकता है। अपनी पुस्तक 'कम्पास फार सिविलिजेशन'में मैंने अिन गहरी आदर्शकल्पनाओंके साथ आधुनिक विज्ञानका सम्बन्ध जोड़नेकी कोशिश की है।

मिलनेवाले लाभोका हिसाव वरावर हो जाता है। आधुनिक ससारकी समस्याओको हल करनेके लिअे साम्यवाद काफी क्रान्तिकारी नही है। साम्यवादसे पहलेकी प्रणालियोके साथ अुसकी तुलना करे तो अुमने अैसे राष्ट्रीय समाज पैदा कर दिये है, जिनका स्वरूप भिन्न है, परन्तु जिनका मूलतत्त्व भिन्न नही है।

साम्यवाद और किसान

रूसमें साम्यवादी लोग किसान-असन्तोषकी अेक लहर आने पर, किसानोको जमीन देनेका वायदा करनेके वाद, सत्तारूढ हुअे। अुन्होने भूस्वामियोसे जमीन छीनकर किसानोको जरूर दी। फिर अुनकी सत्ताके स्थिर हो जानेके वाद साम्यवादियोने किसानोसे जवरदस्ती वह जमीन छीन ली और अुन पर सामूहिक खेती लाद दी। यह व्यवहार मार्क्स-वादी सिद्धान्तके अनुसार ही था। मार्क्स और लेनिन दोनोको छोटे पैमानेके सगठन और किसानोकी जीवन-पद्धतिके प्रति तिरस्कार था और अुनका विश्वास था कि खेतीका अुद्योगीकरण अवश्य होना चाहिये। मार्क्सने 'ग्रामीण जीवनकी मूढता' के वारेमें लिखा। अुनके जैसी शहरी मनोवृत्ति यह नही समझ सकती कि धरती जीवित प्राणियोका अेक समूह है और जीवित प्राणियोका यात्रिक क्रियाओ और मशीनोके द्वारा सफलतापूर्वक नियमन नही किया जा सकता। अैसा व्यवहार करनेमे जमीन गुणमें घटिया हो जाती है और अन्तमें वह काफी मात्रामें अच्छी खुराक पैदा करनेमें असफल रहती है।*

रूसमें अिस परिवर्तन पर तीव्र सघर्ष हुआ। और सरकारने जान-वूझकर अधिक सम्पन्न किसानोमें से लगभग वीस लाखको भूखो मारकर मौतके घाट अुतार दिया, तब कही सामूहिक खेतीकी नअी नीति स्थापित हुअी। अिस परिवर्तनसे अभी तक रूसमें खेतीकी पैदावारकी समस्या हल नही हो पाअी है। अिसका कारण शायद कुछ हद तक तो यह है

* अिस विचारकी अधिक चर्चाके लिअे पाचवा परिच्छेद देखिये।

कि रूसकी बहुतसी जमीन पर बहुत थोडी वर्षा होती है और वह अुत्तरी ध्रुवके प्रदेशकी ठंडी हवाओंका शिकार बनी रहती है। दूसरा कारण यह भी मालूम होता है कि ट्रेक्टरोंकी बहुतायत होते हुअे भी किसान लोग जो जमीन अुनकी अपनी नहीं है अुस पर कडी मेहनत करनेको राजी नहीं होते। युगोस्लावियामें साम्यवादी सरकारने खेतीकी जमीनोंका सामूहीकरण करनेकी कोशिश की थी, परंतु अपनी सत्ताको कायम रखनेके लिअे यह प्रयत्न अुसे छोड देना पडा। साम्यवादी चीनमें सरकारने भूस्वामियोंसे अुनकी लगभग सारी जमीन छीन ली और किसानोंको दे दी, जो अब तक किसानोंके ही पास है। वहां अधिकांश जमीन स्वेच्छासे बनी हुअी खेती सहकारी समितियों द्वारा जोती जाती है। अिससे चीनमें खेतीकी पैदावार काफी बढ गअी है। देखना यह है कि ये सहकारी समितियां वहां सफल होती हैं या नहीं। पिछले परिच्छेदमें जो कारण बताये गये हैं अुन्हें देखते हुअे मुझे अिसमें शंका होती है कि यह योजना सफल हो सकेगी। अभी तक हमें मालूम नहीं है कि रूसमें भी खेतीके सामूहीकरणके दूरवर्ती परिणाम क्या होंगे।

रूसमें अुद्योगीकरणकी गति

यह सही है कि रूसमें साम्यवादने आश्चर्यजनक गतिसे देशका अुद्योगीकरण कर दिया है, और चीनमें भी अैसा ही हो रहा मालूम होता है। लेकिन चूंकि अधिकांश विकास भारी अुद्योगोंमें हुआ है — जिससे अन्तमें मालके अुपभोक्ताओंको तुरन्त सहायता नहीं मिलती — अिसलिअे ज्यादातर रिपोर्टोंके अनुसार अधिक अन्न, वस्त्र और मकानोंके रूपमें जन-साधारणको बहुत थोडा लाभ हुआ है। आम लोगोंको मुफ्त डॉक्टरी देखभाल, बीमारी और अपंगता सम्बन्धी राहतों बेकारीसे सुरक्षितता, शिक्षा और दूसरी सामाजिक सेवाओंके रूपमें लाभ हुआ है। साथ ही व्यवस्थापकों और यंत्र-विशारदोंकी महत्त्वाकांक्षा बहुत बढ गयी है। सम्भव है कि रूसमें भी, अिंग्लैंड और किसी हद तक अमरीकाकी तरह, भारी अुद्योगोंके लाभ मुख्यतः व्यवस्थापकों और यंत्र-विशारदोंको बना

शासक-समूह ही हजम कर ले और आम लोगो तक छन-छनाकर वह लाभ धीरे-धीरे ही पहुचे। परतु जन-साधारणको वर्तमान लाभ भारी कीमत पर मिले हैं। अिसके लिअे वहा राक्षसी निर्दयता बरती गअी है, खास तौर पर खेतीमें अनेक बार अुत्पादन-सम्बन्धी घोर असफलताअें देखनी पडी हैं, विशाल पैमाने पर लोगोंसे बेगार ली गअी है, सारी अर्थ-व्यवस्थाके लिअे खतरा पैदा करनेवाले खिचाव और तनाव प्रजामें पैदा हुअे हैं और दूसरे राष्ट्रोंके लोगोंमें रूसी प्रजाकी नैतिक प्रतिष्ठा घटी है। भविष्यमें अिन लाभोंके लिअे दूसरी भी कीमतें चुकानी पड़ेंगी।

भारतमें साम्यवाद अपनाया जाय तो क्या शीघ्र अुद्योगीकरण होगा ही?

जो लोग अिस समय भारतमें सत्तारूढ हैं, वे जल्दी जल्दी देशका अुद्योगीकरण-करना चाहते हैं। यह समझमें आने लायक बात है। क्या अिस कामको पूरा करनेके लिअे, दोषोंके होते हुअे भी, साम्यवादको अपनाना अुत्तम और अधिकसे अधिक निश्चित अुपाय होगा?

अुद्योगीकरण करनेमें पश्चिमके देशोंको ढाअी सौ वर्ष या अुससे अधिक समय लगा। रूसने अुद्योगीकरणका अधिकतर काम चालीस सालमें पूरा कर लिया। पश्चिममें अुसकी धीमी गतिका कारण पूजीवाद नही था, परतु यह था कि वहा यत्रो और प्रक्रियाओका आविष्कार करना पडा और अिससे पहले विज्ञानकी प्रगति करनी पडी। रूसकी तेज प्रगतिका बडा कारण यह था कि जिन यत्रो और प्रक्रियाओंका पहले आविष्कार हो चुका था वे अुसे तैयार मिल गये और विज्ञानके बारेमें भी यही बात हुअी। जापानने पूजीवादकी छत्रछायामें अुद्योगोंका विकास पश्चिमसे भी तेज गतिसे किया। क्योंकि जापानको पहलेसे विकसित विज्ञान, मशीनें और प्रक्रियाअें तैयार मिल गअी। जापानकी गति रूससे मन्द थी, क्योंकि अुसने रूससे बहुत पहले यह काम शुरू किया, जब विज्ञान और शिल्प-विज्ञानका अितना अधिक विकास नही हुआ था। जापानकी मन्द गतिका कारण यह भी था कि अुसकी प्राकृतिक साधन-

सम्पत्ति रूसमें बहुत कम थी। अुसे अपनी जरूरतका प्राय सारा कोयला, लोहा और कपास बाहरसे मगाना पडता था। अुद्योगीकरणमें अेक और जरूरी बात, जो समय लेती है, वैज्ञानिको, अिजीनियरो, रसायनशास्त्रियो और दूसरे विशेषज्ञोकी शिक्षा और तालीमकी होती है।

भारतको बडे पैमाने पर अुद्योगीकरण करनेकी जरूरत रूसके बाद महसूस हुअी। चूंकि १९१७ के बाद, रूसके अिस दिशामें प्रबल प्रयत्न करनेके बाद, समग्र शिल्प-विज्ञानका अितना अधिक विकास हो गया है कि भारत अत्यत पूर्णताको प्राप्त यत्रो और प्रक्रियाओको अपना कर बहुत लाभ अुठा सकता है और अिस बारेमें रूससे अधिक तेज प्रगति कर सकता है। भारतकी प्राकृतिक साधन-सम्पत्ति कदाचित् जितनी विशाल या अितनी पूर्ण नही है जितनी रूसकी है, परन्तु जापानसे वह कही अधिक विशाल और विविध है। अिस सम्बन्धमें तुलनात्मक आकडे तो अुपलब्ध नही है, लेकिन मेरे खयालसे रूसने १९१७ में प्र[illegible] अपने यहा अुद्योगीकरण शुरू किया अुस समय अुसके पास जितने तालीम पाये हुअे वैज्ञानिक, अिजीनियर वगैरा थे, बहुत सभव है भारतके पास अिस समय स्वतत्र रूपमें भी और जनसख्याके हिसाबसे भी अुनसे कही अधिक तालीम पाये हुअे वैज्ञानिक, अिजीनियर, रसायनशास्त्री और दूसरे यत्र-विशारद हो। भारतको पश्चिमसे भी कुछ आर्थिक और शिल्प-विज्ञान सम्बन्धी सहायता मिल सकती है, जो रूसको नही मिली थी।

अिन सब कारणोसे मेरा खयाल है कि अगर भारत अुद्योगीकरण करने पर तुला हुआ हो, तो वह अुसमें वही गति ला सकता है जो सत्तारूढ लोग चाहते है। और यह काम वह साम्यवादको अपनाये बिना भी कर सकता है। भारतकी प्रगतिके लिअे साम्यवाद जरूरी नही है। यह बात अिस पुस्तकके अतिम परिच्छेदमें और भी विस्तारसे समझाअी जायगी।

सामाजिक अुपद्रवका सामना किये बिना प्राप्त कर सकता है। भारतवर्ष स्वाधीनताके पहले ९ वर्षोंमें ही आलस्य और बाधक रीति-रिवाजो पर काबू पानेकी सकल्प-शक्ति और ताकत अपनेमें पैदा कर चुका है। शिक्षाके क्षेत्रमें गुणवत्ताकी दृष्टिसे अुसने बडी प्रगति की है। अुसने भूमि-सम्बन्धी कानूनोमें और भूमिके स्वामित्वके सम्बन्धमें सुधार करनेके लिअे कुछ कदम अुठाये है। मुझे मालूम नही कि पैसेके लेनदेन और खेती-सम्बन्धी कर्जके बारेमें क्या क्या सुधार हो चुके हैं। भारतने समाजको और खास तौर पर नौजवानोको रचनात्मक कामोमें लगानेके सकल्प और सामर्थ्यका परिचय दिया है। असफलताअें और भूले तो अनेक हुअी हैं और बहुतोको भारतकी अुन्नतिकी गति भी काफी तेज नही मालूम होती, परतु ये दोष तो समाजकी किसी भी प्रणालीमें होते ही हैं।

मेरे खयालसे भारतीय जनता गाधीजीके बताये हुअे मार्ग पर कायम रहकर दुनियाके साम्यवादी और गैर-साम्यवादी सभी राष्ट्रोंमें अधिक सम्मान प्राप्त कर सकेगी और स्वाभिमानका अधिक विकास करेगी। अगर वह शुद्ध पूजीवाद या शुद्ध साम्यवादको अपनायेगी तो यह बात नही होगी। गाधीजीका मार्ग अपनानेसे मुझे विश्वास है कि बेकारी भी घटेगी, आम जनताके अन्न-वस्त्रमें तेजीके साथ वृद्धि होगी और वह यह महसूस करेगी कि सच्ची प्रगति हो रही है और आगे भी होती रहेगी।

साम्यवादका मूल्याकन

१९१७ से लेकर १९५७ तकके अितिहासने यह बता दिया है कि कमसे कम रूसी साम्यवाद अेक अैसी आर्थिक और राजनीतिक प्रणाली सिद्ध हुआ है जिसमें टिकनेकी शक्ति है। परन्तु रूसमें, जहा जनसख्या अन्न-अुत्पादनके साथ होड नही लगाती, जहा सुरक्षित जगल अितने विशाल हैं और जहा कठोर तानाशाही शासन रहा है, यह प्रणाली टिकनेवाली साबित हुअी है, अिससे यह सिद्ध नही होता कि वह अन्यत्र भी स्थायी रूपसे टिकनेवाली साबित होगी। चीनी साम्यवाद

शायद सफल हो सकता है। परन्तु अभी हम निश्चित नही कह सकते। कुछ दिशाओंमें, जैसे अूपर कहा गया है, साम्यवादने बडी प्रगति की है। अन्य दिशाओंमें, जैसे अपने ही लोगो पर और अपने आश्रित राष्ट्रो पर बडे पैमाने पर अत्याचार और हिंसा करके, वह भयकर रूपमे पीछे चला गया है। कअी बातोमे वह पूजीवादसे न तो अच्छा है, न बुरा। पूजीवाद और साम्यवाद दोनो मान लेते है कि भौतिक पदार्थोका अुत्पादन और अुपभोग जीवन और सभ्यताका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण लक्ष्य है। जितने दिन पूजीवाद टिका है अुतने दिन साम्यवाद टिक सकेगा या नही, यह कोअी नही कह सकता। मुझे विश्वास है कि अुसमें परिवर्तन होगा।

जैसा अूपर बताया गया है, साम्यवाद और पूजीवादमे अितनी समानतायें है कि मेरे खयालसे साम्यवाद सभ्यता और संस्कृतिके अस्तित्वके लिअे अुतना ही बडा खतरा है जितना पूजीवाद है। मानव-जाति और मानव-संस्कृतिके बारेमे दीर्घ दृष्टिसे विचार किया जाय, तो मुझे पूजीवाद और साम्यवाद दोनो ही महान भूले मालूम होती है। अिसलिअे मेरी समझमें किसी बुद्धिमान भारतीयके सामने दोनोमें से अेकका चुनाव करनेका सवाल हो, तो बुद्धिमत्ता अिसीमे है कि वह दोनोको अस्वीकार कर दे। क्योंकि अुसके सामने दो तीन और विकल्प है।

मैंने पूजीवादके बनिस्बत साम्यवादकी अधिक चर्चा की है। यह अनिवार्य है। क्योंकि दोनोमें से पूजीवाद अधिक पुराना है, अिसलिअे अुसने अपना सच्चा स्वरूप और परिणाम अधिक पूरे रूपमें प्रकट कर दिये है। अिसलिअे अुसके मूल्योंके बारेमें कोअी निर्णय करना अधिक आसान है। साम्यवादके अनेक गूढार्थ अभी तक प्रकट नही हुअे है। अिस कारण अुसके मूल्यांकनके लिअे जरूरी है कि अुसकी सम्भावनाओंकी तुलना और तौल किया जाय और अुसके सिद्धान्तोंकी अधिक पूर्ण रूपसे परीक्षा की जाय।

४

समाजवाद

साम्यवाद और समाजवादके बीचका सैद्धान्तिक अन्तर स्पष्ट नहीं है। दोनोका सम्बन्ध मुख्यत राजनीति, अर्थशास्त्र और सामाजिक प्रक्रियाओंके साथ है। अुनका विकास कअी यूरोपियनोंकी विचारणामें हुआ था, परतु अिस सिद्धान्तका सबसे स्पष्ट और पूर्ण निरूपण पहले-पहल मार्क्स और अेंजल्सकी रचनाओमें हुआ। रूसमें 'साम्यवाद' शब्दका और अुसके विशेषणोका साम्यवादी दलके सिवा राज्य-सविधानमें या अन्य सरकारी दस्तावेजोमें अुपयोग नही किया गया है। सरकारका अधिकृत नाम साम्यवादी रूस नही है। अुसका नाम है समाजवादी सोवियट गणतत्रोका सघ। रूसी लोग कहते हैं कि साम्यवादकी स्थापना तभी होगी जब वर्ग-विहीन समाज स्थापित हो जायगा। अुससे पहले सब-कुछ समाजवाद है।

परतु मेरी मान्यता है कि रूसके सिवा अन्यत्र सामान्य कल्पना यह है कि साम्यवादियोका यह विश्वास है कि सामाजिक क्रान्तिमें हिंसाका प्रयोग होना ही चाहिये और क्रान्तिकारी सरकारके लिअे धोखेबाजी, विश्वासघात और विशाल पैमाने पर हिंसा न केवल अुचित ही है, बल्कि अनिवार्य और आवश्यक भी है। वे मानते हैं कि वर्ग-विहीन समाजकी स्थापनाके सग्राममें अमर्यादित हिंसा और धोखेबाजीका अुपयोग सर्वथा अुचित है।

अिसके विपरीत, समाजवादियोका यह विश्वास है कि मूलभूत सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन शान्तिपूर्वक समझा-बुझाकर ही हो सकते हैं और होने चाहिये, और समाजवादी अपने वक्तव्यो और कार्योंमें सत्यका अुपयोग करनेके लिअे अपनेको वचन-बद्ध समझते हैं। जैसा फेनर ब्रॉकवेने कहा है "समाजवादी आदर्श भ्रातृभाव, सेवा, पारस्परिक

विश्वास, स्वतंत्रता और व्यक्तित्वका आदर प्रगट करता है।" मैक्स ओस्टमैनने समाजवादको अैसा समाज बताया है, जिसमें स्पर्धाकी भावना पर पारस्परिक सहायताकी भावनाका प्रभुत्व होता है। अन्य बातोमें समाजवादी अुद्देश्य साम्यवादके अुद्देश्योसे मिलते-जुलते हैं। दोनोका प्रधान अुद्देश्य वर्ग-विहीन समाजकी स्थापना है, और समाजवादियोके लिअे अिनका मुख्य साधन अुत्पादनके साधनोका स्वामित्व राज्यके हाथोमें शान्तिपूर्वक सौंप देना है। यहा मैं समाजवाद शब्दका अिसी अर्थमें प्रयोग करूगा।

अिंग्लैण्डका समाजवाद मार्क्सके अविच्छिन्न प्रमाणभूत माने जानेवाले कट्टर सिद्धान्तोसे बहुत दूर तक अलग हो गया है। भारतमें प्रजा समाज-वादी पार्टी औद्योगिक कारखानो पर राज्यके स्वामित्वकी हिमायत करती है, फिर भी वह विकेन्द्रित ग्राम-जीवनमें, अहिंसामें और प्रजातंत्रमें विश्वास रखती है। गाधीजी भी यह मानते थे कि राष्ट्रके लिअे जो भी बड़े अुद्योग आवश्यक हो अुन पर राज्यका स्वामित्व होना चाहिये तथा राज्य द्वारा अुनका सचालन खानगी नफेके लिअे नही, परन्तु सारी प्रजाके हितके लिअे होना चाहिये। गाधीजी और मार्क्स दोनोको गरीबोके दुःखो और अुनके साथ होनेवाले अन्यायोसे गहरी वेदना हुआी थी। मार्क्समें जिसके फलस्वरूप सत्ताधारियोके प्रति क्रोध और घृणा पैदा हुआी।

भारतके लिअे समाजवाद क्या कर सकता है?

चूंकि समाजवादका अर्थ साधन-सम्पत्ति और अुत्पादनके साधनोंका विशाल पैमाने पर किया जानेवाला संगठन ही नहीं बल्कि राष्ट्रव्यापी संगठन है, अिसलिअे मुझे भय है कि समाजवादमें भी अिस प्रकारके सत्ताके केन्द्रीकरण और नौकरशाहीकी नाशकारी बरबादियोंका अुतना ही दूषित प्रभाव होगा जितना साम्यवादमें होता है — अर्थात् अधिक लोग गरीबोंकी पीठ पर सवार होंगे। और यद्यपि मैं यह महसूस करता हूं कि राज्य द्वारा बड़े कारखानोंका विकास और संचालन करना हो तो नियोजनकी आवश्यकता है, फिर भी जीवनको केवल मुट्ठीभर बड़े आदमियोंके बनाये हुअे अेक ही सांचेमें ढालना मानव-बुद्धि और आत्माको कुंठित करनेवाला सिद्ध हो सकता है। अिस खतरेको स्वीकार करना ही चाहिये और किसी न किसी तरह अुससे रक्षा करनी चाहिये।

परंतु यदि अैसे केन्द्रीकरणको कुछ ही बातों तक सीमित रखा जाय तो खतरा बहुत कम हो जायगा, और मुझे आशा है कि बाकीके खतरोंका सामना समय समय पर सामूहिक सत्याग्रह द्वारा किया जा सकता है। जहां तक असैनिक हिंसाके खतरोंकी बात है, अुदारतर व्याख्यावाले समाजवादमें साम्यवादकी अपेक्षा वे खतरे निश्चित रूपसे कम होंगे। रही बात आन्तर-राष्ट्रीय युद्धकी, सो समाजवादियोंके शान्तिके पक्षमें कुछ भी दावे हों, सारे यूरोप और ग्रेट ब्रिटेनमें समाजवादी या अर्ध-समाजवादी सरकारों और पार्टियोंकी कारगुजारी यह रही है कि अुन्होंने युद्धका अुतना ही अुत्साहपूर्वक समर्थन किया है जितना किसी भी साम्यवादी या पूंजीपतिने किया है। राज्य पर अुनके जोर देनेसे यह अनिवार्य हो जाता है। मुझे आशा है कि भारतीय समाजवादी अिस कमजोरीसे बच सकेंगे। अिस निबंधके शुरूमें जिन अन्य पांच बड़े खतरोंका अुल्लेख किया गया है वे और शायद पूंजीवादके तरह हानिकारक परिणाम भी कायम रहेंगे और समाजवाद अुनका अुपाय पूंजीवाद या साम्यवादकी अपेक्षा ज्यादा अच्छा नहीं कर सकेगा।

समाजवादका समझदारीभरा प्रयोग

जिन अगो पर राज्यके स्वामित्व, व्यवस्था या नियत्रणका नियम समझदारीके साथ लागू किया जा सकता है वे ये है

(१) पानीके समस्त साधनोकी रक्षा और नियत्रण। अिन साधनोमें नदिया, झीले, बाध, सिंचाअीके साधन, जलागार, जमीनके भीतरका पानी (कुअें और पाताल-कुअें) और नहरे आती है। अिनके साथ ही जगलोकी रक्षा और नियत्रण अिस तरह हो कि अुनकी पैदावार हमेशा अेकसी बनी रहे।

(२) वन-अुद्योगोकी व्यवस्थाकी स्थापना और देखभाल। वन-अुत्पादनसे सबधित सारे अुद्योगोंका भौगोलिक अेकीकरण अनिवार्य बनाना।

(३) किसी हद तक अमेरिकन भूमि-सरक्षण सस्थाकी पद्धतिसे जमीनकी रक्षा करना। अिनके लिअे लोक-शिक्षणकी व्यवस्था की जाय और किसानोको खेतीकी अुचित पद्धतिया अपनानेके लिअे प्रोत्साहन दिया जाय। ये पद्धतिया है अूची-नीची भूमिकी जुताअी, टेकरियो पर स्थित समतल भूमिमें खेती, जमीनकी पतली लम्बी पट्टियोमें खेती, कम्पोस्ट खाद बनाना, अैसा खाद बनानेमें मैलेका अुपयोग, अुचित ढगसे बदल बदलकर फसलें पैदा करना, बीजका अधिक सावधानीसे चुनाव करना, ओंधनके लिअे जल्दी बढनेवाले वृक्ष लगाना, जगलोंके भीतर या आसपास गाय-भैसो या बकरियोके चरने पर पूरा प्रतिबन्ध लगाना, आदि।

(४) खास तौर पर पहाडी ढालो पर और सडकोके किनारे किनारे फलोंके अधिक वृक्ष लगाना और दूसरी फसलें देनेवाले वृक्ष लगाना।

(५) रेलें।

राज्यो, जिलो और नगरपालिकाओके बीच हो। अेक सिरेसे दूसरे सिरे तक जानेवाली कुछ लम्बी सडकोकी रक्षा और देखरेखका पूरा भार केन्द्रीय सरकार पर हो।

(७) तमाम कोयलेकी जमीनो और जमीनके भीतर पाये जानेवाले पेट्रोलका स्वामित्व। अिनके सचालनकी व्यवस्था खानगी लोगोको पट्टे पर दी जा सकती है।

(८) टेलीफोन, तार और डाककी व्यवस्था।

(९) राज्य सरकारो या नगरपालिकाओके स्वामित्वमें और अुन्हीके द्वारा चलाये जानेवाले विद्युत्-शक्ति पैदा करनेवाले कारखाने और अुन्हे जगह जगह पहुचानेवाली लाअिनें।

(१०) सार्वजनिक स्वास्थ्यके कुछ अुपाय, जैसे मलेरिया-नियत्रण और छूतकी बीमारियोका नियत्रण। खुराक पर होनेवाली अैसी यात्रिक अथवा रासायनिक प्रक्रियाओको रोकना जो खाद्य-पदार्थोको निर्जीव बनाती है और अुनके पोषक तत्त्वोको नष्ट करती है, और खाद्य-पदार्थोमे हानिकारक रक्षक तत्त्व या दूसरे रासायनिक पदार्थोकी मिलावटको रोकना।

चीनमें नदियोके आसपासकी जमीन और पहाडी जगलोंके नियत्रणकी दीर्घदृष्टि न होनेके कारण ही पिछली कअी सदियो तक भयकर बाढे आअी, भारी बरबादी और प्राणहानि हुअी और देशकी प्रजा बडी हद तक गरीब रही। अिस प्रकारका नियत्रण न रहनेसे पश्चिमी अेशियामें भी अैसा ही नतीजा हुआ। अमरीकामे भी अिस तरहकी गलतियोके अैसे परिणाम जल्दी ही आनेवाले है, अगर अुन्हे तुरन्त रोका न गया। प्रसिद्ध टी० वी० अे० योजना अिस तरहकी हानियाको रोकनेका अेक प्रारभिक प्रयत्न है। भारत चाहे तो टी० वी० अे० योजना से पाठ लेकर अुससे ज्यादा अच्छी योजना बना सकता है। भारतके लिअे अितना समाजवाद जरूरी है। भारतीय जनता भारतकी भूमि और पानीकी अधिक हानिका खतरा नही अुठा सकती।

जहा तक जमीनकी रक्षाके अुपायोका सम्बन्ध है, वे अवश्य कृषिके वतमान विभागोकी प्रवृत्तियोके साथ जुडे हुअे है और फिर भी कुछ भिन्न है, जैसे किसी कारखानेमें अुत्पादन और सभालकी क्रियाये भिन्न भिन्न होती है। प्राकृतिक साधन-सम्पत्तिकी रक्षाके सम्बन्धमें व्यक्तिके हितोसे समाजके हित अवश्य ही अधिक महत्त्वपूर्ण है।

राज्यके स्वामित्व और नियत्रणके अधिकाश विषय अैसे है, जो अपने स्वभावसे ही अेकाधिकारके ढगके है। अिनका सफल सचालन बहुत बडे पैमाने पर ही किया जा सकता है। यह सच है कि अमरीकामें रेल, तार, टेलीफोन, कोयले और पेट्रोलकी जमीने और बिजलीघर खानगी कम्पनियोके अधिकारमें है और वे ही वैज्ञानिक दक्षताके साथ अुनका सचालन भी करती है। परन्तु जिससे समाजको अक्सर बडा नुकसान अुठाना पडता है। टेलीफोन और तारके सिवा समाजको नुकसान पहुचाकर खानगी मालिको द्वारा जिस प्रकार जो दौलत कमाअी जाती है वह निन्दनीय है। अिन अुद्योगोमें अेकाधिकारवाली खानगी सस्थाये वैज्ञानिक और टेकनिकल कुशलतासे काम कर सकती है, फिर भी भारत अुन्हे अिन अुद्योगोका सचालन करने दे यह ठीक नही। सौभाग्यसे भारतीय राष्ट्रका पहले ही अपने रेल, तार और डाक-विभाग पर अधिकार है। ब्रिटेन और स्वीडनकी रेडियो और टेलिवीजन-नियत्रणकी प्रणाली बुद्धिमत्तापूर्ण मालूम होती है, यद्यपि गैर-सरकारी लोगोके अधिकार और सचालनवाले समाचारपत्रोकी तरह गैर-सरकारी ब्राडकास्टिगकी व्यवस्था भी अधिक मात्रामें होनी चाहिये।

राज्यो, जिलो और नगरपालिकाओंके बीच हो। अेक सिरेसे दूसरे सिरे तक जानेवाली कुछ लम्बी सडकोंकी रक्षा और देखरेखका पूरा भार केन्द्रीय सरकार पर हो।

(७) तमाम कोयलेकी जमीनो और जमीनके भीतर पाये जानेवाले पेट्रोलका स्वामित्व। अिनके सचालनकी व्यवस्था खानगी लोगोको पट्टे पर दी जा सकती है।

(८) टेलीफोन, तार और डाककी व्यवस्था।

(९) राज्य सरकारो या नगरपालिकाओंके स्वामित्वमें और अुन्हीके द्वारा चलाये जानेवाले विद्युत्-शक्ति पैदा करनेवाले कारखाने और अुन्हे जगह जगह पहुचानेवाली लाअिनें।

(१०) सार्वजनिक स्वास्थ्यके कुछ अुपाय, जैसे मलेरिया-नियत्रण और छूतकी बीमारियोका नियत्रण। खुराक पर होनेवाली अैसी यान्त्रिक अथवा रासायनिक प्रक्रियाओंको रोकना जो खाद्य-पदार्थोंको निर्जीव बनाती हैं और अुनके पोषक तत्त्वोको नष्ट करती हैं, और खाद्य-पदार्थोंमें हानिकारक रक्षक तत्त्वो या दूसरे रासायनिक पदार्थोंकी मिलावटको रोकना।

चीनमें नदियोंके आसपासकी जमीन और पहाडी जगलोके नियत्रणकी दीर्घदृष्टि न होनेके कारण ही पिछली कअी सदियो तक भयकर बाढें आअी, भारी बरबादी और प्राणहानि हुअी और देशकी प्रजा बडी हद तक गरीब रही। अिस प्रकारका नियत्रण न रहनेसे पश्चिमी अेशियामें भी अैसा ही नतीजा हुआ। अमरीकामें भी अिस तरहकी गलतियोके अैसे परिणाम जल्दी ही आनेवाले हैं, अगर अुन्हे तुरन्त रोका न गया। प्रसिद्ध टी० वी० अे० योजना अिस तरहकी हानियोको रोकनेका अेक प्रारभिक प्रयत्न है। भारत चाहे तो टी० वी० अे० योजना से पाठ लेकर अुससे ज्यादा अच्छी योजना बना सकता है। भारतके लिअे अितना समाजवाद जरूरी है। भारतीय जनता भारतकी भूमि और पानीकी अधिक हानिका खतरा नही अुठा सकती।

जहा तक जमीनकी रक्षाके अुपायोका सम्बन्ध है, वे अवश्य कृषिके वर्तमान विभागोकी प्रवृत्तियोके साथ जुडे हुअे है और फिर भी कुछ भिन्न है, जैसे किसी कारखानेमें अुत्पादन और सभालकी क्रियाये भिन्न भिन्न होती है। प्राकृतिक साधन-सम्पत्तिकी रक्षाके सम्बन्धमे व्यक्तिके हितोसे समाजके हित अवश्य ही अधिक महत्त्वपूर्ण है।

राज्यके स्वामित्व और नियत्रणके अधिकाश विषय अैसे है, जो अपने स्वभावसे ही अेकाधिकारके ढगके है। जिनका सफल सचालन बहुत बडे पैमाने पर ही किया जा सकता है। यह सच है कि अमरीकामें रेल, तार, टेलीफोन, कोयले और पेट्रोलकी जमीने और बिजलीघर खानगी कम्पनियोके अधिकारमें है और वे ही वैज्ञानिक दक्षताके साथ अुनका सचालन भी करती है। परन्तु अिससे समाजको अकसर बडा नुकसान अुठाना पडता है। टेलीफोन और तारके सिवा समाजको नुकसान पहुचाकर खानगी मालिको द्वारा अिस प्रकार जो दौलत कमाओी जाती है वह निन्दनीय है। अिन अुद्योगोंमें अेकाधिकारवाली खानगी कम्पनिया वैज्ञानिक और टेक्निकल कुशलतासे काम कर सकती है, अिसलिये भारत अुन्हें अिन अुद्योगोंका सचालन करने दे यह ठीक नहीं। सौभाग्यसे भारतीय राष्ट्रका पहले ही अपने रेल, तार और डाक-विभाग पर अधिकार है। ब्रिटेन और स्वीडनकी रेडियो और टेलिवीजन-नियत्रणकी प्रणाली बुद्धिमत्तापूर्ण मालूम होती है, यद्यपि गैर-सरकारी लोगोंके अधिकार और सचालनवाले समाचारपत्रोंकी तरह गैर-सरकारी ब्रॉडकास्टिंगकी व्यवस्था भी अधिक मात्रामें होनी चाहिये।

५

भारत-सरकारका कार्यक्रम

जैसा मैंने अिस निबन्धके शुरूमें कहा है, हम किसी साफ पट्टी पर लिखना आरम्भ नही कर रहे हैं। अब (१९५७ में) भारतमें पूजीवादी अुद्योगवाद स्थापित हो चुका है, मजबूतीसे जम गया है और बढ रहा है। सरकार द्वारा स्थापित, सचालित या नियत्रित तथा अुसके स्वामित्व और देखरेखमें काफी अुद्योग चल रहे हैं। अिनमें यातायात, बाबो, बिजली पैदा करनेवाले कारखानो और सिचाअीकी नहरोका समावेश होता है। सरकार अैसे दूसरे काम भी चला रही है और नये कामोकी योजना भी बना रही है।

गाधीजीके कार्यक्रमकी चर्चा आरभ करनेसे पहले हम भारत-सरकारके कार्यक्रम पर विचार कर ले। वह पूजीवाद, समाजवाद और अेक अश तक गाधीजीके कार्यक्रमका दिलचस्प मिश्रण है। वह अेक प्रबल और साहसपूर्ण प्रयत्न है।

यहा पहली या दूसरी पचवर्षीय योजनाओकी पूरी रूपरेखा या अुनके अन्तर्गत हाथमें लिये जानेवाले कार्योंका क्रम देनेकी कोशिश न करके कार्यक्रमको जैसा मैं समझता हू अुसके अनुसार अुसका सार लगभग अिस प्रकार दिया जा सकता है

१ नीचेके अुपायो द्वारा खेतीका अुत्पादन बढाना

(क) बडे बडे बाध बाधना और सिचाअीके काम खोलना,

(ख) सेवार वगैरासे भरी जमीनको साफ करनेके लिअे ट्रेक्टर और खेतीकी दूसरी भारी मशीनें काममें लेना और जहा सभव हो वहा दूसरी जमीनोमें खेती करना,

(ग) रासायनिक खादोका प्रयोग बढाना,

(घ) अच्छे बीजोंके चुनावको प्रोत्साहन देना,

(ङ) बदल बदल कर फसले पैदा करनेकी सुधरी हुई पद्धतिको प्रोत्साहन देना,

(च) कम्पोस्ट खाद बनानेको प्रोत्साहन देना,

(छ) जमीनका कटाव रोकना,

(ज) पशुओंकी नसल और खुराक सुधारना तथा दूधपूर्तिकी व्यवस्थामें सुधार करना,

(झ) कानून द्वारा भूमिके स्वामित्व, भूमिके वितरण और भूमिकरमें सुधार करना,

(ञ) खेती-सम्बन्धी तकावी, कर्ज आदि देनेकी पद्धतिमें कानून द्वारा सुधार करना,

२ बडे पैमाने पर उद्योगीकरण करना, जिस

५ जमीन पर जनसख्याका दबाव घटाने और प्रत्येक भारतवासीको पूरा भोजन दे सकनेके लिअे सतति-नियमन अथवा परिवार-नियोजनको बढावा देना।

६ सफाअी और दवा-दारूकी व्यवस्थामें सुधार करना।

हम अपनी चर्चामें अिन बातो पर विस्तारसे विचार करेगे।

बडे बडे बाध और सिंचाअीकी नहरें

विस्तृत नवीन भूमिमें खुराक पैदा करनेके लिअे सिंचाअीके साधन मुहैया करनेमें भारतके बडे बडे बाधोंने आश्चर्यजनक काम किया है। और ज्यादा बांध बाधकर सरकार बुद्धिमानी ही कर रही है। भारतमें सिंचाअीकी चार करोड अस्सी लाख (लगभग ५ करोड) अेकड जमीन है। यह ससारके अन्य किसी भी देशसे अधिक है। यह अुसकी कुल खेतीकी जमीनका १९ प्रतिशत है। भारतमें ६० हजार मीलसे अधिक सिंचाअीकी नहरे हैं और वे नदियोका ६ प्रतिशत पानी काममें लेती है। यह सब अच्छी बात है।

परन्तु हमें अिस खतरेको याद रखना होगा कि ये बाध लगभग पैंतीस वर्षके बाद सभवत मिट्टीसे भर जायेगे। जैसा मैंने अूपर कहा, सयुक्त राज्य अमरीकाके सैकडो जल-भण्डारोका यही हाल हुआ है। जापानके कृत्रिम जल-भडारोकी १९५० में जाच की गअी थी। वहा ५४ मे से २४ जल-भण्डार आधेसे अधिक मिट्टीसे भर गये थे। अठारह सालमें अिन चौबीस जल-भण्डारोकी पानी सगह करनेकी क्षमता औसतन् ७३ प्रतिशत घट गअी थी। पुअर्टो रीको और लकामें भी यही बात हुअी। और यदि सिंचाअीकी जमीन पर पानी नालियो द्वारा अच्छी तरह बहता न रहे और वह सूख न जाय, तो जमीनमें सिंचाअीका पानी भरे रहनेसे क्षार जम सकते हैं और वह बेकार बन सकती है। अिस प्रकार सिंचाअीके लिअे जमीनको प्राकृतिक या कृत्रिम रीतिसे सुखानेकी और सतत सावधानी और देखरेख रखनेकी जरूरत होती है। अिसके अलावा, बाधोंसे न तो बाधके अूपरके भागकी जमीनका कटाव रुकता या नियत्रित होता है और न बाधके नीचे पानीसे होनेवाला जमीनका कटाव रुकता या नियत्रित होता है।

जल-भण्डारोंमें मिट्टी न भर जाये जिसके लिअे बांधके अुपरके भागमें स्थित सारी गिरिमालामें जंगलोंका काफी विकास करना चाहिये तथा जमीन-कटावको रोकनेके अन्य अुपायोंका भी विकास करना चाहिये।

अधिक अच्छी खेती

जैसा कि सब जानते हैं, गांधीजीकी मुख्य दिलचस्पी किसानोंकी गरीबी दूर करनेमें थी। यहां अिस बातको अलग रख दें कि वे किन तरीकोंको पसन्द करते और पहले किन बातों पर जोर देते, फिर भी मैं मानता हूं कि सरकारी या खानगी संस्थाओंके अुन प्रयत्नोंका वे समर्थन करते, और अुनके अनुयायियोंको भी अैसे प्रयत्नोंका समर्थन करना चाहिये, जिनसे खेतीकी पैदावारकी — भले खाद्यान्नकी हो या कपास और सन जैसी फसलोंकी — निश्चित और स्थायी तौर पर बढ़ती हो।

पर होना चाहिये। ससारभरके कृपि-मम्बन्धी आकडे यह मिद्ध करते है कि प्रति अेकड अन्नकी अधिकमे अधिक मात्रा मशीनो द्वारा की जानेवाली खेतीमे नही पैदा होती, परन्तु हाथके कुशल श्रममे पैदा होती है। भारतका लक्ष्य प्रति अेकड अधिक अुत्पादन ही होना चाहिये, क्योकि ज्यादामे ज्यादा कुल अुत्पादन अिसी तरह सभव हो सकता है।

खेतीके काममें काफी मशीनो और रासायनिक खादोका अुपयोग करने पर भी सयुक्त राज्य अमरीकामें गेहू या दूसरी फसलोंके अुत्पादनका प्रति अेकड औसत बहुत अूचा नही है। १९४०–४४ के वर्षोमें गेहूका औसत अुत्पादन सयुक्त राज्य अमरीकामें प्रति अेकड १७ १ बुशल था, १९४४ से १९५३ के अुत्पादनका औसत १६ ८ बुशल प्रति अेकड था। युद्धसे पहले १९३५–३९ में यह औसत सिर्फ १३ २ बुशल था। ये आकडे अिग्लैंड और पश्चिम यूरोपके प्रति अेकड गेहूके अुत्पादनकी अपेक्षा कही ज्यादा नीचे हैं। सयुक्त राष्ट्रसघकी खुराक और खेती-सम्बधी सस्थाके खुराक और खेतीके आकडोवाली १९५५ की वार्पिक पुस्तकके अनुसार १९५२–५३ मे गेहूका प्रति अेकड अुत्पादन डेन्मार्कमें ६० ५ बुशल था, हॉलैंडमें ५९ ३ बुशल, बेल्जियममें ५१ ३ बुशल, अिग्लैंडमें ४२ ४ बुशल, पश्चिम जर्मनीमें ४१ ० बुशल और न्यूज़ीलैंडमें ३५ ५ बुशल। जापान और चीन (कमसे कम चीनी साम्यवादी क्रान्ति तक) लगभग पूरी तरहसे हाथ-मेहनत पर निर्भर थे। परन्तु अुसी वर्ष चीनका प्रति अेकड गेहूका अुत्पादन १५ ० बुशल (लगभग अमरीकाके बराबर) था और जापानका ३१ ७ बुशल था। मिस्रमें भी अुस समय गेहूका अुत्पादन प्रति अेकड २७ ५ बुशल था। अुस वर्ष भारतका गेहूका अुत्पादन प्रति अेकड केवल ९ ७ बुशल था। स्पष्ट है कि भारतकी जमीन और खेतीके तरीको पर ध्यान देनेकी जरूरत है। सयुक्त राज्य अमरीकामें मशीनोसे खेती होनेके कारण खेतीके प्रति मजदूरके हिसाबसे अूचा अुत्पादन जरूर होता है। परन्तु अुसके विशाल कुल अुत्पादनका कारण अुसका प्रति अेकड अूचा अुत्पादन नही है, बल्कि खेतीकी कुल जमीनके असख्य अेकड अुसका कारण हैं।

कम्पोस्ट खाद बनाना

गांधीजी स्वदेशी पर, देशी साधनोंसे धन बढ़ाने पर बड़ा जोर देते थे। सर अल्बर्ट हावर्डने, जो पूसाके कृषि-अनुसंधान कार्यके भूतपूर्व सञ्चालक थे, कम्पोस्ट खाद बनाने और सजीव खादकी मददसे खेती करनेके बारेमें अेक बड़े आन्दोलनका विकास किया था। अुन्होंने भारतीय किसानोंके कम्पोस्ट खाद बनानेके तरीके देखकर अपना यह कार्य शुरू किया था।

कुशलतासे कम्पोस्ट खाद बनानेकी बातको खूब प्रोत्साहन दिया जाना चाहिये। लकड़ीके अभावमें सूखा गोबर ईंधनके तौर पर काममें लेनेके दीर्घकालीन रिवाजके कारण भारतकी औसत जमीनमें सजीव द्रव्यकी बुरी तरह कमी हो गयी है। जिससे जमीनका अुपजाअूपन घट जाता है और अन्नका अुत्पादन मात्रा और गुण दोनोंकी दृष्टिसे घट जाता है। रासायनिक खादोंका प्रयोग किया जाय या न किया जाय, लेकिन सजीव पदार्थ जमीनको स्वस्थ और अुपजाअू बनाये रखनेके लिए जरूरी हैं।

चीजोंको अुपयोगी चीजोंमें बदला जा सकता है। अैसा कम्पोस्ट खाद बनाना स्वच्छताका भी अेक बड़ा साधन होगा।

फलोंके पेड़

सड़कोंके दोनों किनारों पर और अैसी पहाड़ियोंके सहारे, जहां जमीनके बहुत ढालू और पथरीली होनेके कारण हल नहीं चल सकता, फलोंके पेड़ अधिक लगाकर भारतका अन्न-अुत्पादन बहुत बढ़ाया जा सकता है।

खेतीकी बड़ी मशीनोंका क्या हो?

पिछले तीस वर्षोंमें अुत्तर अमरीकाने खेतीकी बड़ी और भारी मशीनोंका अुपयोग बहुत बढ़ा लिया है। वह विशाल मात्रामें अनाज पैदा करता है। यह मात्रा लोगोंकी खपतसे अधिक होती है। और यह अुत्पादन गत तीस वर्षोंमें २० प्रतिशत बढ़ गया है। ट्रेक्टरों और खेतीकी दूसरी बड़ी मशीनोंके कारण बहुत ही थोड़े लोगोंकी मददसे विशाल भूमि-खंडोंमें खेती करना और फसल काटना संभव हो गया है। थोड़ेसे समयमें बड़े बड़े अिलाकोंमें जुताअी हो गअी है। संयुक्त राज्य अमरीका और कनाडाने मिल कर अिन वर्षोंमें संसारको जहाजों द्वारा भेजे जानेवाले कुल अन्नका ७५ प्रतिशत अन्न पैदा किया है। फिर भी जैसा अूपर कहा गया है, संयुक्त राज्य अमरीकाके अितने बड़े अन्न-अुत्पादनका कारण प्रति अेकड़ अूंचा अुत्पादन नहीं, बल्कि खेतीकी जमीनका विशाल क्षेत्र है। भारतमें अुतने विशाल क्षेत्रमें खेती नहीं होती।

अधिक मात्रामें यांत्रिक खेती भारतके लिअे लाभकारी नहीं होगी

खेतीकी बड़ी मशीनोंके मुख्य नुकसान ये हैं

(१) मशीनें महंगी हैं ट्रेक्टर मुख्यतः जुताअीका काम करते हैं और बैलोंका स्थान लेते हैं। खेतमें अुन्हें अुपयोगी बनानेके लिअे दूसरे भारी फौलादके हलों तथा सामानकी जरूरत होती है। ट्रेक्टर और खेतीकी दूसरी सारी बड़ी मशीनें बहुत महंगी होती हैं। अेक अमरीकी ट्रेक्टर पर

१०,००० या अधिक रुपये खर्च होते हैं। अिसी तरह फौलादका दूसरा बड़ा सामान भी कीमती होता है। ट्रेक्टरोंके सिवा और सब मशीनें साल भरमें केवल तीनसे पांच सप्ताहके लिअे ही जुताओ और कटाओीके समय काम आती हैं। बाकी समय वे बेकार पड़ी रहती हैं। लेकिन अिन पर जंग चढ़ता रहता है और अुनका अूपरका खर्च तो चढ़ता ही रहता है। किसी कारखानेका व्यवस्थापक किसी कीमती मशीनको सालमें दस महीने बेकार नहीं पड़ा रहने दे सकता। अक्सर अेक अमरीकी खेतकी जमीनकी कीमतसे अुनकी मशीनोंकी कीमत ज्यादा होती है। किसी भारतीय गांवके किसान अिन मशीनोंको सहकारी आधार पर भी काममें लें तो बहुत थोड़े गांव अैसा करनेकी शक्ति रखते हैं। अलबत्ता, सरकार ये मशीनें रख सकती है और किसानोंको किराये पर दे सकती है। परन्तु किसी भी क्षेत्रके सभी किसानोंको अुनकी [illegible]।

(४) **मरम्मत आदिकी कठिनाअियां** टूट-फूट और मरम्मतकी आवश्यकता तो अनिवार्य रूपमें होगी ही। अमरीकामें प्रत्येक गांव और कस्बेमें अेक मरम्मत-घर होता है, जिसमें अतिरिक्त पुर्जे रहते हैं। भारतमें अैसा नहीं है। अधिकांश भारतीय गांवोंमें कोअी मशीनका काम जाननेवाला यांत्रिक भी नहीं होता। बड़े शहरोंसे मरम्मतके लिअे पुर्जे मंगानेका मतलब होगा कअी रोजका विलम्ब। आम तौर पर ये मरम्मतें जुताअी या कटाअीके अैसे नाजुक मौके पर जरूरी होती हैं, जब देरका अर्थ फसलकी हानि होती है।

(५) **ट्रैक्टर बैलों जैसे अुपयोगी नहीं** ट्रैक्टर गोबर पैदा नहीं करते, बैलोंकी तरह अपनी चोटोंकी मरम्मत खुद नहीं कर लेते और बूढ़े होने पर अुनका काम संभालनेवाले अुनके बच्चे नहीं होते। गोबर भारतमें जमीनके अुपजाअूपनको टिकाये रखने और अुसके सुधारके लिअे सजीव पदार्थका काम करता है और अीधनका महत्त्वपूर्ण साधन है।

(६) **ट्रैक्टरोंकी भारी शक्ति अेक प्रलोभन है** ट्रैक्टरोंकी भारी शक्ति जमीनके अच्छी तरह सूखनेसे पहले ही भारी चिकनी मिट्टीवाली धरतीको जोतनेके लिअे किसानोंको ललचाती है। जब जमीन गीली हो तभी फौलादी तख्तेवाले हलोंसे चिकनी मिट्टीवाली धरती जोती जाती है, तो अुसके सख्त ढेले बन जाते हैं और हलका तलवा मिट्टीमें धंस कर धरतीकी अैसी 'सख्त तह' बना देता है जिसमें पौधोंकी जड़ें घुस नहीं सकतीं, और अैसी तह कअी साल तक बनी रहती है। जुताअी अेक कला है और अुसके लिअे लम्बा अनुभव चाहिये। मेरे खयालसे औजारोंका अितना बड़ा परिवर्तन भारतके लिअे खतरनाक होगा।

(७) **भारी मशीनें 'सख्त तह' बनाती हैं** ट्रैक्टरों और दूसरी भारी फौलादी मशीनोंके खेतों पर चलनेसे कुछ ही सालके बाद, हलकी रेतीली धरतीके सिवा, हर तरहकी जमीनमें अुपरोक्त 'सख्त तह' पैदा हो जाती है। 'सख्त तह' केवल पौधोंकी जड़ोंको ही जमीनमें प्रवेश करनेसे नहीं रोकती, वह पानीको भी बहुत धीरे धीरे सोखती है।

अिससे पानी जमीनके अपर ही अूपर बना रहता है, जिससे जमीन कटती है और क्षारवाली बन जाती है।

(८) ट्रेक्टर बहुत गहरी जुताअी करनेको ललचाते हैं फौलादी हलोंके साथ अुपयोग किये जानेवाले ट्रेक्टरोंकी भारी ताकत किसानोंको बहुत गहरी जुताअी करनेको ललचाती है। जिससे जमीनके अूपरकी हरियाली अितनी नीची और गहरी चली जाती है कि वहां अुसे हवा बहुत कम मिलती है। अिसलिअे वह जल्दी न सड़कर अकसर अेक खट्टी बदबूदार तह बनाती है, जो अगली फसलोंके लिअे नुकसानदेह होती है।

तीन-चौथाअी अूपरी मिट्टीका सफाया हो जायगा। यह कोअी सयोग-मात्र नही है कि खेतीमें मशीनोके अुपयोगकी वृद्धिके साथ साथ अमरीकामें धरतीका कटाव बढा है। वास्तवमें मशीनोसे खेती करनेकी पद्धति अच्छी या सफल मालूम नही होती। अिसके सिवा, स्विट्जरलैण्ड, पश्चिम जर्मनी और फ्रासमें, जहा अमरीकी ढगके हल और ट्रैक्टर जारी किये गये हैं, धरती-कटावकी समस्या अैसी हो चली है, जिसका सरकारी कर्मचारियोंको कोअी हल नही सूझ रहा है। जो पद्धतिया पूरे सालमें बराबर बटी हुअी सौम्य बरसात और समशीतोष्ण आबहवावाले देशोंमें लगातार सफल होती हैं, वे ही मौसमी बरसातवाले तथा अुष्ण-कटिबन्धवाले देशोंमें लागू की जाय तो खतरनाक साबित होगी। यूरोपकी पद्धतिया भी जब अमरीकी परिस्थितियोमें काममें ली गअी तो अुनसे वहाकी जमीनको बहुत नुकसान पहुचा। खेतीकी बडी बडी मशीनें ब्रिटिश पूर्व अफ्रीकामें मूगफलीकी योजनाको बचा नही सकी।

(१०) **विविध फसलें अुगाना कठिन होता है** चूकि खेतीकी बडी और शक्तिशाली मशीनें बडे बडे फार्मों पर ही अच्छा काम देती हैं, अिसलिअे वे विशाल क्षेत्रोमें अेक ही फसल पकानेकी वृत्तिको बढावा देती है। अिसे अेक-फसली खेती कहते है। विशालकाय खेतोमें अेक ही फसल अुगाना विनाशकारी कीडो और पौधोंके रोगोको निमत्रण देना है। ये दोनो अमरीकामें विशाल पैमाने पर पाये जाते हैं। १९५१ में कैली-फोर्निया विश्वविद्यालयके कृषि-महाविद्यालयके डीन अेम० बी० फ्रीबॉनने सान फ्रासिस्कोमें नेशनल अेग्रीकल्चरल केमिकल अेसोसिअेशनके समक्ष कहा था "रासायनिक पदार्थोंके अिस्तेमालके बावजूद कीडा और फसलके रोगोसे होनेवाली हानि लगभग ४ अरब डॉलरकी है, सुर्मा और पौधोकी दूसरी बीमारियोसे होनेवाला नुकसान दूसरे ४ अरब डॉलरका है।

(११) **यान्त्रिक खेती और रोजगार** यह मान लिया जाय कि अमरीकामें खेतीकी बडी और शक्तिशाली मशीनोंके अुपयोगसे काम जल्दी

पूरा होता है और काफी श्रमकी बचत होती है, तो भी भारतमे जरूरत मजदूर कम करके बेरोजगारी बढ़ानेकी नही, परन्तु लोगोके लिअे काम जुटानेकी और साथ ही अुनके लिअे अधिक अन्न अुपजानेकी है। अगर अधिक अन्न अधिक बेकारी पैदा करके ही अुपजाया जा सकता हो, तो जो सरकार असा करती है वह शायद अपनी ही कब्र खोदती है। अमरीकामे आबादी अितनी कम घनी है और लोग अपनी जीवन-पद्धतियोंके बारेमें अितने आत्म-सन्तोषी हैं कि बहुतसे अमरीकी किसान अभी तक यह सोचते हैं कि अपनी धरतीका रस-कस वे जी भरकर चूस सकते हैं। लेकिन भारतकी स्थिति भिन्न है। वह अपनी धरतीको और अधिक घटिया बनाना बरदाश्त नहीं कर सकता। अुसे केवल अपनी धरतीका अुपजाअूपन कायम ही नही रखना है बल्कि अुसे बढ़ाना और तात्कालिक आवश्यकताओंके साथ साथ भविष्यकी आवश्यकताओंका भी खयाल करना है।

जलवायु, भूमि-वितरण और जनसख्या सम्बन्धी भारतीय परिस्थितिके लिअे बैलोंसे चलनेवाले लकडीके देशी हल अुत्तम है। वे सस्ते है, वे अत्यधिक धरतीको धूपमें तपनेके लिअे खुली नही करते, वे धरती पर 'सख्त तह' पैदा नहीं करते, वे जमीनको अुतनी ही ढीली करके हवा देते है जितना जरूरी हो, वे किसानकी मनोवृत्ति, अुसकी आर्थिक परिस्थिति और शक्तिके साधनोंके अनुकूल हैं। अिस प्रकारकी जुताअीसे मिट्टीके सूक्ष्म जीवाणु सुरक्षित रहते है और अिसलिअे धरतीका अुपजाअूपन सुरक्षित रहता है। साथ ही बैलोका मलमूत्र जब कचरेके खादमें मिलाया जाता है तो अुससे भूमिकी अुर्वरतामें वृद्धि होती है।

किसानोको यह प्रयोग करके बताना चाहिये कि कैसे पहाडियोंके अूपर और नीचेकी ओर हल चलानेसे धरतीका कटाव पैदा होता है और जमीनके ढालसे आडी जुताअी करनेसे धरतीका कटाव रुकता है।

मैंने किसीको यह कहते सुना है कि खेतीके ट्रेक्टरोंको काममें न लेना, गाधीजीके अधिकाश कार्यक्रमकी तरह, सदियो "पीछे चले जाना" होगा, और पीछे तो हम जा ही नही सकते। मेरा अुत्तर यह है कि पीछे जानेवाला कार्यक्रम गाधीजीका नही, परन्तु पूजीवादी अुद्योगवाद और शिल्प-विज्ञानका तथा यान्त्रिक खेतीका है। जैसा कि पूजीवादके परिच्छेदमें पहले सिद्ध किया गया है, पूजीवादी शिल्प-विज्ञान सभी महाद्वीपोंकी धरतीकी अूपरी मिट्टीको नष्ट कर रहा है, ससारको फिरसे दरिद्रता, भुखमरी और मरुभूमियोंकी ओर ढकेल रहा है तथा अैसे युगोकी ओर ले जा रहा है जब धरतीका अूपरी स्तर बना ही नही था, जब कोअी शिल्प-विज्ञान नही था और जब किसी मनुष्यकी भी हस्ती नही थी। अगर आपको अिसमें कोअी शक हो तो धरतीके कटाव पर खास तौर पर बेनेट, ब्राअुन, कारहार्ट, कोलिस, डेल अेण्ड कार्टर, जैक अेण्ड व्हाअिट, ऑसबॉर्न, सिअर्स और वॉग्टकी पुस्तकें पढिये। पूजीवादी शिल्प-विज्ञान और अुद्योगवाद भी पीछे जा रहे हैं, क्योंकि — जैसा अेल्टन मेयोकी पुस्तक साफ बताती है — वे छोटे छोटे श्रमजीवी समूहोंको लगातार नष्ट

है। वे दो चीजें हैं हाअिड्रोजन बमका प्रयोग, और निरतर होनेवाला तेज धरती-कटाव तथा जनसख्याकी तेज वृद्धि।

'मनुष्य पीछे नही जा सकता' — अिस वचनमे आपका यह मतलब हो कि वह अपनी मशीनोको खोना नहीं चाहता या अपने शिल्प-विज्ञानको बदलना भी नहीं चाहता, तो मैं आपसे बिलकुल सहमत हू। परतु फिर भी अितिहासकी कूच और प्राकृतिक साधनोकी समाप्ति अुसे अिसके लिअे मजबूर कर सकती हैं। अलबत्ता, काल-प्रवाह पीछे नही लौट सकता, परतु मानव-जातिकी विचारधारा तो पीछेकी ओर लौट सकती है। परिवर्तन अेक चीज है, प्रगति दूसरी। जैसा बर्ट्रण्ड रसेल बताते हैं, परिवर्तन अेक वैज्ञानिक शब्द है, जब कि प्रगतिमें नैतिक अर्थ निहित है। बेशक, परिवर्तन आधुनिक शिल्प-विज्ञानका अभिन्न अग होता है, परन्तु वह सब आवश्यक तौर पर प्रगति नही होता। कन्फ्यूशियसकी यह कहावत याद रखिये "जो अेक भूल करता है और अुसे माननेसे अिनकार करता है, वह दूसरी भूल करता है।" सभव है कि आधुनिक शिल्प-विज्ञानवेत्ताओ और अुनके हिमायतियोका भी यही हाल हो।

प्राचीन शिल्प-विज्ञानकी कुछ चीजें आज भी अुपयोगी हैं, अुदाहरणार्थ, सिंचाअी (जैसे मोहेंजो-दडो और बेबीलोनमें), अीट-निर्माण, हथौडा, कुल्हाडी और बसूला — जो पाषाण-युगकी चीजें है। चक्र, जो आधुनिक यत्रोका अितना बडा अग है, का आविष्कार हजारो वर्ष पूर्व हुआ था। यह विश्वास करनेके लिअे काफी कारण हैं कि शिल्प-विज्ञानके अर्थमें भी गाधीजीका समूचा कार्यक्रम — हाथ-कताअी, ग्रामोद्योग, बुनियादी तालीम आदि — हमें पीछे नहीं ले जाता है। परन्तु वह सदाचार और शिल्प-विज्ञान दोनोकी दृष्टिसे जो कुछ वाछनीय है अुसकी रक्षाका अेक ठोस प्रयत्न है।

रासायनिक खादोका क्या हो?

अच्छा, अगर पश्चिमी ढगकी खेतीकी मशीनें भारतके लिअे अुतनी कारगर या फायदेमद नही हैं जितनी कि पहले-पहल वे दिखाअी देती

करनेवाली दवाअसे मम्बव रखनेवाले खेतीके खर्च वढते जाते हैं। केवल ६० प्रकारके कीडोके कारण अमरीकामें होनेवाली हानिका जो अदाज लगाया गया, वह १,६०१,५२७ डॉलर वार्पिक तक पहुचती है। ये आकडे १९३८ में अमरीकाके कृपि-विभागके जे० अे० हिमन्लोपने अेकत्र किये थे। यहा कीडो और पौवोकी वीमारीमे होनेवाली हानिके अुम ताजे हिसावको भी देख लीजिये, जो खेतीकी मशीनोमे सबधित चर्चामें अूपर दिया गया है। कीडो और पौवोकी वीमारिया वढनेका कुछ कारण तो अेक-फसली खेती है और कुछ कारण रासायनिक खाद हैं।

कम्पोस्ट खादकी बात फिरसे

रासायनिक खादोंसे कम्पोस्ट खाद धरतीके लिअे क्यो अधिक लाभदायक है, अिसका अेक महत्त्वपूर्ण कारण यह है कि अच्छे कम्पोस्ट खादमें बहुतायतसे पैदा होनेवाले सूक्ष्म जीवाणु मिट्टीके भीतरकी रेत और पत्थरोंमें से वे खनिज द्रव्य अलग कर लेते हैं जिनकी पौधोको जरूरत होती है और अुन्हे सजीव घोलोंके रूपमें बदलकर पौधोकी जडोके चूसनेके लिअे अुपलब्ध कर देते हैं। और खनिज पदार्थोंके ये सजीव घोल, घुलनशील रासायनिक नाअिट्रेट तथा पोटाश क्षारोकी तरह, वर्षामें बहकर मिट्टीके वाहर नही चले जाते। और खनिज द्रव्योके अैसे सजीव घोल नही घुलनेवाले फास्फेट क्षारोंके कणोका रूप लेकर पौधोंके लिअे बेकार नही हो जाते। परन्तु जमीनमें अकसर दिये जानेवाले रासायनिक फास्फेट और सुपर-फास्फेट क्षार पौधोके लिअे बडी मात्रामें बेकार बन जाते हैं।

क्या सामूहिक खेती वाछनीय है?

अगर रूसके साम्यवादी अुदाहरण पर चल कर खेतीके यत्रीकरण और दूसरी प्रक्रियाओंको आर्थिक दृष्टिसे सफल बनाने और खेतीकी पैदावार वढानेके लिअे भारतमें किसानोकी जमीनोका जबरन सामूहीकरण करनेकी कोशिश की गअी, तो अिसके लिअे जो हिंसा जरूरी होगी और आर्थिक तथा सामाजिक जीवनमें जो अुथल-पुथल आवश्यक होगी, अुसमे मेरा विश्वास

खास स्तरकी और आपसमें बदली जा सके अैसी होती है। तापमान, नमी, रोशनी वगैराको, जहा तक अुनका सामग्री या प्रक्रियाओ पर प्रभाव पड सकता है, नियत्रणमें और समान स्थितिमें रखा जा सकता है। सारी प्रक्रियाओका समय, गति और मात्रा भी नियत्रित किये जाते है और अेकसे रखे जाते हैं।

खेतीमें सब चीजें भिन्न होती हैं। अेक खेतसे दूसरे खेतकी मिट्टी भिन्न होती है और प्राय अेक ही खेतके अलग अलग हिस्सोकी मिट्टी भी भिन्न होती है। अिसका कारण यह है कि खेतोके नीचेकी चट्टानोमे फर्क होता है, चिकनी मिट्टी, रेतीली मिट्टी और सजीव द्रव्योके अनुपातके कारण धरतीमें फर्क होता है, जमीनके कीटाणुओ और सूक्ष्म जीवाणुओके प्रकारो और मात्राओमें फर्क होता है, कीडो और अिल्लियोकी सख्यामें फर्क होता है, नमीकी मात्रामे या पानीको पकड रखनेकी और अुसे बहानेकी क्षमतामें फर्क होता है। किसान हवा, तापमान, हवाके दबाव, धूप या बरसात पर कोअी नियत्रण नही रख सकता। बीजका हरअेक दाना जीवन-शक्तिमे तथा अकुरित होनेकी शक्ति या गतिमें पूरी तरह अेकसा नही होता। ये सब अैसे तथ्य हैं जो खेतीकी हर स्थिति पर लागू होते हैं, चाहे कोअी किसान अिनका सफलतापूर्वक अुपयोग करने जितना समझदार हो या न हो।

अिन सब बातोका अर्थ यह हुआ कि किसान या खेतीके मालिकको जमीनके किसी विशेष भागकी सब बातोसे परिचित होनेके लिअे अुस पर कमसे कम ४ वर्ष तक रहना और काम करना चाहिये। अुसे मालूम होना चाहिये कि हर खेतकी जमीन अमुक फसले कितनी मात्रामें पैदा करती है और खेतीके अमुक तरीकोका अुस पर क्या असर होता है। अुसे समझना चाहिये कि केवल गोबर, कम्पोस्ट खाद या रासायनिक पदार्थोंसे ही नही बल्कि फलीदार पौधो और हरे खादके लगाने और बदल बदलकर फसले अुगानेसे भी धरती कैसे अुपजाअू बनाअी जा सकती है। अिन सारी क्रियाओका अुसे लम्बा अनुभव होना चाहिये। अुसे अिस बातका ज्ञान होना चाहिये कि अुसकी अलग अलग जमीनो पर भिन्न भिन्न ऋतुओका

और वर्षाका कैसा प्रभाव होता है। मौसमके अचानक बदल जानेके साथ अुसमें अपना कार्यक्रम अेकदम बदल देनेकी क्षमता होनी चाहिये। कुल मिलाकर खेतीकी प्रक्रियायें औद्योगिक कारखानोंकी तरह न तो यांत्रिक होती है और न यांत्रिक बनाओ जा सकती है। जब ऐसी कोशिश की जाती है तो जमीन और अुसके अुत्पादनकी मात्रा और गुण दोनोंकी दृष्टिसे हानि होती है। थोड़े अरसेके लिअे अुत्पादन बढ़ाकर भूमिके उपजाअूपनको नष्ट करना महंगा पड़ जायगा। यह हानि बहुत देरसे और अनुभवी दृष्टिवालोंके सिवा दूसरोंको शायद तुरन्त दिखाओ न दे परन्तु थोड़े समयके भीतर ही वह स्पष्ट मालूम हो जाती है और फिर उसे दूर करना मुश्किल और धीरे धीरे ही होता है।

खेतीकी जमीनोंमें सामूहिक खेती करनेसे कुछ आर्थिक और वैज्ञानिक लाभ होते हैं। किसानोंको औजार और बैल चाहिये, अुन्हें जमीन तथा फसलकी व्यवस्थाका और कुछ स्थानोंमें बेहतर सिंचाअीका ज्ञान होना चाहिये। शायद चीनकी खेतीसे सबंध रखनेवाली सहकारी समितियोंकी पद्धतिमें कुछ सुधार कर लिया जाय, तो खेतीके दोनों तरीकोंके लाभोंका समन्वय हो जाय, जिससे धरतीकी स्थायी रक्षा भी हो सकेगी और अुत्पादनके गुण और मात्राकी वृद्धि भी हो सकेगी।*

अिस प्रकार, खेतीका सफलतापूर्वक और स्थायी रूपसे यंत्रीकरण और अुद्योगीकरण नहीं किया जा सकता। कारखानेका काम अत्यन्त विभक्त और विशिष्ट प्रकारका होनेके कारण अुसमें बहुत थोड़ी बुद्धिकी या अधिकसे अधिक मर्यादित यान्त्रिक बुद्धिकी जरूरत होती है। परन्तु खेती करनेवाले किसानमें, भले ही वह मूक दिखाअी देता हो, परिस्थितिके अनुसार बदलनेवाली, व्यापक और कल्पनाशील बुद्धि होनी ही चाहिये, क्योंकि जमीनके सूक्ष्म जीवाणु संसारमें सबसे पेचीदा चीज हैं और मौसमकी हालत हमेशा बदलती रहती है। मार्क्स और लेनिन तथा अुनके अनुयायी ज्यादातर शहरी लोग थे और हैं, जिन्हें पुस्तकीय शिक्षा मिली होती है, जिन्हें खेतीका व्यक्तिगत अनुभव नहीं होता और जो अिन चीजोंको समझते भी नहीं। अिन मामलोंमें किसान कट्टर मार्क्सवादियोंसे ज्यादा बुद्धिमान होते हैं। अेक बार यह सत्य मान लिया जाय कि धरती अत्यन्त पेचीदा और असंख्य सूक्ष्म जीवाणुओंका समूह है, तो खेतीका बौद्धिक महत्त्व बहुत ज्यादा बढ़ जाता है।

धरतीका कटाव

अिस निबंधके पहले और दूसरे परिच्छेदमें धरती-कटावकी जो चर्चा की गअी है अुससे आधुनिक जगतमें अिस समस्याका महत्त्व स्पष्ट हो

* देखिये 'रिपोर्ट ऑफ अिंडियन डेलिगेशन टु चाअिना ऑन अेग्रेरियन कोऑपरेटिव्स', योजना-कमीशन, नअी दिल्ली, १९५७।

अिसीके साथ साथ गायोके गोठानो, दुग्धालयो और दूधके रखने तथा देने वगैराकी व्यवस्थामे सफाअी और स्वच्छता भी होनी चाहिये। बम्बअीके पास अैसी अेक आदर्श डेरी है भी। अैसी अनेक डेरिया होनी चाहिये। सरकार अैसी बातोको बढावा दे रही है। अिन्हे गाधीजीका आशीर्वाद जरूर मिलता।

भिन्न भिन्न प्रकारके प्राणियोके बीच फिरसे समुचित सतुलन कायम करने और भारतकी समृद्धिका निर्माण करनेके लिअे यह जरूरी होगा कि गायोकी जन्मसख्या कम की जाय और भेड-बकरियोकी जन्मसख्या या तो घटाअी जाय या अुनके चरागाहोको सख्तीसे सीमित कर दिया जाय। भेड-बकरिया गाय-भैंसो जैसे पशुओंकी अपेक्षा घास और पत्तियोको जमीनके बहुत ज्यादा नजदीक तक खा जाती है, और बकरिया बहुतसी झाडियो, पेडोकी निचली डालियो और अुगते हुअे पौधोको तो पूरे ही खा जाती हैं। अिसलिअे अत्यधिक सख्यामें अुनकी चराअीके कारण लगभग सारे छोटे पेड, झाडिया और घास नष्ट हो जाते है, यहा तक कि पहाडियो और मैदानो परसे हरियालीकी चादर बिलकुल खतम हो जाती है — अुन पर पेड-पौधोका नाम-निशान भी नही रह जाता। अिससे बरसातमें जमीन कटती है, बाढें आती है और रेगिस्तानोका विस्तार होता है।

अुदाहरणके लिअे, बिहारमें कोसी नदीके किनारे किनारे विनाशकारी बाढोंके आनेका कारण यह था कि नेपालमें, जहासे वह नदी निकलती है, बकरियोने सारे झाड-झखड, पेड-पौधे, घास-पात चरकर पहाडियोको नगा कर दिया। फिर बरसात पहाडियोकी रेत और ककड-पत्थरोको बहाकर नदीमें ले गअी, नदी अिन सबको बहाकर अपने निचले प्रवाहमें ले गअी। अिससे बिहारमें नदीका पाट अूचा हो गया। फलस्वरूप नदीमें जोरोकी बाढ आअी, अिसका पानी मैदानोमें फैला और अुसने हजारो अेकड जमीनको, फसलोको और किसानोको बरबाद कर दिया। यह नदी स्थायी रूपसे नेपालके साथ अैसी सधि करके ही काबूमें रखी जा सकती है, जिससे पहाडियोके ढाल पर फिरसे पेड-पौधे लगाये जाय और अीमानदार

करके नर-पशुओंकी वीर्य-नलिकाको बाध देनेसे यह काम हो जाता है। अुसमें बहुत थोडी और कुछ ही देरके लिअे तकलीफ होती है। अथवा पशु-चिकित्साकी अितनी-सी कुशलता भी अुपलब्ध न हो, तो अेक अैसा औजार होता है जो काटे विना ही पशुकी वीर्य-नलिकाको कुचलकर अुसे जीवन भरके लिअे नपुंसक बना देता है। अिससे भी बहुत पीडा नहीं होती और अेक दिनमें शात हो जाती है। ये क्रियायें मेरे मतमें अुसी प्रकार गायकी पवित्रताको भग नहीं करती जिस प्रकार साडोको बैल बनानेमें अिस पवित्रताका भग नहीं होता। प्राकृतिक अवस्थामें हिंसक पशुओ, शेरो, चीतो आदिके कारण पशुओंकी सख्या अुचित सख्यामें रहती है। मनुष्यने हिंसक पशुओंको निकाल दिया है, अिसलिअे ठीक सतुलन कायम रखनेके लिअे दूसरे अुपाय करने ही पड़ेंगे।

भूमिका अधिकार और वितरण

बढती हुअी जनसख्या और किसानोंकी जमीनकी भूखकी वर्तमान स्थितिमें भूमिके अधिकार और वितरण सबन्धी सुधारोंका भारतके लिअे सब महाद्वीपोंके सारे देशोंकी तरह अत्यधिक महत्त्व है।

भारतकी केन्द्रीय सरकार और राज्य-सरकारोंने कानून बनाकर भूमिके अधिकार और वितरण-सम्बधी सुधार करने और भूस्वामियोंको मुआवजा देकर अुनसे कुछ जमीन लेने और किसानोंको सौंपनेकी कोशिश की है। परन्तु अिस सुधारमें कानूनी दावोंके कारण काफी रुकावट और शासनिक कार्रवाअीमें विलम्ब तथा अन्य दोषोंके कारण थोडी रुकावट आअी है। मेरे पास अिसके निश्चित आकडे नहीं है कि किसानोंको अिस प्रकार सचमुच कितने अेकड भूमि सौंपी गअी है।

काश्तकार द्वारा खेती कराना जमीनके लिअे हानिकारक और अदक्षता बढानेवाला है

खेतीकी जमीनों पर अलग अलग किसानोंका या सहकारी ढग पर अेक अेक पूरे गावका स्वामित्व होना चाहिये। तभी जमीनकी टीक टीक

किसानोंको खेतीकी शिक्षा देनी चाहिये

भारतके पास घनी खेतीके लिअे पूरी जनशक्ति मौजूद है। अमरीकाके पास वह नही है। भारतीय किसानको खेतीसे सम्बन्ध रखनेवाली काफी शिक्षा देनी चाहिये, ताकि वह जुताअीकी अैसी पद्धतियां सीखे जिनसे जमीनका कटाव घटे, बदल बदल कर फसल लेनेकी सही पद्धति सीखे, ज्यादा अच्छे बीजका चुनाव करना जाने तथा खेती-सम्बन्धी दूसरी अनेक बाते विस्तारसे जाने। यह शिक्षा तभी सफल होगी जब वह लोकतांत्रिक सहकारी ढंग पर दी जायगी, और अुसमें समय लगेगा। संयुक्त राज्य अमरीका और साम्यवादी चीन दोनोंमे अिस प्रकारकी अुत्तम पद्धतियोंका विकास हुआ है। भारत-सरकारकी कोशिशसे चावल रोपनेका जापानी ढंग कामसे लाया जा रहा है और किसान अुसकी अुपयोगिता समझ रहे हैं। शिक्षाके अतिरिक्त किसानोंमें अुनका खोया हुआ आत्म-विश्वास और आशा भी फिरसे पैदा होना जरूरी है। अिस अुद्देश्यकी पूर्तिके लिअे चरखा अेक बडा साधन है और सरकार अुसके अुपयोगको बढावा देकर बुद्धिमानीका काम कर रही है। अिसके बारेमें अुसे अधिक अुत्साहसे काम करना चाहिये।

किसानोंको दिया जानेवाला अुधार और अुनका कर्ज

केन्द्रीय सरकार तथा राज्य-सरकारोंने किसानोंसे भारी ब्याज लेने और अुन्हे अन्यायपूर्ण ढंगसे कर्ज देनेकी बुराअीको रोकनेके लिअे, किसानोंके ऋणके भारी बोझको मिटानेके लिअे और खेतीके लिअे सही और अुचित ढंगसे अुधार मिलनेके लिअे काफी कानून बनाये है। लेकिन ताजीसे ताजी रिपोर्टोंसे पता चलता है कि ये अुपाय काफी नही हैं और बडी हद तक असफल सिद्ध हुअे हैं। यह अेक विशाल और पेचीदा समस्या हैं। गांधीवादियोंके लिअे ग्रामवासियोंकी मदद करनेका यह अेक बडा कार्यक्षेत्र है।

अुद्योगीकरण

अब हम सरकारकी अुद्योगीकरणकी योजना पर विचार करेंगे।

अुद्योगीकरणके मुख्य हेतुओंमें से अेक यह है कि जो देहाती अिस समय बेकार या अर्ध-बेकार है अुन्हे शहरों, मिलों और कारखानोंकी तरफ

सयुक्त राष्ट्रसघकी खुराक और खेती-सबवी सस्याके प्रकाशन 'दि स्टेट ऑफ फूड अेण्ड अेग्रीकल्चर, १९५५' के अनुसार चावल पैदा करनेवाले देशोमे युद्धसे पहले १९३८ में जितनी जनसख्या थी अुसकी अपेक्षा १९५१ तकमे १० करोड अधिक बढ गअी थी। अिस पुस्तकमें कहा गया है कि "दूसरे महायुद्धसे पहले अेशिया ससारका कुल ९३ प्रतिशत चावल निर्यात करता था और दूसरे देशोको २० लाख टनसे अधिक चावल निर्यात करता था अब (१९५३ में) वह चावलका आयात करनेवाला बन गया है। चूकि विश्व-व्यापारके लिअे अुपलब्ध चावल अब भी लडाअीके पहलेकी मात्राके आधेसे कम है, अिसलिअे अेशिया दूसरे अन्न भी भारी मात्रामें आयात करता है।" दूसरे महायुद्धके बादके कुछ ही वर्षोंके अनुभवसे प्रगट हो गया कि जब अन्नकी कमी हो जाती है तब अुसका निर्यात नही किया जाता, परन्तु जहा वह पैदा किया जाता है वही रखा जाता है। जब जनसख्या घनी और खुराक दुर्लभ होती है तब वह जहा पैदा होती है वही रखी जाती है। १९५१ की तरह अेशियामें ससारकी कुल खुराक के ४० प्रतिशत भागके लगभग खुराक पैदा होती है, परन्तु निर्यात वह अपनी पैदा की हुअी खुराकका लगभग २ प्रतिशत भाग ही करता है। औद्योगिक माल और अन्नके बीच चुनाव हो तो सकटके समय सभीको अन्न ही पहले चाहिये।

यह अप्रत्यक्ष रूपमें अिस बातसे सिद्ध होता है कि खेतीके अुत्पादनका आन्तर-राष्ट्रीय व्यापार अुतनी तेजीसे नही बढ रहा है जितनी तेजीसे सारी दुनियामें जनसख्या बढ रही है। १९५५ की खाद्यस्थितिके अुपरोक्त खुराक और खेती-सम्बन्धी सस्थाके सिहावलोकनमें से मैं फिर अेक अुद्धरण यहा देता हू

> "दूसरे महायुद्धके बादके समयमें खेतीके अुत्पादनके आन्तर-राष्ट्रीय व्यापारका सबसे अुल्लेखनीय पहलू शायद यह रहा है कि वह लगभग स्थगित जैसा रहा। अन्न और खाद्य-पदार्थोंका व्यापार, जो खेतीके अुत्पादनके व्यापारका सबसे बडा अग है,

जाय, तो यह नतीजा निकल सकता है कि भारतको अनिश्चित काल तक बाहरसे गेहूं नहीं मिल सकेगा।

कारखाने जमीन पर लोगोंका दबाव कितना कम करते हैं?

खेतीके आकडोंसे जाहिर होता है कि हाथसे की जानेवाली खेतीमें जब अधिकाधिक लोग काम करते हैं, तब प्रति १०० अेकडके पीछे ४ आदमी या प्रति २४ अेकडके पीछे १ आदमी काम करे वहां तक तो प्रति आदमी अुत्पादन बढता है, और अुसके बाद घटने लगता है। लेकिन जब खेतीका काम करनेवालोंकी संख्या बढती है तब प्रति १०० अेकड कुल अुत्पादन और प्रति अेकड औसत अुत्पादन भी लगातार बढता है, यद्यपि अिन वृद्धियोंकी मात्रा अधिकाधिक घटती जाती है। चीनकी घनी खेतीके जो आंकडे जॉन लॉसिग बककी पुस्तक 'लैण्ड युटिलिज़ेशन अिन चाअिना' (युनिवर्सिटीऑफ शिकागो प्रेस, १९३७) में दिये गये हैं, अुनसे प्रगट होता है कि कुल अुत्पादनकी और प्रति अेकड औसत अुत्पादनकी यह वृद्धि तब तक तो जारी रहती है जब तक प्रत्येक किसानके पास २६ अेकड जमीन होती है। प्रति किसान अिससे कम भूमि होती है तब अुत्पादनमें प्रति अेकड अेक बुशलके दसवें भागके बराबर थोडी कमी दिखाअी देती है — अर्थात् जब जमीन प्रति किसान २६ अेकडसे घटकर ११ अेकड तक रह जाती है या २१ अेकडसे घटकर १५ अेकड तक रह जाती है, तब दोनों ही सूरतोंमें अुत्पादनमें प्रति अेकड यह कमी नजर आती है। यह तो केवल गुजारेके लायक अुत्पादन कहा जायगा।

अिन तथ्योंकी चर्चा अेल्मर पेंडेलकी पुस्तक 'पापुलेशन ऑन दि लूज़' (विल्फ्रेड फंक, न्यूयॉर्क, १९५१) में हुअी है, जिसमें ये मुद्दे बताये गये हैं

अुदाहरणके लिअे, अगर हम आधे किसानोंको जमीनसे हटा कर कारखानोंके काममें लगा दें तो अिन आंकडोंसे मालूम होता है कि कुल खेतीके लायक जमीनसे अुसका कुल अुत्पादन अुस

देशमे खाद्यान्नकी कुल मात्रा बढती नहीं। भारतको भी और सब देशोकी भांति अपने ही अन्नोत्पादन पर अधिकाधिक निर्भर रहना पडेगा।

शिक्षित वर्गोको काम देना चाहिये

अुद्योगीकरणकी हिमायत सरकार अिसलिअे भी करती है कि अभी जो शिक्षित नवयुवक बेकार हैं अुनके लिअे कामकी व्यवस्था की जाय।

कोअी भी अैसा समाज, जिसमे गरीब, शोषित और दुःखी किसान तथा बडी सख्यामें बेकार, सामाजिक प्रतिष्ठा चाहनेवाले और असतुष्ट बुद्धिजीवी लोग सतत बने रहते हैं — जिन्हे अपने जीवनके महत्त्वका कोअी भान नही होता और जिनके सामने सिद्ध करनेको कोअी बडा अुद्देश्य नही होता — साम्यवाद या और किसी क्रान्तिकारी अुत्पातको निमत्रण देता है। लोगोको रुचिकर काम न दे सकनेका अर्थ है अुन्हे आत्म-सम्मान और गौरवसे वचित करना। अिससे बहुत गहरा और स्थायी रोष अुत्पन्न होता है और जब अुसमें बुद्धिशाली लोग जुड जाते हैं तो वह बहुत प्रबल हो जाता है। भारतके सामने आज यह समस्या है और यदि वह लम्बे समय तक बनी रही तो सभवत, अुससे गभीर खतरा पैदा हो सकता है।

भारतके कुछ जमीदार शायद यह सोचते हो कि किसानोमे अितनी सूझ-बूझ, आत्म-विश्वास, शक्ति, सगठनकी योग्यता और नेतृत्व नही है कि वे गभीर अुत्पात कर सकें। परन्तु लेनिन, गाधीजी, माओ, चाअू अेन लाअी और टीटोने दिखा दिया है कि जब किसानोको बुद्धिमान और अीमानदार नेतृत्व मिल जाता है तब क्या हो सकता है। बहुतसे भारतीय साम्यवादी और दुःखी तथा बेकार बुद्धिजीवी लोग समझदार और लगन-वाले है और अिस समय आत्मत्यागकी भावना तथा सर्व-साधारणके नेतृत्वकी आकाक्षा रखते हैं। भारतमें साम्यवादियोकी राजनीतिक शक्ति बढती जा रही है।

अिन दिनो घटनाचक्र तेजीसे घूम रहा है। मैंने अपने ही जीवन-कालमें छह साम्राज्योको मिटते या टूटते देखा है — पुराने चीन, पुराने रूस, आस्ट्रिया-हगरी, अिग्लैंड, फ्रास और हॉलैण्डके साम्राज्य। रोमन

भारी मशीनों और अन्य सामग्रीका अुत्पादन होगा। फिर ये कारखाने अुपभोक्ताओ — लोगों — के लिअे माल तैयार कर सकते है।

पाश्चात्य पूजीवादी अुद्योगवादके आरंभिक कालमें, खास तौर पर अिंग्लैण्डके कारखानोके मालके लिअे अुन देशोमें विशाल मडिया थी, जहा अुस समय तक अुद्योगीकरण नही हुआ था। अिसलिअे वे अुद्योगपति अपनी मडियोको हानि पहुचाये विना अपने यहाके आम लोगोका निर्दयतासे शोषण कर सके। परन्तु अब चीन और भारतमें सलामतीके साथ अैसा नही किया जा सकता। दूसरे राष्ट्रोकी तीव्र प्रतियोगिताके कारण भारत और चीनके पास अैसी विशाल बाहरी मडिया नही है। अुनकी मडिया ज्यादातर अुनके अपने ही लोगोंमें होगी। अिसलिअे भारतके अुद्योग-पतियोको गाधीजीके कार्यक्रमकी जोरदार हिमायत करना चाहिये, क्योंकि आम जनताकी क्रयशक्ति बढाने और कारखानोके मालके लिअे मडी पैदा करनेका यही अुत्तम अुपाय है।

निर्यातका माल

अुद्योगीकरणका पाचवा हेतु निर्यातके लिअे माल पैदा करना है। परन्तु यदि भारतमें खेतीकी पैदावार बढा ली जाय और अुद्योगीकरणका आन्दोलन जरा मद कर दिया जाय, तो मशीनोंके दाम चुकाने और बाहरसे बहुत बडी मात्रामें अन्न मगानेके लिअे मालका बडा निर्यात करनेकी जरूरत अुतनी नही रहेगी।

अुद्योगीकरणके और भी प्रयोजन हो सकते हैं, जिन्हे शायद मैं न देख सका होअू। अिसके पीछे पैसा बनानेकी अिच्छा तो होती ही है, यह कहनेकी जरूरत नही। केवल वाणिज्य-व्यवसायको बढानेके लिअे आकाश-पाताल अेक करनेमें तो मुझे राष्ट्रके लिअे कोअी लाभ दिखाअी नहीं देता। अुससे तो केवल मुट्ठीभर लोग ही जन-साधारणको और भारतीय सस्कृतिके जीवनको हानि पहुचा कर धन कमा सकेंगे।

शिकार बनना पडेगा। किसानो और साम्यवादियोंके अुत्पातसे बचनेके लिअे सरकार खादी और ग्रामोद्योगोंको आर्थिक मदद करके बुद्धिमत्ता दिखा रही है। मेरे खयालसे अुद्योगीकरणकी गति धीमी रखने और गाधीजीके कार्यक्रमको अधिक मजबूतीसे आगे बढानेमें ही समझदारी होगी। सरकार अुद्योगो पर जोर देती रहे तो भी मुझे आशा है कि गाधीवादी तो अपने कार्यक्रम पर सतत और अधिक दृढतासे बल देते ही रहेंगे।

अुद्योगीकरणसे किसानोको लाभ होगा?

सरकारके औद्योगिक कार्यक्रमसे यह आशा रखी जाती है कि अन्तमें किसानोको लाभ होगा, परन्तु यह स्पष्ट नही है कि पहले और लम्बे अर्से तक अिस लाभका काफी बडा भाग बैंकवाले और मौजूदा बडे अुद्योगपति क्यो न हथिया लेंगे। यह कहकर मैं भारतीय पूजीपतियोंके खिलाफ कोअी कठोर, अन्यायपूर्ण अथवा पक्षपातवाली बात नही कह रहा हू, मेरा आशय अितना ही है कि वे मनुष्य है और अिसलिअे अुन पर भी सत्ताका जहर अुतना ही असर कर सकता है जितना किसी अन्य राष्ट्र या जातिके किसी और मनुष्य पर। परमात्मा अुद्योगपतियोंके हृदयमें भी अुसी तरह निवास करते हैं जिस तरह सन्तोंके हृदयमें, परन्तु अुद्योगपतियोकी विचार करनेकी आदतें अुस भगवानके प्रगट होनेमें भारी रुकावट बन जाती है। किन्तु अुचित और दीर्घ समयके प्रोत्साहनसे भगवान वहा भी प्रकट हुअे बिना नही रह सकते।

अुद्योगवादके दूसरे खतरे

सरकारका अुद्योगीकरणका कार्यक्रम हमें सीधा अुन तेरह खतरोंकी तरफ ले जाता है, जिनका वर्णन मैंने पूजीवादी अुद्योगवाद पर चर्चा करते हुअे दूसरे परिच्छेदमें विस्तारसे किया है। क्योंकि सरकारके स्वामित्व, सचालन या निरीक्षणवाले अुद्योगोमें भी खतरे बहुत कुछ बुनियादी तौर पर होते हैं। आपकी याद ताजी करनेके लिअे मैं यहा अुन्हें फिर दोहरा दू। वे खतरे ये हैं जगलोका विनाश, धरतीका कटाव, प्राकृतिक साधन-

शिकार बनना पडेगा। किसानो और साम्यवादियोंके अुत्पातसे बचनेके लिअे सरकार खादी और ग्रामोद्योगोंको आर्थिक मदद करके बुद्धिमत्ता दिखा रही है। मेरे खयालसे अुद्योगीकरणकी गति धीमी रखने और गाधीजीके कार्यक्रमको अधिक मजबूतीसे आगे बढानेमें ही समझदारी होगी। सरकार अुद्योगो पर जोर देती रहे तो भी मुझे आशा है कि गाधीवादी तो अपने कार्यक्रम पर सतत और अधिक दृढतासे बल देते ही रहेंगे।

अुद्योगीकरणसे किसानोको लाभ होगा?

सरकारके औद्योगिक कार्यक्रमसे यह आशा रखी जाती है कि अन्तमें किसानोको लाभ होगा, परन्तु यह स्पष्ट नही है कि पहले और लम्बे अर्से तक अिस लाभका काफी बडा भाग बैंकवाले और मौजूदा बडे अुद्योगपति क्यो न हथिया लेंगे। यह कहकर मैं भारतीय पूजीपतियोंके खिलाफ कोअी कठोर, अन्यायपूर्ण अथवा पक्षपातवाली बात नही कह रहा हू, मेरा आशय अितना ही है कि वे मनुष्य है और अिसलिअे अुन पर भी सत्ताका जहर अुतना ही असर कर सकता है जितना किसी अन्य राष्ट्र या जातिके किसी और मनुष्य पर। परमात्मा अुद्योगपतियोंके हृदयमें भी अुसी तरह निवास करते हैं जिस तरह सन्तोंके हृदयमें, परन्तु अुद्योगपतियोकी विचार करनेकी आदतें अुस भगवानके प्रगट होनेमें भारी रुकावट बन जाती है। किन्तु अुचित और दीर्घ समयके प्रोत्साहनसे भगवान वहा भी प्रकट हुअे बिना नही रह सकते।

अुद्योगवादके दूसरे खतरे

सरकारका अुद्योगीकरणका कार्यक्रम हमें सीधा अुन तेरह खतरोंकी तरफ ले जाता है, जिनका वर्णन मैंने पूजीवादी अुद्योगवाद पर चर्चा करते हुअे दूसरे परिच्छेदमें विस्तारसे किया है। क्योकि सरकारके स्वामित्व, सचालन या निरीक्षणवाले अुद्योगोमें भी खतरे बहुत कुछ बुनियादी तौर पर होते हैं। आपकी याद ताजी करनेके लिअे मैं यहा अुन्हें फिर दोहरा दू। वे खतरे ये हैं जगलोका विनाश, धरतीका कटाव, प्राकृतिक साधन-

सम्पत्तिका अपव्यय, लोगोंके स्वास्थ्यको हानि पहुचाना, अुपभोक्ताओंको दूषित करना, शिक्षाको क्षति पहुचाना, अेक ही तरहके कामसे अुकताहट, अितना जल्दी जल्दी परिवर्तन करना जिसे मनुष्य हजम न कर सके, समाजकी अेकताको नष्ट करना, प्रकृति पर आक्रमण, हिसाब-किताबके सही तरीकोंका भग और नैनिकवाद।

अुद्योगवाद सीमित होना चाहिये

मैं यह नही कह रहा हू कि भारतमें अुद्योगीकरण होना ही नही चाहिये। परन्तु मेरा अनुरोध यह है कि अुस पर निश्चित और प्रबल मर्यादाअें लगाअी जाय, अुसकी दिशा अैसी होनी चाहिये जिससे प्रकृतिके साथ अुसका मेल रहे, और अुसके प्रकारोंका पुनर्विभाजन किया जाय। मैं चाहूगा कि किसी भी कारखाने, मिल या औद्योगिक प्रक्रियाओंके रासायनिक पदार्थो, रगों और कचरेसे नदी-नालोंको गदा करनेका काम बिलकुल रोक दिया जाय। मैं चाहूगा कि खाद्य-पदार्थ तैयार करनेमें जिन क्रियाओंने मानव-शरीरके लिअे आवश्यक क्षार और विटामिन (जीवन-तत्त्व) नष्ट हो जाते है अुन पर कडी पाबन्दिया लगा दी जाय। अुदाहरणार्थ, ये क्रियाअें शक्करके कारखानों, चावल कूटनेवाली मिलों और गेहूका मैदा बनानेवाले कारखानोंमें होती हैं।

प्रेसिडेन्ट ट्रूमैन द्वारा नियुक्त कच्चे मालकी नीतिसे सम्बन्ध रखनेवाले कमीशनकी रिपोर्टमें कहा गया था कि जिन देशोंमें औद्योगिक विकास हुआ है और जहा ससारकी अेक-चौथाअी आबादी निवास करती है, वहा १९५० में ससारकी खानोंसे निकलनेवाले लगभग ९५ प्रतिशत खनिज पदार्थ खर्च हुअे। परन्तु जो देश अब जल्दी जल्दी औद्योगिक विकास करना चाहते हैं और जहा ससारकी तीन-चौथाअी आबादी निवास करती है, अुन्होंने लगभग ५ प्रतिशत खर्च किये। अिस तथ्यके साथ अन्नकी मौजूदा विश्वव्यापी कमी और भारतीय कोयलेके भण्डारकी मात्रा और प्रकारोंको मिलाकर देखें, तो यह नतीजा निकलता है कि भारतीय अुद्योगीकरणका ढग अुन देशोंके ढगसे भिन्न होगा, जहा अुद्योगीकरण पहले हुआ था। हमें

यह भी विश्वास नही हो सकता कि अुद्योगीकरणकी गति आवादीके वढनेकी गतिसे ज्यादा तेज रहेगी।

भारतीय अर्थ-व्यवस्थाका आवार और भार खेती पर होना चाहिये

मेरी समझसे अेशियाकी घनी आवादीवाले देशोको अपने गुजरके लिअे काफी अन्न प्राप्त करने और अपनी सभ्यताओकी रक्षाके लिअे अपनी समग्र अर्थ-व्यवस्थाका आवार अुद्योगवाद पर न रखकर सुवरी हुअी खेती पर रखना चाहिये। डेन्मार्कने सफलतापूर्वक यही किया है। जैसे जैसे दुनियाकी आवादी वढेगी और घरतीका कटाव जारी रहेगा, वैसे वैसे घनी आवादीवाले देश खरीद कर या दानके रूपमें भी दूसरे देशोसे अधिकाधिक कम मात्रामें ही अन्न प्राप्त कर सकेंगे। मेरे अन्दाजसे थोडे ही अरसेमें दूसरे देशोके पास अितना अतिरिक्त अन्न नही वचेगा कि वे दूसरे देशोको दे सकें।

यह अेक गम्भीर स्थिति है, जिसका भारतके अुद्योगपतियो, जमीदारो और सरकारी कर्मचारियोको सामना करना होगा। अुन्हे भारतमें अैसी परिस्थिति पैदा करनी चाहिये, जिससे अच्छे अन्नका अधिकसे अधिक अुत्पादन सतत और स्थायी होता रहे। लक्ष्य यह नही होना चाहिये कि खेतीमें प्रति मजदूर अधिकसे अधिक अुत्पादन हो, परन्तु यह होना चाहिये कि प्रति अेकड़ ज्यादासे ज्यादा अुत्पादन हो। अिसीसे अधिकसे अधिक कुल अुत्पादन होता है।

आवादीसे अन्नका सबध

परन्तु दरिद्रताकी समस्या अिस वात पर निर्भर करती है कि भौतिक सामग्री और जनसख्याकी मात्राओमें क्या अनुपात है। किसी द्वीप पर अन्न, वस्त्र और मकान वहुत थोडे ही क्यो न हो, लेकिन अगर वहाके लोगोकी सख्या भी वहुत थोडी है तो सामग्री वहुतायतसे चारो ओर अुपलब्ध रहेगी और लोग आनन्दमें जीवन विता सकेंगे। अिस दृष्टान्तके लिअे मैं यह मान लेता हू कि दूसरे स्थानोंके साथ अिस द्वीपका कोअी व्यापार नही होता। परन्तु यदि अन्न, कपडे या मकानोकी तुलनामें लोग वहुत

ज्यादा हो तो वहा गरीबी होगी। अुदाहरणार्थ, सयुक्त राज्य अमरीकामें भौतिक सामग्री विशाल पैमाने पर अुपलब्ध है और मनुष्य १७ करोड हैं। अगर वहा अिन सामग्रीका वितरण न्यायपूर्ण हो तो वहा गरीबी नही होगी, क्योंकि जनसख्या अभी तक साधन-सामग्रीकी मात्राके बराबर तक नही पहुची है। लेकिन यदि जनसख्या बढती ही रही और साधन-सामग्रीका अपव्यय जारी रहा, तो वहा जल्दी नही तो कमसे कम अगले ७५ वर्षोंमें आजसे कही अधिक गरीबी हो जायगी। गरीबीके पैदा होनेमे लोगोंकी सख्याका या साधन-सामग्रीकी मात्राका महत्त्व नही होता, महत्त्व अिन दोनोंके बीचके अनुपातका होता है।

आज तक मानव-जातिने अपना सारा ध्यान समस्याके अेक पहलू पर केन्द्रित किया है — अर्थात् भौतिक पदार्थोंके अुत्पादन और वितरण पर केन्द्रित किया है।

ससारमे सब जगह धरतीका कटाव बुरी तरह बढ जाने और साथ ही जनसख्याकी व्यापक वृद्धि होनेके कारण अेक सर्वथा नअी परिस्थिति पैदा हो गअी है। अुसके भयकर परिणामोंके कारण — और अिनका वर्णन हमारी भूमिकामें किया गया है — स्वाभाविक अनिच्छा होते हुअे भी हम जनसख्याके बारेमें थोडा गभीर विचार करनेको विवश हो गये हैं। अगर हमे दरिद्रता कम करके शान्तिका अुपभोग करना है, तो हम अेक ओर अन्न तथा सामग्रीके अुत्पादन और दूसरी ओर जनसख्याके बीचके अूपर बताये सम्बन्धकी अुपेक्षा नही कर सकते। नअी परिस्थितिमें अिस सम्बन्धके दोनो पहलुओं पर विचार करके अुनका निपटारा करना होगा।

परिवार-नियोजन या सतति-नियमनकी जरूरत

प्राणीमात्रके प्रति हिन्दुओंका प्रेमभाव, जिसका प्रमाण शाकाहार है, गायकी पवित्रता है और किसी भी पशुका वध न करना है, वनस्पति-जगत, जन्तु-जगत, पशु-जगत और मनुष्य-जातिके समन्वयकी सर्वथा सही दृष्टि है। बौद्ध धर्मके सिवा और किसी भी महान धर्मकी अपेक्षा हिन्दू धर्म प्रकृतिके साथ मनुष्यके सही सम्बन्ध पर अधिक जोर देता है।

यह दुनियाके लगभग सारे देशोंसे भारतके लिअे अधिक लाभदायी है। हिन्दू धर्ममें वनस्पति, जीव-जन्तु, पशु और मनुष्य — सभी विभिन्न प्रकारके प्राणियोंके बीच अेक स्वाभाविक संतुलन और सम्बन्ध है। यदि जीवनको किसी तरह टिकाये रखना हो तो अिस सम्बन्ध और संतुलनको अिसी रूपमें बनाये रखना होगा। जब मनुष्य निरा खाद्य संग्रह करनेवाला नहीं रह गया और पशुपालक बनने लगा, तो अुसने प्राकृतिक संतुलनमें हस्तक्षेप करना शुरू किया। जब अुसने कृषिका विकास किया तो जन्म और मृत्युके प्राकृतिक संतुलनमें और भी अधिक हस्तक्षेप किया। लकड़ी काटना, हल चलाना, खाद काममें लेना, पौधे लगाना और फसल काटना — वनस्पति जगतके ‘जन्म’ और मृत्युके क्रममें हस्तक्षेप करने और अुसे नियंत्रित करनेके मार्ग ही हैं।

अब चूंकि पृथ्वी पर स्त्री-पुरुषोंकी आबादी जरूरतसे ज्यादा हो गअी है, अिसलिअे अुन्हें अपनी प्रजोत्पत्तिको नियंत्रित करने लग जाना चाहिये। अुन्हें अपनी व्यवस्था कुछ वैसी ही कर लेनी चाहिये, जैसी अुन्होंने प्रकृतिकी कर ली है। जब अुन्होंने बाह्य जगतके जीवनको अितना नियंत्रणमें रखना सीख लिया है, तो अब अपने भीतरी और बाहरी जीवन और अुसकी प्रक्रियाओं पर भी अुसी तरह नियंत्रण रखना अुन्हें सीख लेना चाहिये। जनसंख्या कम करनेके अुपायके रूपमें (और भारतमें वह कम होनी ही चाहिये) किसी न किसी तरहका परिवार-नियोजन या संतति-नियमन विशाल और बार बार पड़नेवाले अकालों, अधूरे पोषण और रोगोंकी अपेक्षा ज्यादा अच्छा है। क्योंकि अिन तीनोंके कारण दरिद्रता, दुःख, अधःपतन, निराशा और अन्तमें संस्कृति और सभ्यताका नाश आदि परिणाम पैदा होते हैं। कुछ भी हो, अिस नियंत्रणके अभावमें भारतके नर-नारी न केवल अपना और अपनी सन्तानोंका नुकसान और पतन कर रहे हैं, बल्कि अिसके द्वारा वे प्रकृतिको भी हानि पहुंचायेंगे और रेगिस्तानोंकी वृद्धि करेंगे। बिना सोचे-विचारे सन्तान पैदा करते रहना अेक प्रकारकी हिंसा और सांस्कृतिक आत्महत्या हो जाती है।

आयरलैण्डवासियोने क्या किया ?

आयरलैण्डके किसानोने साबित कर दिया कि अेक विशेष प्रकारका आत्म-सयम बडे पैमाने पर भी सभव है। आयरलैण्डमें १८४७–५२ के भयकर अकालोके बाद किसानोने अपने पादरियो और राजनीतिज्ञोकी सलाहके विपरीत विवाह करना कम कर दिया। और पहलेकी अपेक्षा वे काफी बडी अुम्रमें विवाह करने लगे। विवाह द्वारा अुन्होने अपने छोटे छोटे खेतोका अेकीकरण करना भी आरम्भ कर दिया। जिससे आम तौर पर अुनके खेत अितने बडे हो गये, जिनमे लाभदायक खेती की जा सके। आजकल आयरलैण्डमें कुआरो और बूढी कुमारिकाओकी सख्या शेष जनसख्याकी तुलनामे बहुत बडी है, जन्मसख्या यूरोपमें कमसे कम है, जनसख्या १८४५ मे लगभग आधी कम है और सम्पत्ति प्रति व्यक्ति कुछ वर्ष पहले थोडे समयके लिअे यूरोपमें अधिकसे अधिक बताअी जाती थी। मगर अिस समय १९५७ में वहा अेक लाख आदमी बेकार है, आर्थिक स्थिति गभीर बताअी जाती है और हम पढते है कि आयरलैण्डसे बाहर जाकर बसनेवालोकी वार्षिक सख्या ५० हजार तक पहुचती है। यह कहानी रॉबर्ट सी० कूक द्वारा लिखित पुस्तक 'ह्यूमन फर्टिलिटी दि मॉडर्न डायलेमा' मे कही गअी है। जन्मसख्या और अत्यधिक जनसख्याके दबावको रोकनेका कमसे कम अेक तरीका यह है, और यह ध्यान देनेकी बात है कि अिसमे सफलता स्वय किसानोकी सूझसे, कानून या सरकारी कर्मचारियोंके बिना और रोमन कैथोलिक सम्प्रदाय तथा राजनीतिज्ञोंके विरोधके बावजूद मिली। मै अिसका न तो समर्थन कर रहा हू, न विरोध कर रहा हू, अिस विषयमें मै अत्यन्त अनभिज्ञ हू। परन्तु यह अेक सत्य है, भले अुसका महत्त्व जो भी हो।

अप्रत्यक्ष सतति-नियमन

प्रत्यक्ष सतति-नियमन ही अिसका अेकमात्र अुपाय नही है। कभी अप्रत्यक्ष अुपायोसे भी जन्मसख्या कम हो जाती है। जनसख्याका अध्ययन करनेवालोको अिनमें से दो अुपाय सुविदित है। वे है शिक्षा और

भौतिक समृद्धि। ये दोनो आम तौर पर साथ साथ चलती है और अेक-दूसरेको प्रभावित करती हैं।

१९४० की अमरीकी जनगणनाकी रिपोर्टका कहना है कि जो स्त्रिया प्राथमिक शालाकी शिक्षा पूर्ण नही कर सकी अुनमें से २।। प्रतिशतके ५ वर्षसे कम अुम्रके तीन या अधिक बच्चे थे, परन्तु जो स्त्रिया कॉलेजकी स्नातिकायें बन गअी अुनमे अेक प्रतिशतमे आधी स्त्रियोंके भी अितने बच्चे नही थे। जनगणनाके आकडोंसे यह भी सिद्ध होता है कि शालाकी चार सालकी शिक्षासे अधिक शिक्षा पानेवाली स्त्रियोंमें भी जन्मसख्या घटती है और शिक्षाके हर अधिक वर्षका परिणाम अुन स्त्रियोके लिअे अधिक कम बच्चोंमें आता है। अशिक्षित और शिक्षित स्त्रियोंके बीचका जन्मसख्याका यह अन्तर अमरीकाकी गोरी और हबशी दोनो तरहकी स्त्रियो पर समान रूपसे लागू होता है। अुसी जनगणनासे प्रगट हुआ कि अेक हजार देशी गोरी अशिक्षित स्त्रियोके ३,१४५ बच्चे थे, जब कि चार-पाच वर्ष तक कॉलेजमें शिक्षा पाअी हुअी अेक हजार गोरी स्त्रियोंके केवल ७७६ बालक ही थे। अेक हजार अशिक्षित हबशी स्त्रियोके ३,३४५ बच्चे थे, परन्तु अेक हजार हबशी स्त्री-स्नातिकाओके केवल ७०१ ही बच्चे थे। यही स्थिति रोमन कैथोलिक और प्रोटेस्टेन्ट स्त्रियोंकी थी। जाति या धर्म अलग अलग होनेसे अिस बातमें फर्क नही पडता। शिक्षा जितनी अधिक होगी अुतनी ही सन्ताने कम होगी। ग्रेट ब्रिटेनमें भी यही स्थिति है, और यद्यपि दूसरे देशोके आकडे मेरे पास नही हैं, फिर भी शायद सब देशोंमें अैसा ही होगा। भारतके जन्मसख्याके आकडे, जिनका सग्रह और अध्ययन किंग्सले डेविसने किया है, यही फर्क बताते हैं, माताओंकी शिक्षासे जन्मसख्या कम हो जाती है। किन्तु अमरीकामें पिछले छह-सात वर्षोंमें मध्यम वर्गके शिक्षित विवाहित युवक-युवतियोंमें जन्मसख्या बढी है। अिसका कारण स्पष्ट नहीं है।

दूसरे अप्रत्यक्ष अुपायके बारेमें सर्वोच्च जीवन-स्तरवाले सयुक्त राज्य अमरीका, अिंग्लैण्ड, नार्वे, स्वीडन, डेन्मार्क, स्विट्जरलैण्ड, न्यूज़ीलैण्ड और

आस्ट्रेलियामें सबसे कम जन्मसंख्या है। किन्तु, जैसा अूपर बताया गया है, अमरीकामें हालमें अिसका अपवाद देखनेमें आया है। जिन देशोंमें लोग कुल मिलाकर अत्यन्त गरीब हैं, जैसे भारत, लंका, पुअेर्टो रिको, फारमोसा, जापान और मिस्र, वहां सबसे अधिक जन्मसंख्या है। यदि हमारे पास चीनकी जनगणनाके सही आंकड़े हों तो निःसन्देह वह भी अिसी श्रेणीमें आयेगा। संयुक्त राज्य अमरीकामें अपेलेशियन गिरि प्रदेशके और न्यू मेक्सिकोके पहाड़ी लोगोंमें, जो अुस देशमें सबसे गरीब वर्ग हैं, जन्मसंख्या अधिकांश पूर्वी देशोंसे भी अधिक है। अिसलिअे यह स्पष्ट है कि माता-पिताकी भौतिक सम्पन्नतासे अकसर जन्मसंख्या कम हो जाती है।

अिस तरहका भी कुछ, लेकिन वह निर्णायक नहीं है, प्रमाण है कि किसी भी प्रकारकी गहरी और दीर्घ असुरक्षितताने, चाहे वह आर्थिक हो या अधूरे पोषणसे संबन्धित हो अथवा निम्न सामाजिक स्थितिके कारण हो, जन्मसंख्या बढ़नेकी संभावना रहती है। खेतीकी किसी रस-कसहीन जमीनमें पूरी आवश्यक संख्यामें क्षार न हों या अुनका अुचित संतुलन न हो और अिस कारण अुसमें पैदा हुअे खाद्यान्नमें भी यही त्रुटि हो, तो अुसका परिणाम भी अैसी असुरक्षितताकी भावना पैदा करनेमें आ सकता है। और अुससे जन्मसंख्या बढ़ सकती है। जैसे किसी पौधेको बुरी तरह हानि पहुंचने पर अुसमें तुरन्त फल आने लगते हैं, ठीक वही स्थिति मानव-प्राणियोंकी होती दिखाओ देती है। जब परिस्थितिवश किसी मानव-समूहके समूल नष्ट होनेका खतरा पैदा हो जाता है, तब शायद जल्दी जल्दी अुनकी संख्या काफी गुनी बढ़ने लगती है।* यह अेक रस-

---

* अिस पुस्तकके प्रथम (१९५२ के) संस्करणमें मैंने ब्राज़ीलके अेक डॉक्टर जोसुअे दि कैस्ट्रोकी पुस्तकका वर्णन और सार दिया था। अुनका तर्क यह था कि जो मानव-समूह अति दरिद्रताके कारण प्रोटीनवाले खाद्य कम ले पाते हैं, अुनमें जन्मसंख्या अधिक होती है, और अिसलिअे अत्यधिक जनसंख्याका कारण आर्थिक शोषण होता है। अुसके बाद मैंने जो आलोचनायें और अधिक प्रमाण देखे हैं अुनसे मुझे यह विश्वास हो

प्रद अनुमान है, परन्तु और अधिक प्रमाणोंके बिना वह अभी सिद्ध नहीं हुआ है।

दवादारू, सफाओ और सार्वजनिक स्वास्थ्य-सम्बन्धी अुपायोंमे हमने मृत्युके काममें हस्तक्षेप किया है। चूंकि जन्म और मृत्युकी परस्पर विरोधी जोडी है, और दोनोको कुछ-कुछ साथ चलना होता है, अिसलिअे अब हमें अुतना ही हस्तक्षेप जन्मके काममें भी करना होगा।

परन्तु आजकल सतति-नियमन या परिवार-नियोजनका सारा विषय अत्यत जटिल है। अिसमें प्राणिशास्त्र, शरीर-शास्त्र, जीव-रसायन, मनोविज्ञान, भावना और कला-अभिरुचिका विचार करना पडता है। रीति-रिवाज, सदाचार, धर्म, जनसख्या, लोकमत और सरकारी नीतिका भी विचार करना पडता है। अिसकी सम्पूर्ण चर्चाके लिअे तो कअी पुस्तकें चाहिये।[1] मेरे पास न तो अितना स्थान है और न अितनी योग्यता है कि सारी बातोकी चर्चा कर सकू। मैं अितना ही कर सकता हू कि किसी

गया है कि डॉ० कैस्ट्रोकी दलीलें, जिस ढगसे अुन्होने पेश की थी, ठीक नही थी। कुछ देशोकी अधिक जन्मसख्याका कारण कम प्रोटीनवाला आहार नही रहा होगा, बल्कि अुसका कारण शायद अुनकी भूमिमें कुछ क्षारोकी कमी या क्षारोका असतुलन रहा होगा।

१ अिस विषय पर मैं जो अच्छीसे अच्छी पुस्तके जानता हू अुनमें से अेक है 'अेडेप्टिव ह्यूमन फर्टिलिटी'—लेखक पॉल अेस० हनशॉ, पी-अेच डी०, मैक-ग्रॉहिल बुक क०, न्यूयॉर्क अेण्ड लदन, १९५५। अुसमें पक्ष-विपक्षकी सभी बातोकी चर्चा शान्त, न्यायपूर्ण, सहानुभूतिपूर्ण, वैज्ञानिक और अुदार ढगसे की गअी है। दूसरी बहुत अच्छी पुस्तक है 'पापुलेशन अेण्ड प्लान्ड पेरेण्टहुड'—लेखक अेस० चन्द्रशेखर, पी-अेच० डी०, अेलन अेण्ड अन्विन, लदन, १९५५। ध्यानपूर्वक विचार करनेवाले लोग अिस विषय पर गाधीजीके निबध पढना चाहेंगे, जिनका सग्रह 'सेल्फ-रेस्ट्रेन्ट वर्सेस सेल्फ-अिडल्जेन्स' नामक अेक ही ग्रथमें किया गया है, जो नवजीवन, अहमदाबाद–१४ द्वारा प्रकाशित किया गया है।

न किसी प्रकारके सतति-नियमनके महत्त्व पर अधिकसे अधिक जोर देकर अुसके पालनका अनुरोध करू। मै माल्युसवादका नया पुजारी नही हू, अर्थात् मै प्रत्यक्ष सतति-नियमनको ही अिस ससारव्यापी समस्याका अेकमात्र हल नही मानता। परन्तु मै अुसे अिसके हलका अेक भाग और अत्यत महत्त्वपूर्ण भाग मानता हू। और भी अनेक बाते है जिनसे वाछित अुद्देश्यकी पूर्तिमें सहायता मिलेगी। परन्तु सतति-नियमन अुनमे से अति आवश्यक वस्तु है।'[1]

समस्या हल की जा सकती है

भारतकी गरीबीकी समस्याये हल करनेके लिअे कदाचित् सतति-नियमनके प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष दोनो तरहके अुपायोके व्यापक प्रयोग और परिणाम आवश्यक होगे। कुल मिलाकर भारतकी समस्याये अत्यत कठिन है, वे धीरे धीरे ही हल हो सकती है, आगे और भी कष्ट सहने होगे, परन्तु समस्याये हल की जा सकती है और की जायगी।

---

१ अिस निबन्धके प्रथम सस्करणमें मैने बृहदारण्यक अुपनिषद् — ६–४–६ और १३ का अेक अश — में सुझाये गये अुपायका अुल्लेख किया है। वह तत्त्वत वही है जिसे पश्चिममें 'सेफ पीरियड' (सुरक्षित काल) कहते है। परन्तु अुसके बाद ध्यानपूर्वक जाच करने पर वह अविश्वसनीय मालूम हुआ है।

६

विवेकपूर्ण अुद्योगवादकी सिफारिश

मेरा विश्वास है कि अेक अैसा अुद्योग है जो काफी बडा हो सकता है, परन्तु जो गाधीजीके अधिकाश सिद्धान्तोके साथ, जैसा मैंने अुन्हे समझा है, मेल खा सकता है। मेरे खयालमे अुद्योगवादके अधिकतर स्वरूपोके खिलाफ अुन्हे जितनी आपत्ति थी अुससे अिस प्रकारके अुद्योगके खिलाफ अुन्हे कम आपत्ति होती।

अपने 'खद्दरका अर्थशास्त्र' ('अिकानॉमिक्स ऑफ खद्दर'*) में, जिसे गाधीजीने पसन्द किया था और जो १९२७ मे लिखा गया था तथा बादमें १९३१ में और पुन १९४६ में सशोधित किया गया था, मैंने समझाया था कि अिजीनियरिंग और आर्थिक योजनाकी दृष्टिसे खादी बनाना सही और लाभप्रद है। अिसका अेक कारण यह है कि वह सूर्यकी शक्तिको मनुष्यके लिअे अुपयोगी बनानेका अेक अुपाय है। अधिकारपूर्ण वैज्ञानिक तथा शिल्प-विज्ञान सम्बन्धी अध्ययनके आधार पर मैंने अुसमें समझाया था कि सूर्यसे हमें प्रतिवर्ष कितनी विशाल मात्रामे प्रकाश-शक्ति मिलती है। मैंने कहा था कि विवेकशील सभ्यतायें वे हैं जो प्राचीन कालसे अेकत्रित सूर्यशक्तिकी पूजी अर्थात् कोयले और पेट्रोलके बजाय सूर्यशक्तिकी वार्षिक आय पर मुख्यत निर्भर करती है।

सूर्यशक्तिके बारेमें अुस जानकारीका कुछ सिंहावलोकन यहा हम कर लें। वह किसी भी देशमें पाअी जानेवाली या आनेवाली शक्तिकी सबसे बडी मात्रा है। वह सारी सम्पत्ति और जीवनका स्रोत है। अुस शक्तिका तुरन्त काम आनेवाला भाग मुख्यत वह है जो पृथ्वी पर पडता है। जिसका जमीन पर स्वामित्व और नियत्रण है अुसे यदि सूर्यशक्तिका

---

* नवजीवन द्वारा प्रकाशित।

अुपयोग करना आता है, तो अुसके हाथमें अुतनी सम्पत्ति ही होती है अै
समझना चाहिये।

हॉर्वर्ड विश्वविद्यालयके ज्योतिर्विद डी० अेच० मेज़ेलने सूर्यके अ
हालके अध्ययनमें कहा है कि संयुक्त राज्य अमरीकाके अक्षांश पर दोपहर
सूर्य पृथ्वीतल पर प्रति वर्गगज लगभग अेक अश्वशक्ति जितनी शवि
भेजता है। भारत पर, जो भूमध्यरेखाके अधिक निकट है, अिस शक्तिक
मात्रा अधिक पड़ती होगी। वह कहता है कि अिस हिसाबसे "२०० व
मीलके क्षेत्रको अितनी सूर्यशक्ति मिलती है, जो खर्चकी वर्तमान दर
सारी दुनियाके लिअे पूरा अीवन मुहैया कर सकती है।"

भारतकी पहली पंचवर्षीय योजनाके अनुसार भारतमें १९५१
२६ करोड ६० लाख अेकड जमीनमें खेती होती थी, ५ करोड ८० ला
अेकड जमीन पड़त थी और ९ करोड ३० लाख अेकड जमीन अैसी थ
जिसमें खेती हो सकती है परन्तु जो बेकार पडी है। अिस प्रकार कु
जमीन ४१ करोड ७० लाख अेकड थी। अेक अेकडमें ४,८४० वर्गगज हो
है। यद्यपि प्रयोगोंसे विविध परिणाम आये हैं, फिर भी मध्यम दरजेक
आंकडा लें तो कहा जा सकता है कि अेक पौधेका हरा द्रव्य सूर्यकी अे
प्रतिशत शक्तिका खुराक या तन्तुओंमें परिवर्तन करता है। अगर ह
४१ करोड ७० लाख अेकडको ४,८४० से गुणा करें, तो भारत
१,८१६,२८०,०००,००० वर्गगज काश्तके लायक जमीन होती है। अे
अश्वशक्ति प्रति वर्गगजके हिसाबसे भारतकी कुल खेतीयोग्य भूमि प
अूपरके आंकडे जितनी अश्वशक्ति पड़ती है। अिस शक्तिका अेक प्रतिश
लें तो कुल १८,१६२,८००,००० करोडसे अधिक अश्वशक्ति भारतमें सूर्य
मिलती है, जो खुराक या वनस्पतिके तन्तुओंमें बदली जा सकती है। अिस
भारतके जंगल शामिल नहीं हैं। चूंकि सूर्य-प्रकाशकी काफी मात्रा वनस्पति प
न पडकर नग्न भूमि पर पडेगी, अिसलिअे यथार्थवादी बनकर हमें अूपरोक
आंकडोंके तृतीयांशको — अर्थात् ६,०५४,२६६,६६६ अश्वशक्तिको ही व

हो सकती है। यह शक्ति १९२७ में सयुक्त राज्य अमरीकाके अुद्योगोंमें खर्च हुअी सारी शक्तिकी नौगुनीसे अधिक है। (मुझे दुख है कि अिस तुलनाके लिअे मेरे पास अिस समय अधिक ताजे आकडे नही हैं।) परन्तु अिससे यह पता लग जाता है कि भारतमें सूर्यशक्ति — स्वदेशी सम्पत्ति — कितनी विराट मात्रामें अुपलब्ध है।

सभाव्य सम्पत्तिके अिस विशाल भडारका अमरीकी प्रकृति-विशारद डोनाल्ड कुलरॉस पीअेटीने अपनी पुस्तक 'कारगोज़ अेण्ड हार्वेस्ट्स' के 'प्लाण्ट पावर' (पौधेकी शक्ति) शीर्षक प्रथम परिच्छेदमें दूसरे ढगसे वर्णन किया है

"पौधेकी शक्तिका अेक राष्ट्रके लिअे वही महत्त्व है जो अश्वशक्ति, जलशक्ति, जीवनकी शक्ति, समुद्र-शक्ति, जनशक्ति और मस्तिष्क-शक्तिका होता है। अिसी भडारके द्वारा राष्ट्रोकी स्वाधीनता और प्रभुता खरीदी जाती है। अिसे प्राप्त करनेके लिअे लोग तलवार लेकर निकल पडे हैं, और अुन पडोसियोको अुन्होने जीता है, जिनके पास अुपजाअू भूमि, बडे जगल, कीमती रग देनेवाले पौधे या रोगोका अिलाज करनेवाली जडी-बूटियोंके पेड अधिक थे। पौधोकी शक्तिने राज्योकी सीमाओंको बनाया और बिगाडा है, लोगोको आविष्कारके लिअे विशाल समुद्र-यात्राओ पर भेजा है, और बडे बडे विज्ञानोंको जन्म दिया है। पौधोकी शक्तिका अर्थ है विश्वव्यापी प्रभुता।

"प्रकृति पर प्रभुत्व प्राप्त करनेमे हम दिनोंदिन आगे बढ रहे हैं और अपनी सफलताके मदमें हम लापरवाहीसे मनुष्यके शरीर और बुद्धिबलको ही पृथ्वीके सारे सृजन-कार्यका श्रेय देते हैं। परन्तु हम अेक ही पदार्थ — वनस्पतिमें निहित हरे पदार्थ — पर पूरी तरह निर्भर हैं। अधिकाश पौधोंमें व्याप्त यह रगीन द्रव्य ससारका हरा खून है। यह वह मूक अुद्योग-भवन है, जिसमे होकर पृथ्वी, हवा और पानी जैसे निर्जीव तत्त्व गुजरते हैं और शक्कर और स्टार्च (निशास्ता) जैसे जीवनको धारण करनेवाले पदार्थोंमें

रूपमें तथा जीवनके लिअे अनिवार्य लकडी, ततुओ, टेनीन और रबरके रूपमें बदलकर बाहर निकलते हैं।

"क्योंकि जो अन्न हम खाते हैं, जो कपडे हम पहनते हैं, जो कोयला या लकडी हम अपने चूल्होंमें जलाते हैं, अुनका मूल पौधोंमें ही है। कहा जाता है कि ससारकी आधी सम्पत्ति और आधा व्यापार सीधा अिन पौधोंकी पैदावारसे होता है। हमारा मास, अून, चमडा, पशुओंके बाल, रेशम, पख, हड्डिया, जानवरोंकी चर्बी और खाद भी अुन प्राणियोंसे पैदा होते हैं, जिनका गुजर पौधों पर होता है या घास-पत्ती खानेवाले प्राणियों पर होता है।

"अुपजाअू भूगर्भमें सम्पत्तिका वह भडार छिपा है, जिसने सारे अितिहास-कालमें अुसे छीन ले जानेवालोंको सत्ता, सस्कृति और समूची अुच्च श्रेणीकी सभ्यताओंका आधार प्रदान किया है।

"पौधोंकी शक्तिके कअी स्रोत मनुष्यके अुपयोगके लिअे खुले हैं। पहले तो यह अुसके देशकी वनस्पिति है — यह वरदान जैसा है जो अुसे अुत्तराधिकारमें मिला है, जिसके लिअे अुसने बहुत कम मेहनत की है और जिसे वह खुले हाथों खर्च करता है। अुपयोगी वृक्षोंका विशाल वन अेक समृद्ध सोनेकी खान ही है।

"परन्तु प्रकृतिकी अपने-आप पैदा की हुअी विशाल सम्पत्तिके अलावा मनुष्य विचारपूर्वक खेती करके अपनी पैदावार बढा सकता है। सबसे बडी बात तो यह है कि दूसरे देशोंसे पौधोंकी नअी जातिया लाअी जाय तो अुनसे अेक क्षेत्र-विशेषको, फिर वह राजनीतिक सीमाओंसे कितना ही घिरा हुआ क्यों न हो, विविध प्रकारकी और सतत विकासशील साधन-सम्पत्ति प्राप्त होती है।"

लेखकने आगे वर्णन किया है कि किस प्रकार हॉलैण्ड जैसे छोटे देशने, जिसके पास बहुत ही थोडी प्राकृतिक साधन-सम्पत्ति है, सूर्यशक्तिके अुपयोग पर प्रभुत्व पा लिया है।

अिस सूर्यशक्तिका कुछ हिस्सा भारतकी खेतीमें पहलेसे ही काममें लिया जाता है। परन्तु निम्नलिखित ढंगसे अुस शक्तिका कहीं अधिक अुपयोग हो सकता है।

जंगलकी पैदावारका अुद्योग

लगभग पिछले तीस वर्षोमें लकडीके रसायनशास्त्रमें आश्चर्यजनक विकास हुआ है, जिससे अब लकडीके रेशोंसे नाना प्रकारके पदार्थ बनाये जा सकते हैं, जो मानव-जातिके लिअे अत्यंत अुपयोगी हैं। साधारण शहतीरों, तख्तों और कागजके अतिरिक्त लकडीसे सेल्युलोसका सामान और रेयॉन जैसे कपडे भी बनाये जा सकते हैं, प्लास्टिक जिससे तरह तरहके आकारों और गुणोंवाली (जैसे कडी, लचीली, न टूटनेवाली, घटने-बढनेवाली आदि) वस्तुअें तैयार हो सकती हैं, सख्त पुट्ठे जैसे मैसोनाअिट और बैकेलाअिट, प्लाअिवुड, मिश्रणवाली लकडी, कअी प्रकारकी शक्कर, रोज़िन, रेज़िन और लकडीकी गैस भी बनायी जा सकती है। प्लास्टिककी कअी चीजें धातुकी चीजोंके बदलेमें बहुत अच्छा काम देती हैं और अिस प्रकार धातुओंकी बचत होती है। सख्त पुट्ठे, प्लाअिवुड और मिश्र लकडी कअी बातोंमें साधारण लकडीके तख्तोंसे श्रेष्ठ होते हैं और अुनसे विविध आकारकी चादरें—जैसे ४ फुट चौडी, ८ फुट लम्बी और ¼ से ¾ अिंच मोटी चादरें—बन सकती हैं, जिन पर पानी और मौसमका असर नहीं होता और फिर भी जो काटी और चीरी जा सकती हैं। अिस प्रकार वे फर्नीचर या दीवारों और मकानोंके विभागोंके लिअे काममें आ सकती हैं और अुनसे भवन-निर्माण बडी तेजीसे हो सकता है। लकडीके घोलसे शक्करका खमीर बन सकता है, जिससे मवेशियोंके लिअे अूचे प्रोटीन तत्त्वसे पूर्ण खुराक प्राप्त होती है और चित्रकारीके रंगों और औद्योगिक घोलोंके लिअे अल्कोहॉल मिल सकता है जो मोटर गाडियों और गैसके अंजिनोंमें पेट्रोलके बदले काम आ सकता है। अन्य अुपयोगी पदार्थ, जो अिस प्रकार तैयार हो सकते हैं, मोटरके पहियोंका रासायनिक रबड, साबुन, सरेस, ग्लिसरीन, कअी रासायनिक पदार्थ तथा कारखानेके

भापके बॉयलरोंके लिअे अीधन आदि हैं। अलबत्ता, अैसे सबसे अच्छे बॉयलर स्वय जगलोंके अुत्पादनसे सम्बन्धित अुद्योगोंके स्टीम बॉयलर ही होंगे।

अिन सब बातोंका वर्णन मि० अीगन ग्लेसिंगरने दिलचस्प ढगसे किया है। वे हालमें ही सयुक्त राष्ट्रसघकी खुराक और खेती-सम्बधी सस्थाकी वन-अुत्पादन शाखाके मुखिया थे। यह वर्णन अुन्होंने अपनी पुस्तक 'दि कमिंग अेज ऑफ वुड' में किया है। वे बताते हैं कि किस प्रकार दूसरे महायुद्धमें स्वीडनने आधुनिक लकडीके रसायनशास्त्रके आविष्कारोंका अुपयोग किया। अिसके फलस्वरूप स्वीडन यूरोपका अेकमात्र अैसा देश था, जहा १९४१ की अपेक्षा १९४६ में खाद्य-पदार्थोंकी अधिक मात्रा दी जाती थी जहा घर अधिक गरम थे और अधिक गरम पानीके स्नानोंकी अनुमति दी गअी थी। अुस युद्धके दिनोंमें स्वीडनके पास ७०,००० मोटर लारिया, बसें और मुसाफिर-गाडिया थीं और १५,००० खेतीके ट्रेक्टर, नावें और खेतीकी मशीनें थीं। और अुन सबमें अुसके अपने ही जगलोंकी लकडीसे बनी चीजोंका अीधन काममें आता था।

अिस शिल्प-विज्ञानको अपनाकर भारत अधिक कपडा तैयार करके अपने शहरी लोगोंको पहना सकता है और बाहर भी भेज सकता है, अपनी मकानों और भवन-निर्माणकी समस्याओंको हल करनेके लिअे मौसमके असरसे न बिगडनेवाली रासायनिक लकडीकी बढिया बडी चादरें बना सकता है, छतोंके खास खपरैल, प्लास्टिकके पानीके नल, मवेशियोंकी खुराक और पेट्रोलकी जगह अच्छी तरह काम करनेवाला पदार्थ तथा अन्य कअी अुपयोगी वस्तुअें तैयार कर सकता है। जिससे अुसके मौजूदा आयातमें बडी कमी हो सकती है और महत्त्वपूर्ण विदेशी मुद्रामें बचत हो सकती है। ये सब चीजें सूर्य-शक्तिसे निरन्तर चालू रहनेवाली आयसे मिलती है। अिस प्रकार भारतमें जो घूप आज अितनी विशाल मात्रामें व्यर्थ नष्ट होती है अुससे विशाल सम्पत्तिका निर्माण हो सकता है।

आप कह सकते हैं कि वर्तमान सूती कपडेकी मिलें भी सूर्यशक्तिसे अुत्पन्न होनेवाला अेक पदार्थ अिस्तेमाल कर रही हैं, फिर भी भारतीय

मिलोंका विरोध करते थे। वे अैसी चीजें बना रही है, जो किसान बना सकते हैं और पुराने जमानेमें अपने लिअे हमेशा बनाया करते थे। अिस प्रकार मिले किसानोंसे अुनका अुपयोगी काम और अुनका आत्म-सम्मान छीन रही हैं। परन्तु जंगलोंके अुत्पादनका अुद्योग अनेक अैसी वस्तुअे तैयार करेगा, जिन्हे किसान अपने लिअे नही बना सकते और वृक्षोंके अुन भागोंका (अर्थात् सूर्यशक्तिका) अुपयोग करेगा जो अिस समय बेकार जाते हैं। जगलोकी पैदावारके लिअे आजकी अपेक्षा अधिक लकडी काटनेवालोंकी जरूरत होगी और अिस प्रकार यह अुद्योग किसी मजदूरका स्थान नही लेगा, न अुसे बेकार बनायेगा।

कटाअीके साधारण तरीकोंसे प्रत्येक काटे गये पेडकी ५० से ७० फीसदी लकडी नष्ट हो जाती है। परन्तु आजकल अैसी मशीनें तैयार हो गअी हैं जिन्हे जगलोंमें ले जाकर अुनसे छोटी छोटी डालियो और टहनियोंके टुकडे किये जा सकते हैं और अुन्हें आसानीसे दूसरी जगह ले जाकर अुनका गूदा बनाया जा सकता है। अिस कारणसे और रासायनिक क्रियाओंकी मददसे अब प्रत्येक काटे हुअे सारेके सारे पेडके अुपयोगी पदार्थ बनाना सभव हो गया है।

जगल अुगानेका स्थायी प्रयत्न होना चाहिये

आधुनिक कटाअीके तरीकोंसे केवल बडे वृक्षो और निकम्मे पेडोंको ही काटा जाता है और छोटे पेडोंको अधिक तेजीसे और अच्छी तरह बढनेका मौका दिया जाता है। अिस प्रकारकी विवेकपूर्ण कटाअी जगलोंको 'स्थायी अुत्पादन' के आधार पर रख देती है, जिससे वास्तवमें पुराने तरीकोंकी अपेक्षा अिस तरीकेसे अधिक लकडी पैदा होती है और हर साल स्थायी रूपसे लकडीकी अूची पैदावार चालू रहती है। मिलीजुली जातिके पेड ठीक ढगसे लगानेके कारण पेड और जगलकी धरती नीरोग रहती है। अलबत्ता, जगल लगाने और काटनेके आधुनिक अुपाय काममें नही लिये जायेंगे, तो जगलकी पैदावारके अुद्योग भारतीय जगलोंको जल्दी

मिलोंका विरोध करते थे। वे अैसी चीजें बना रही है, जो किसान बना सकते है और पुराने जमानेमें अपने लिअे हमेशा बनाया करते थे। जिस प्रकार मिले किसानोंसे अुनका अुपयोगी काम और अुनका आत्म-सम्मान छीन रही हैं। परन्तु जगलोके अुत्पादनका अुद्योग अनेक अैसी वस्तुअें तैयार करेगा, जिन्हे किसान अपने लिअे नही बना सकते और वृक्षोंके अुन भागोंका (अर्थात् सूर्यशक्तिका) अुपयोग करेगा जो जिस समय बेकार जाते हैं। जगलोंकी पैदावारके लिअे आजकी अपेक्षा अधिक लकड़ी काटनेवालोंकी जरूरत होगी और अिस प्रकार यह अुद्योग किसी मजदूरका स्थान नही लेगा, न अुसे बेकार बनायेगा।

कटाअीके साधारण तरीकोंसे प्रत्येक काटे गये पेडकी ५० से ७० फीसदी लकडी नष्ट हो जाती है। परन्तु आजकल अैसी मशीनें तैयार हो गअी है जिन्हे जगलोंमें ले जाकर अुनसे छोटी छोटी डालियो और टहनियोके टुकडे किये जा सकते हैं और अुन्हे आसानीसे दूसरी जगह ले जाकर अुनका गूदा बनाया जा सकता है। अिस कारणसे और रासायनिक क्रियाओंकी मददसे अब प्रत्येक काटे हुअे सारेके सारे पेडके अुपयोगी पदार्थ बनाना सभव हो गया है।

जगल अुगानेका स्थायी प्रयत्न होना चाहिये

आधुनिक कटाअीके तरीकोंसे केवल बडे वृक्षो और निकम्मे पेडोंको ही काटा जाता है और छोटे पेडोंको अधिक तेजीसे और अच्छी तरह बढनेका मौका दिया जाता है। अिस प्रकारकी विवेकपूर्ण कटाअी जगलोंको ‘स्थायी अुत्पादन’ के आधार पर रख देती है, जिससे वास्तवमें पुराने तरीकोंकी अपेक्षा अिस तरीकेसे अधिक लकडी पैदा होती है और हर साल स्थायी रूपसे लकडीकी अूची पैदावार चालू रहती है। मिलीजुली जातिके पेड ठीक ढगसे लगानेके कारण पेड और जगलकी धरती नीरोग रहती है। अलबत्ता, जगल लगाने और काटनेके आधुनिक अुपाय काम नही लिये जायेंगे, तो जगलकी पैदावारके अुद्योग भारतीय जगलोंको जल

काम देगा। अुससे अैसी दिशा मिल जायगी, जिसमें अुद्योग विवेकपूर्वक आगे बढ सकता है।

मैं मानता हू कि अणुशक्तिके बावजूद दुनियाके सारे देशोंको अन्तमें यह मर्यादा स्वीकार करनी होगी, क्योंकि युरेनियम धातु भी संसारमें सीमित है और अुसकी किरणोंका फैलना बडा खतरनाक है। जिस गतिसे अुद्योग-प्रधान राष्ट्र आज अीधन और कच्चा माल खर्च कर रहे हैं, अुसे देखते हुअे कदाचित् अुन्हें मेरे सुझाये हुअे प्रस्ताव पर हर तरहसे अेक शताब्दीके भीतर और बहुतसे राष्ट्रोंको तो पचास वर्षके भीतर ही आना पडेगा।

अगर अतमें सभी देशोंको अिस पर आना पडेगा और यदि भारत स्वीडनका अनुसरण करके अुसे जल्दी ही आरभ कर देता है, तो भारतकी स्थिति मजबूत होगी और वह शिल्प-विज्ञानमें अगुआ रहेगा। अगुआ वह अिसलिअे रहेगा कि भारतमें जलवायुकी विविधता बहुत होनेके कारण वह स्वीडनकी अपेक्षा अधिक प्रकारकी लकडिया पैदा कर सकता है और अपनी अुष्ण-कटिबन्धकी तेज धूप और अपने बडे आकारके कारण वह स्वीडन-की अपेक्षा अधिक तेजीसे और बहुत अधिक मात्रामें लकडी अुगा सकता है। सूर्यशक्ति पर आधार रखनेकी वजहसे अुद्योगवाद प्रतिष्ठाकी हानि अुठाये बिना या शिल्प-विज्ञानका त्याग किये बिना अन्तमें प्रकृतिके साथ मेल और सतुलन स्थापित कर सकता है।

मेरा विश्वास है कि जगलके अुत्पादन पर सारा ध्यान लगानेसे अेक और परिणाम होगा, जो मुझे शहरोंके घिचपिच जीवनके हानिकारक होनेके बारेमें गाधीजीकी मान्यताओंसे मिलता-जुलता दिखाअी देता है। अुनका खयाल था कि कारखानोंमें काम करना और गदी बस्तियोंमें रहना स्वास्थ्य और पारिवारिक जीवनके लिअे बहुत हानिकारक है।

बौद्धिक शक्ति अुन स्थानोंके आसपास केन्द्रित हो जाती है, जहा भौतिक शक्तिका अुपयोग किया जाता है। भौतिक शक्तिके मौजूदा साधन कोयला, तेल और बिजली शहरोंमें अिस्तेमाल किये जाते हैं। अिसलिअे

व्यापार और रुपये-पैसे तो वहा आ ही जाते हैं। भौतिक शक्तिके आकर्षणसे लोग वहा अिकट्ठे हो जाते हैं, और खास तौर पर नौजवान लोग गावोमे नगरोकी ओर खिच आते हैं। अिनसे गाव कगाल हो जाते हैं।

अगर भारत लकडीसे पैदा होनेवाली चीजोका विशाल पैमाने पर विकास करेगा, तो अुसके लोग सूर्यशक्तिकी विशालताको और भी स्पष्ट रूपमें अनुभव करने लगेंगे। भारतकी सूर्यशक्तिको नया रूप देनेवाले मुख्यत जगल और खेत होंगे और बुद्धिमान लोग अिसे अनुभव करने लगेंगे। अधिकाश लोगोको जगलोंमे, जगलकी पैदावारके कारखानोमें और गावोमें, जहा किसान रहते और काम करते हैं, रहनेका महत्त्व समझमें आयेगा — ये स्थान अुनके लिअे जीवनके केन्द्र बन जायेंगे। फिर तो शायद तीव्र बुद्धिवाले युवक अुन स्थानोंमें अेकत्र होनेकी ओर झुकेंगे। जगलकी पैदावारके कारखाने जगलोंके नजदीक और शहरकी गदी बस्तियोंसे दूर स्वास्थ्यप्रद वातावरणमें होंगे। जगलकी पैदावारके अैसे अनेक कार-खानोंको जगलोंके किनारे चलाना होगा, जिससे जनसख्याका बहुत केन्द्रीकरण नही होगा। बहुतसे वन-अधिकारियो, वन-रक्षको, रसायन-शास्त्रियो, पदार्थविज्ञान-शास्त्रियो, अिंजीनियरो, भवन-निर्माताओ, वस्त्र-अुद्योगके निष्णातो, सडक बनानेवालो और अन्य प्रकारके शिल्प-विज्ञानके कार्यकर्ताओंकी जरूरत होगी। अिसका परिणाम यह होगा कि शिक्षित लोगोको काम मिलेगा।

रखना चाहिये (१) जगलोकी रक्षाके मारे अगो पर अुमका पूरा नियत्रण रहे, (२) जगलकी पैदावारमे मम्त्रवित सव प्रकारके अुद्योग जगलोंके पास ही सुयोजित रूपमें सम्वद्ध किये जाय, ताकि सावन दोहराये न जाय और लकडीको अेक स्थानमे दूमरे स्थान तक लाने ले जानेमें मालका, समयका और पैमेका विगाड न हो, और (३) अिन कारखानोसे कोअी रासायनिक पदार्थ या हानिकारक निकम्मे पदार्थ नदी-नालो या हवामें न जाने दिये जाय। वृक्षोसे प्राप्त होनेवाली हर चीजका रामायनिक रूपमें या भौतिक रूपमें अुपयोग किया जाय। तमाम वन-अविकारियो, प्राणीशास्त्रियो, रसायनशास्त्रियो और दूसरे शिल्प-विज्ञान विशारदोको तैयार करनेमें समय लगेगा। परन्तु अिनमे सम्पत्तिका तथा आर्थिक और सामाजिक लाभ अितना अविक होनेकी सभावना है कि ये योजनायें जल्दी शुरू होनी चाहिये। मुझे आशा है कि वे दूसरी पचवर्षीय योजनाका अेक अग वन जायगी।

७

गांधीजीका कार्यक्रम

जिन्होंने पुस्तको द्वारा अर्थशास्त्रका अव्ययन किया है और जो अुद्योगवादके समर्थक हैं, वे सव मानते हैं कि यद्यपि गाधीजी अेक वडे सन्त और राजनीतिज्ञ थे, फिर भी अर्थशास्त्रके सब मामलोमें अुनके विचार वडे गलत थे। वे वताते हैं कि तमाम अुद्योग-प्रवान देशोमें जो अपार दौलत और रहन-सहनका अूचा स्तर है और दूसरे महायुद्धसे पहले जापानमें अुद्योगवादको जो महान सफलता मिली, वह अिस वातका पूरा, दीर्घकालीन और अनिवार्य प्रमाण है कि भारतमें और अधिक अुद्योगीकरण होना चाहिये। अेकके वाद अेक अर्थशास्त्री और समाजशास्त्री अिस वातका आग्रह करते हैं कि जिस देशमें घनी आवादी हो वहा प्रजाकी आर्थिक मुक्ति अिसीमें है कि औद्योगिक अुत्पादन वढाया जाय और लोगोको

खेतीसे हटाकर कारखानोंमें लगाया जाय। वे बताते हैं कि किस प्रकार आधुनिक शिल्प-विज्ञानने, जो अुद्योगवादका साझेदार है, खेतीकी पैदावार बहुत बढाअी है और साथ ही बहुत अधिक आदमियोंके खेतोंमें काम करनेकी जरूरतको घटाया है।

नअी बातोंसे शंकायें पैदा होती हैं

परन्तु यह राय जो कुछ वर्ष पहले बनी थी, अब संदिग्ध मालूम होती है। क्योंकि १९५७ में संसारके सामने अुस स्थितिसे सर्वथा भिन्न आर्थिक, राजनीतिक और सामाजिक स्थिति है, जो यह सिद्धान्त पहले-पहल अुत्पन्न हुआ तब थी या जब विश्वव्यापी अुद्योगीकरणकी बडी लहर शुरू हुअी तब — १९१७ में — थी। अिस सम्बन्धमें जिन नअी घटनाओंका महत्त्व है, अुनमें से कुछ मैं बता देता हूं

१ संसारकी जनसंख्या अिस समय संसारके मानव-पोषणके लिअे अुपलब्ध खाद्य-साधनोंसे अधिक है और खाद्य-साधनोंके विकासकी गतिसे जनसंख्याकी गति अधिक तेजीसे बढ रही है। करोड़ों लोग आजकल भुखमरीके किनारे पर खड़े हैं।

२ अिसलिअे अिस समय खेती अुद्योगोंसे अधिक महत्त्वपूर्ण है, अर्थात् अुसका महत्त्व अधिक वस्त्र या अधिक मकानोंसे ज्यादा है, निरे आराम और सुविधाकी चीजोंसे तो जरूर ही अुसका महत्त्व ज्यादा है।

हिंसाबलसे कमजोर राष्ट्रोंका यह शोषण संभव था। अब अगर बड़े पैमाने पर हिंसा संभव नहीं है तो गोरोंको अुन दूसरी जातियोंसे न्यायपूर्वक ही कच्चा माल लेना चाहिये, जो अपना अुद्योगीकरण कर रही हैं।

४ अिसका अर्थ यह है कि अेशिया, अफ्रीका और हिन्देशियाकी रंगीन जातियोंको जल्दी ही वह राजनीतिक सत्ता प्राप्त हो जायगी, जिसकी वे अपनी संख्याके कारण अधिकारिणी हैं।

५ सामाजिक, आर्थिक, राजनीतिक और शिक्षा-सम्बन्धी परिवर्तन आजकल तेजीसे हो रहे हैं और गरीब लोगोंके दिल और दिमाग सब जगह न्याय, अुन्नतिका अवसर, स्वाभिमान तथा मानव-गौरवकी प्राप्तिके लिअे छटपटा रहे हैं।

६ भारत पश्चिमी राष्ट्रोंसे भिन्न है — सिर्फ अिसीलिअे नहीं कि अुसके किसान अुसकी आबादीका बहुत बड़ा भाग हैं, बल्कि अिसलिअे भी कि वे भयंकर रूपमें दरिद्र हैं और अुनमें स्वास्थ्य, शक्ति, सूझ-बूझ, स्वाभिमान, आत्म-विश्वास, साहस और आशाका अत्यंत अभाव है। अुन्हें अुदासीनता और निराशामें निकालनेके लिअे पश्चिमकी अधिकांश प्रजाओंकी अपेक्षा दूसरा ही अुपाय काममें लेना होगा।

अिन छह बातोंके कारण कमसे कम यह आवश्यक हो गया है कि जो सामाजिक और आर्थिक रीति-नीति अब तक पश्चिममें काममें ली गअी है, अुसमें संशोधन किया जाय।

कार्यक्रमकी रूपरेखा

आगे बढ़नेसे पहले मैं गांधीजीके कार्यक्रमके अंग यहां गिना दूं। पहली नजरमें तो अैसा प्रतीत होता है कि अेक महान राष्ट्रकी पेचीदा समस्याओंको हल करनेके लिअे ये बहुत ही सीधे-सादे और प्रारंभिक हैं। वे अंग ये हैं

१ चरखा और खादी (हाथ-कताअी और हाथकते सूतकी हाथ-बुनाअी),

२ ग्रामोद्योग,

३ बुनियादी तालीम,

४ हरिजनों (भूतपूर्व अछूतों) का कल्याण और अुत्थान,

५ ग्राम-सफाअी,

६ किसानोंका कल्याण,

७ स्वच्छता और स्वास्थ्यके नियमोंकी शिक्षा,

८ साम्प्रदायिक अेकता (विभिन्न धर्मोंके अनुयायियोंके बीच),

९ महिलाओंका कल्याण,

१० मजदूरोंका कल्याण और संगठन,

११ सब धर्मोंका आदर,

१२ प्रौढ़शिक्षा,

१३ राष्ट्रभाषा (हिन्दी) की अुन्नति,

१४ अपनी अपनी प्रान्तीय भाषाओंका विकास,

१५ विद्यार्थियोंका कल्याण,

१६ शराबबन्दी,

१७ गोरक्षा और गो-कल्याण,

१८ पहाड़ी आदिम जातियोंकी सेवा,

जिनमें गांधी-स्मारक-निधिने बादमें ये बातें और जोड़ दी हैं

भारतकी जनसख्या

भारतकी नअी अर्थात् १९५१ की जनगणनाके अनुसार अुस समय भारतकी जनसख्या लगभग ३५ करोड ७० लाख थी। और जनगणनाके योग्य निष्णातोका अनुमान है कि १९५६ में वह लगभग ३९ करोड थी। १९५१ वाली जनगणनासे पता चला कि लगभग ८३ प्रतिशत जनसख्या देहातमे रहती है। १९५६ की जनसख्याके हिसाबसे ३२ करोड ३० लाख ७० हजार लोग गावोमे रहते है। भारतमे कुल ५५८,००० गाव है और अुनमे से लगभग ९६ प्रतिशत गावोमें प्रति गाव २,००० से कम निवासी है। अधिकाश गाववासी खेतीका काम करते है। परन्तु बहुतसे ग्रामोद्योगोमें लगे हुअे है, जैसे बढअी, जुलाहे, टोकरी बनानेवाले, कुम्हार, तेली, दर्जी वगैरा।

ग्रामवासियोकी स्थिति

ग्रामवासियोका विशाल समूह अत्यत निर्धन है। सदियोंसे विदेशी और भारतीय दोनो सत्ताधारियोने अुनका शोषण किया है। दरिद्रता, अज्ञान, कर्ज, रोग और अत्याचारने अुनमें शक्ति, अुत्साह और आत्म-सम्मान जैसी कोअी चीज नही रहने दी है। अुनमें से अधिकाश लगभग पूरी तरह निराश हो गये है। अुनकी स्थिति आज अुतनी बुरी नही है, जितनी गाधीजीके सुधार शुरू करते समय थी। फिर भी वह बहुत बुरी है।

अुसमें सुधार कैसे हो?

किन्तु गाधीजीका खयाल था कि ये लोग भलाअी और सब तरहकी सभावनाओके विशाल भण्डार हैं। अुन्हे केवल सहायता देना काफी नही होगा। अुन्हे यह बताना होगा कि वे अपनी मदद आप कैसे कर सकते है, और वह भी अपने ही अल्प साधनोसे। अपनी परम्पराओके भारके कारण, अपने गहरे हतोत्साह और अुदासीन वृत्तिके कारण और अपनी सूझ-बूझ, शक्ति और आत्म-विश्वासकी दुर्बलताके कारण अुन्हे छोटे प्रयत्नोंके लिअे ही तैयार किया जा सकता है। अिसलिअे वे धीरे धीरे ही आगे बढ सकते हैं। अुनका अज्ञान, अुनकी गरीबी और सरकारके प्रति अुनका

अविश्वास तथा प्राचीन परम्पराका बोझ अैसा था कि वे सुपरिचित देशी ग्रामीण औजारोंके सिवा दूसरे कोअी औजार काममें ले ही नहीं सकते थे। शायद गरम जलवायुकी प्रमुखताके कारण अुनकी अुदासीनता चीनके किसानोंसे अधिक है। जब करोड़ों लोगोंकी अैसी रोगी दशा हो तब केवल औजारोंके पुराने होने और अच्छा काम न देनेका प्रश्न अप्रस्तुत बन जाता है।

गांधीजीने यह समझ लिया था कि जिस चीजकी भारतके ग्रामवासियोंको सबसे ज्यादा जरूरत है वह स्वाभिमान, आशा और यह दृष्टि है कि वे अपनी ही कारीगरीसे कैसे अुन्नति कर सकते हैं।* विदेशी औजार और तरीके अुन्हें पसन्द नहीं आयेंगे। वे अुदासीनता और निराशाकी अैसी मानसिक अवस्थामें हैं, जिसमें मानसिक चिकित्सालयोंके कुछ रोगी होते हैं। मानसिक रोगोंके चिकित्सकोंको मालूम हुआ है कि अैसे रोगियोंको सीधे-सादे हाथके कामोंसे बहुत लाभ हो सकता है। अिसे काम द्वारा रोगोंकी चिकित्सा करनेकी पद्धति कहा जाता है। मनुष्यके विकासके प्रारम्भ-कालसे ही अुसके हाथोंने अुसके मन और चरित्रके विकासमें बहुत बड़ा और महत्त्वपूर्ण भाग अदा किया है।

अधिकांश मानसिक चिकित्सालयोंमें प्रचलित अैसी चिकित्सा-पद्धतिसे कभी कभी थोड़ी सुन्दर या रोचक चीजें तो तैयार हो जाती हैं, परन्तु अुनका कोअी वास्तविक आर्थिक मूल्य नहीं होता। किन्तु गरीब भारतमें बहुत सादे औजारोंसे अैसी चीजें बनाअी जा सकती हैं, जिनका सच्चा और गांववालोंके लिअे महत्त्वपूर्ण आर्थिक मूल्य हो।

अगर लोग वेकार या आधे वेकार हों और अिसलिअे अुन्हें कातनेका समय मिले, तो वे अपने कपडोंके लिअे काफी सूत बहुत थोडे खर्चमें तैयार कर सकते हैं। कपास भारतके प्रत्येक प्रान्तमें पैदा होता है। अिस तरह घरमें बना हुआ कपडा घरकी आमदनीमें १० प्रतिशतकी वृद्धिके बराबर होता है। अेक चरखेकी कीमत केवल चार-पाच रुपये ही होती है। भुखमरीके किनारे खडे रहनेवाले लोगोंके लिअे आयकी यह वृद्धि बडी महत्त्वपूर्ण है। भारतके गावोंमे वेकारी भयकर रूपमें फैली हुअी है। अिसका कारण यह भी है कि भारतमें गरम और सूखा मौसम लम्बा होनेके कारण अुस समय किसान कुछ नही कर सकते। यही दलील दूसरे सब ग्रामोद्योगो पर भी लागू होती है।

अैसे प्रयत्नके नैतिक लाभ

परन्तु अैसे प्रयत्नका महत्त्वपूर्ण परिणाम तो नैतिक है। जब कोअी आदमी अपनी ही कुशलता और सतत प्रयत्नसे कोअी आर्थिक दृष्टिसे मूल्यवान वस्तु बना सकता है, तो अुसे स्वाभिमान, आत्म-विश्वास, आत्म-निर्भरता, साहस, आशा, स्वतत्र सूझ-बूझ और शक्ति प्राप्त होती है। अिसके बाद वह अधिक कठिन काम, अैसा काम जिसमें दूसरोंके साथ मिलकर काम करना पडे, करनेके लिअे भी तत्पर हो जाता है। अगर अुसके साथ दूसरे भी अैसा ही करते है तो अुन सबमे सामूहिक साहस और सामूहिक आशाका सचार होता है।

यह कोरा सिद्धान्त नही है। क्योंकि तीस वर्षसे अधिक समयसे भारत भरमें किसान गाधीजीके कार्यक्रमकी प्रेरणा और पथ-प्रदर्शनसे अपने ही सादे औजारोंसे अैसी चीजें बनाते रहे हैं और साथ साथ अपने चरित्र और नैतिक बलका निर्माण भी करते रहे हैं। अिन तीस वर्षोंमें खादीकी आश्चर्यजनक प्रगति हुअी है। अग्रेजी राज्यके विरुद्ध चलनेवाले असहयोग सग्रामके दिनोंमे वे ही जिले अत्याचारका अहिंसक मुकाबला करनेमें सबसे अधिक साहसी, दृढ और सफल रहे, जहा हाथ-कताअी, हाथ-बुनाअी और ग्रामोत्थानके दूसरे काम कुछ वर्षोंसे चल रहे थे।

जैसा कि सब कोअी जानते हैं, बुनियादी तालीममें विद्यार्थी अपनी शिक्षा कताअी, टोकरी बनाना, बढ़अीगिरी या कुम्हार-काम जैसी किसी हाथकी कारीगरीके जरिये शुरू करता है। अिस काममें नापनेकी जरूरत पैदा होती है, जिससे वह गणित सीखना शुरू करता है। अुनका सामान कौनसे स्थानोंसे प्राप्त होता है, अिसकी जानकारी प्राप्त करके वह भूगोल सीखता है। किसी वस्तुके आरम्भ या मूलकी शिक्षासे वह प्रारंभिक अितिहास सीखता है। अुसे सूचनायें पढ़नी पड़ती हैं और कामका लेखा-जोखा रखना पड़ता है, अिसलिअे वह लिखना-पढ़ना सीखता है। जब वह माल खरीदता है या अपना तैयार माल बेचता है, तब वह अंकगणितका विषय शुरू कर देता है। अैसे प्रत्येक विषयकी बुनियाद किसी ठोस दैनिक वास्तविकता और मूल्य पर होती है। सारी शिक्षाका जीवनसे सम्बन्ध हो जाता है। हाथके कामका गौरव और मूल्य बढ़ता है। शिक्षाके साथ विद्यार्थीका चरित्र-गठन भी होता है। वह दूसरोंके साथ काम करना सीखता है। अुससे स्वच्छता, सफाअी, व्यवस्थितता, स्वाभिमान, आत्म-निर्भरता, आत्म-विश्वास, सूझ-बूझ, दूसरोंके साथ काम करनेकी क्षमता, दूरदृष्टि और कल्पना-शक्तिका विकास होता है। ये सब बातें लड़के-लड़की दोनों पर लागू होती हैं। बच्चे घरमें काम आनेवाला कपड़ा या दूसरी चीजें तैयार करते हैं, अिसलिअे माता-पिता अुन्हें स्कूल भेज सकते हैं।

अुनकी तुलना करे। हमें अिस पर ससारके शासक दलोंकी दृष्टिसे विचार नही करना चाहिये, परन्तु दबे हुअे और गरीब लोगोंकी दृष्टिसे विचार करना चाहिये, जो ससारमें अधिक सख्यामें है।

मुख्य मतभेद साधनोंके विषयमें है

पूजीवाद, साम्यवाद, समाजवाद, भारत-सरकारकी योजना और गाधीजीका रचनात्मक कार्यक्रम — सभी प्रत्येक मनुष्यको भौतिक, मानसिक और नैतिक रूपमें सहायता देने और सम्पन्न करनेका दावा करते हैं। अपने प्रयत्नो और समाजके ध्येय और अुद्देश्योंके बारेमें सब सहमत हैं। मतभेद साधनोंके विषयमें है। अिस सम्बन्धमें हम अिस सिद्धान्तका अेक प्रयोग देखेंगे कि सफलता प्राप्त करनेके लिअे अैसे साधन चुनने चाहिये जो वाछित ध्येयके अनुकूल हो।

सम्पत्ति और सत्ताके वितरणके संबधमें

पूजीवाद और साम्यवाद दोनो सम्पत्ति और सत्ताका विशाल मात्रामें सग्रह करते है और व्यवहारमें अुनका अुपयोग मुख्यत अूपरके लोगोंके लिअे करते है और थोडीसी सम्पत्ति और सत्ता नीचे टपक आने देते है, जिससे आम लोग सम्पत्तिका निर्माण करनेवाले यन्त्रोको कुशलतासे चला सकें। पूजीवाद और साम्यवाद दोनो हिंसाका खुला या गुप्त अुपयोग करते है, जब औद्यन और कच्चे मालके साधनो पर नियन्त्रण रखनेकी और लोगोंको यन्त्रो पर काम करते रखनेकी जरूरत पैदा होती है।

गाधीजीके कार्यक्रम पर अमल करनेसे भी सम्पत्ति और सत्ता भिन्न-भिन्न रूपोमें पैदा होती है। जैसे खादी, दूसरे ग्रामोद्योगोकी चीजें, बुनियादी शिक्षा, स्वास्थ्य और परस्पर आदर तथा सबके प्रति दयाभाव। अिस कार्यक्रममें अुत्पादन दूर ले जाकर बेचनेके लिअे नही होता, बल्कि निकटवर्ती स्थानीय अुपयोगके लिअे होता है, और सबसे पहले अुस व्यक्ति या परिवारके अुपयोगके लिअे होता है, जो अुस मालको तैयार करता है। अिस प्रकार यह कार्यक्रम सम्पत्तिके अिन छोटे छोटे हिस्सोको — वस्तुओंको

— जहांके तहां रखना है और अुन्हें छोटी छोटी जिकाअियोंमें व्यापक रूपमें बांट देता है। वह अिन्हें मुट्ठीभर शक्तिशालियों द्वारा मनमाना अुपयोग करनेके लिअे बड़ी मात्रामें अेक जगह अिकट्ठा नहीं होने देता। यह ध्यान देने लायक बात है कि खादी और ग्रामोद्योग सिर्फ गांवोंकी अर्ध-बेकारी या बेकारीको ही कम नहीं करते, फिर भले ही वह बेकारी लम्बे सूखे मौसमके कारण हो या और बातोंके कारण हो, और अिस प्रकार जमीन पर पड़नेवाले लोगोंके दबावको ही कम नहीं करते। अिस प्रकारकी ग्रामीण प्रवृत्तियां सम्पत्तिको व्यापक रूपमें और अधिक समान रूपमें बांटती भी रहती हैं।

सरक्षक बनकर करना चाहिये। वे स्वय अैसा ही करते थे। विनोबाजी अिस विचारसे सहमत है। अगर व्यवसायी नेता यह समझते हैं कि यह माग मानव-स्वभावके लिअे बहुत अधिक है, बहुत आदर्शवादी है, तो अिस तरह वे यह बात स्वीकार कर लेते हैं कि और सबकी अपेक्षा अपनी ही सेवा वे अधिक करेंगे, तब अुन्हे अपने हाथमें या अपने प्रतिनिधियोंके हाथमें सत्ता या राष्ट्रके सचालनकी बागडोर सौंपनेकी माग प्रजासे नहीं करनी चाहिये। गाधीजीका ख्याल था कि वे लोग नैतिक दृष्टिसे अिनसे अधिक अूचे अुठ सकते हैं। अुन्हे गाधीजीकी आशाको पूरा करना चाहिये। अुन्हे यह सिद्ध कर देना चाहिये कि नैतिकतामें भारतीय व्यवसायी पश्चिमके व्यवसायियोंसे श्रेष्ठ हैं।

अधिक तुलनाअें

साम्यवादकी घोषणा व्यवहारमें यह है "हम पार्टीके नेतागण अूपरके चुने हुअे कुछ लोगो द्वारा सचालित शिल्प-विज्ञानकी सहायतासे हर आदमीको काफी सम्पन्न बनायेंगे।" परन्तु चूकि अूपरके कुछ चुने हुअे लोग भी अूपरसे नीचे तक काम करते हैं, अिसलिअे वे भी साधनोंके चक्करमें फस जाते है और सत्ताके प्रलोभनके शिकार हो जाते है। अिससे आम लोगोंको सुरक्षा और सम्पत्ति थोडी ही मात्रामे प्राप्त होती है, और अुस व्यवस्थामें मनुष्योंकी आत्मा अूपरवालोकी सत्ताकी रक्षाके खातिर बन्धनोंमें जकड जाती है। अूपरके सत्ताधारियोके विषयमें यह मान लिया जाता है कि वे सबके कल्याणकी बात अुत्तम रूपमें जानते हैं। अुनका अैसा दावा है कि विज्ञान तथा अैतिहासिक अटल नियमोंके आधार पर अुन्हे यह ज्ञान प्राप्त होता है।

परन्तु गाधीजीका रचनात्मक कार्यक्रम लोकतान्त्रिक पद्धतिके आधार पर ठेठ नीचेसे काम करता है और अपने बनाये हुअे कपडे, ग्रामोद्योगों, बुनियादी तालीम, सफाअी, तन्दुरुस्ती, सहयोग, कम्पोस्ट खादसे सुधरी हुअी जमीन और अधिक अच्छी खेतीसे गरीबोंके विशाल समूहको सम्पन्न बनाता है। वह सादे सुपरिचित औजारोका अुपयोग करता है, जो स्थानीय

विश्वास, आत्म-निर्भरता, गौरव, शक्ति, सूझ-बूझ, साहस, आशा, लगन और सुखकी अैसी बाढ-सी आ जायगी कि सारा राष्ट्र हर्षोन्मत्त और ससार आश्चर्यचकित हो जायगा। अिसके साथ ग्रामीणोकी स्वाभाविक धार्मिक भावनाओका पुट लग जायगा, तब नैतिक और आध्यात्मिक शक्तिकी व्यापक लहर दौड जायगी।

ग्रामोत्थानकी सरकारी योजनाओंके कुछ सचालकोंकी यह शिकायत रही है कि गावोंमें स्थानीय नेतृत्वकी बडी कमी है। यह अभाव ग्राम-वासियोमें स्वाभिमान, आत्म-निर्भरता और आत्म-विश्वासके अभावका ही अेक और परिणाम है। जहा अेक बार ये गुण अिन लोगोमें फिरसे आये कि स्थानीय नेतृत्वकी कोअी कमी नही रहेगी।

कभी कभी यह दलील दी जाती है कि अगर किसी राष्ट्रके चोटीके लोगोकी सम्पत्तिके टुकडे करके अुसे सारी जनतामें बराबर बराबर बाट दिया जाय, तो साधारण हिसाब लगानेसे सिद्ध हो जायगा कि प्रत्येक गरीब आदमीको कुछ ही रुपयोका लाभ होगा और वह अुस वृद्धिका लाभदायक ढगसे अुपयोग नही कर सकेगा — अुससे अुसकी गरीबी मिटेगी नही। अकगणितके अिस तथ्यके आधार पर यह तर्क किया जाता है कि चोटीके कुछ बुद्धिशाली चतुर लोगोके हाथोमें सम्पत्तिको रहने देना बुद्धिमानी होगी, क्योंकि वे ही सम्पत्तिको बढा सकते हैं।

मैं यह अनुरोध नही कर रहा हू कि थोडेसे लोगोंसे अुनकी मौजूदा सम्पत्ति छीन ली जाय। परन्तु मेरा अनुरोध यह है कि अब आगे आम लोगोको थोडी थोडी मात्रामें अपनी सम्पत्ति पैदा करने और अुसे सारीकी सारी अपने ही लिअे रखनेका मौका दिया जाना चाहिये, और वे चाहे या न चाहे तो भी अुन्हे दूसरोंके फायदेके लिअे काम करनेको मजबूर होना पडे अैसी स्थिति नही रहनी चाहिये। पूजीवाद और साम्यवाद शक्ति-शालियोंके लाभके लिअे मनुष्योका अुपयोग करते हैं, गाधीजीका कार्यक्रम स्त्री-पुरुषोको दूसरोंके लाभका साधन बनाकर अुनका अुपयोग नही करता। वह स्त्री-पुरुषोको अपने आपमें ध्येय मानता है, और अुनके अपने ही लाभके

लिअे काम करने देता है। वह यह नहीं कहता कि श्रम खरीद-बिक्रीका कोअी पदार्थ या अुत्पादनका यन्त्र है, वह कहता है कि छोटे-बड़े सभी अुद्योगोंका नफा काम करनेवाले मजदूरोंको अुद्योगके साधन जुटानेवालोंके बराबर या अुससे ज्यादा मिलना चाहिये। और गांधीजीके कार्यक्रमकी विशेषता यह है कि अुसमें मजदूर और साधन जुटानेवाला अेक ही होता है।

शिल्प-विज्ञानका अुपयोग

यह है कि अुसके औजार भारतीय किसानोंकी शक्ति और अुनकी वर्तमान शारीरिक, बौद्धिक, नैतिक और मानसिक स्थितिके बहुत अनुकूल हैं। जिस सीधे-सादे शिल्प-विज्ञानसे अधिकांश लोगोंको स्वावलम्बनका पाठ मिलता है और वे सचमुच स्वावलम्बी बनते हैं। गांधीवादी शिल्प-विज्ञानके विकासका कोअी पार नहीं है। परन्तु अुसे गांवके स्तर तक ही सीमित रखना चाहिये। भविष्यमें जब ग्रामवासी फिरसे आत्म-सम्मान, आत्म-विश्वास और अनुशासनके गुण प्राप्त कर लेंगे, अुसके बाद यह शिल्प-विज्ञान क्या रूप लेगा यह देखना बाकी है। परन्तु अभी तो पहले रखने जैसी चीजोंको ही पहले रखना चाहिये।

परन्तु पूंजीवादी, साम्यवादी और समाजवादी शिल्प-विज्ञान सब लोगों पर अूपरसे अेक औद्योगिक ढांचा लादता है, और किसानों पर आर्थिक दबाव डालकर अुन्हें अपनी जीवन-पद्धति (अच्छी और बुरी दोनों तरहकी) बदलनेको मजबूर करता है। जिस आदमीको अेक बड़ी मशीन चलानेको विवश किया जाता है, अुसे अपने काममें कोअी रचनात्मक प्रेरणा नहीं अनुभव होती, अुसमें आत्म-निर्भरता तथा आत्म-सम्मानका विकास नहीं होता और अुसमें मन तथा आत्माकी वह स्वाधीनता अुत्पन्न नहीं होती जो गांधीजीके कार्यक्रमके अनुसार काम करनेवालेमें होती है। गांधीवादी शिल्प-विज्ञान प्रतिघंटे जितनी मात्रामें और जितनी तेजीसे माल पैदा करता है, अुतनी ही मात्रामें और अुतनी ही तेजीसे आत्म-सम्मान भी अुत्पन्न करता है।

पूंजीवाद, समाजवाद और साम्यवादके शिल्प-विज्ञानके लाभ आम लोगोंके लिअे मुख्यत भौतिक हैं, गांधीजीके कार्यक्रमके लाभ भौतिक भी हैं, परन्तु मुख्यत वे नैतिक हैं। किसी समाजके लिअे अुसके सदस्योंके नैतिक चरित्रका विकास औद्योगिक क्षमताकी अपेक्षा अधिक महत्त्वपूर्ण वस्तु है। चूंकि लगभग सभी लोगों पर महान सत्ताके जहरका असर होता है, अिसलिअे व्यवहारमें पूंजीवाद, साम्यवाद और समाजवादका भी लाभ चोटीके कुछ लोगोंको ही मिलता है, परन्तु गांधीजीके कार्यक्रममें लाभका निर्माण

जितना अिंग्लैण्ड, जर्मनी, जापान, या संयुक्त राज्य अमरीकाके अत्यन्त आगे बढे हुअे यंत्र-विशारदोंको है।

"खादीका कार्यक्रम विज्ञानको अस्वीकार नही करता। अिसके विपरीत, वह अर्थशास्त्रके साथ अुस तत्त्वका बुद्धिपूर्ण विनियोग करता है, जिसे वैज्ञानिक थर्मोडिनेमिक्स (अुष्णता और यान्त्रिक शक्तिका सम्बन्ध बतानेवाला विज्ञान) का दूसरा नियम कहते हैं। हाथकी चरखी, धुनकी, चरखा और हाथ-करघा आदी मशीनें हैं, जो दूसरी मशीनोंकी अपेक्षा भारतकी वर्तमान परिस्थितिके अधिक अनुकूल हैं। प्राचीनताके प्रेमी रोजकी धूपमे कोयलेको ज्यादा पसन्द कर सकते हैं, परन्तु प्राचीन कालमें संगृहीत सूर्यशक्तिके रूपमें कोयलेका प्रयोग करनेमें अुसी शक्तिके परिणामरूप अन्न और शरीर-बलके प्रयोगसे कोअी अधिक वैज्ञानिकता नही है। हमें विज्ञानको शिल्प-विज्ञानके साथ या सत्ताके केन्द्रीकरणके साथ मिलाकर गडबड नही करनी चाहिये। विज्ञान तो शक्तिके किसी भी रूप और मात्राको तथा शिल्प-विज्ञानकी किसी भी पद्धतिको लागू होता है।

"भापके अेंजिन, डायनेमो (बिजली पैदा करनेवाला यन्त्र) और दूसरी सारी मशीनोंकी प्रशंसामें हमें मानव-शरीरकी अद्भुत कार्य-क्षमताको नही भूल जाना चाहिये। आखिर तो कोयले और तेलमें रहनेवाली शक्तिको हमने नही बनाया है। जो अिंजीनियर जल-विद्युत्-शक्तिका अुत्पादन-केन्द्र बनाता है अुसे किसी जल-भंडारमें अेकत्रित पानीका अुपयोग करनेमें नायगरा प्रपात जैसे बहते पानीके अुपयोगकी अपेक्षा अधिक गर्व अनुभव नही करना चाहिये। यही बात संगृहीत और चालू सूर्यशक्तिकी है। बडा आकार, बडी मात्रा और बडी गति बेशक प्रभावशाली और बहुधा प्रशंसनीय होते हैं, परन्तु वे किसी हद तक बहुत जोरकी आवाजकी तरह हैं। हमें जंगली मनुष्यकी-सी भूल नही करनी चाहिये और अिन चीजोंके बडेपनसे चकराना, घबराना या अपना मानसिक

अपव्यय होता होगा। साथ ही यह भी स्पष्ट है कि पाश्चात्य आर्थिक पद्धतियो और रीतियोने बहुत हद तक अपनी गति, बडे पैमाने, श्रम बचानेकी वृत्ति और श्रमकी विशेषज्ञताके कारण पैदा हुअी गदी बस्तियां, पिचपिच आबादी और अत्यधिक कठिन परिश्रमकी वजहसे बिगडनेवाले स्वास्थ्य, साधारण ग्राम-जीवनकी छिन्न-भिन्नता, बेकारी, हडतालें, वर्ग-सघर्ष, राष्ट्रोंकी व्यापारिक प्रतिस्पर्धा और युद्ध आदिके द्वारा व्यक्तिगत और सामाजिक मूल्योको भारी हानि पहुचाअी है। आर्थिक कार्य-क्षमताके सही अदाजमे अिन प्रत्यक्ष और अप्रत्यक्ष आर्थिक हानियोका और लाभोका भी विचार होना चाहिये।

"जब अिन सब बातोका अुचित विचार किया जाता है, तब पश्चिमके अपनी श्रेष्ठ कार्य-क्षमताके दावेमें काफी सुधार करना होगा। पूर्व अपनी कार्य-क्षमतामे बहुत सुधार कर सकता है, परन्तु आज भी अुसे हतोत्साह होनेकी जरूरत नही। प्रो० सॉडी, जो स्वय अेक प्रतिभाशाली वैज्ञानिक है, अपनी पुस्तक 'वेल्थ, वर्च्युअल वेल्थ अेण्ड डेट' में कहते है

'शक्तिके दृष्टिकोणसे शक्तिके अुन स्रोतो पर लगातार प्रभुत्व और नियत्रण बनाये रखना प्रगति समझी जा सकती है, जो मूल स्रोतके अधिकाधिक निकट हो।

'अिसका ज्ञान तो लगभग अेक शताब्दीसे हो चुका है, परन्तु अिस ज्ञानके फलितार्थ अकसर भुला दिये जाते है। वह यह कि आर्थिक दृष्टिसे कुछ महत्त्वहीन अपवादोको छोडकर जिस शक्तिसे ससार चल रहा है वह सारीकी सारी शक्ति सूर्यसे मिलती है।

'सम्पत्ति मूलत अुपयोगी या अुपलब्ध शक्तिकी अुपज है।

'यद्यपि किसी अिजीनियर अथवा भौतिकशास्त्रीके सिवा सभीकी दृष्टिमें शक्ति सम्पत्तिके अुत्पादनमें अेक छोटीसी चीज

रिक्तताकी, मानव-महत्त्व और गौरवकी हानिकी तथा दिशाशून्यताकी भावना पैदा हो जाती है।

पृथ्वी सीमित है। मनुष्यका चित्त और आत्मा असीम है। विशाल मानव-जातिको भौतिक और पार्थिव वस्तुओंमें सीमित कर देना अुसके सच्चे मानव-स्वभावसे अुसे वंचित कर देना है। अुसका परिणाम सीमित साधनोंकी प्रतिस्पर्धामें आता है। अुसमें से संघर्ष जन्म लेता है और आखिरमें साधन-सम्पत्तिका और सभ्यताओंका विनाश होता है।

समाजके लिअे योजना

पूंजीवाद, साम्यवाद और समाजवाद सब अूपरसे योजनायें बनाते हैं। वे मान लेते हैं कि मुट्ठीभर लोगोंकी बुद्धि श्रेष्ठ होती है। पूंजीवाद यह काम अप्रत्यक्ष रूपमें और ज्यादातर अप्रकट साधनोंसे करता है, साम्यवाद और समाजवाद अुसे खुले तौर पर करते हैं। अिस योजनाका कुछ भाग तो अुचित भी है और अनिवार्य भी, क्योंकि काम बड़े पैमाने पर होते हैं। परन्तु अुसे बिलकुल सीमित रखना चाहिये। किसी सभ्यताका जीवन और अुसके असंख्य व्यक्तियोंका जीवन अितना पेचीदा और तेजीसे बदलनेवाला होता है कि कैसी भी योजना अुसके लिअे लाभकारी सिद्ध नहीं हो सकती। अगर अिस प्रकारकी योजना सम्पूर्ण हो तो अुससे अन्याय होता है। जहां तक संभव हो, अुसकी व्यवस्था छोटी छोटी ग्रामीण अिकाअियोंमें बंट जानी चाहिये। अिस मार्गमें भी कठिनाअियां और समस्यायें तो होंगी, परन्तु अुन्हें ज्यादा आसानीसे संभाला और सुलझाया जा सकेगा। कुशल शासनकी अपेक्षा स्वशासन अधिक महत्त्वपूर्ण है।

भूदान और ग्रामदान

गांधीजीने जो रचनात्मक कार्यक्रम शुरू किया था, अुसके दूसरे पहलुओं पर विचार करनेसे पहले हमें आचार्य विनोबा भावे द्वारा चलाये हुअे भूदान और ग्रामदान आन्दोलनका अुल्लेख करना चाहिये। विनोबाजी शायद गांधीजीके सबसे निकटवर्ती और सबसे महान अनुयायी हैं।

श्रद्धा ताजी होती है। जिन किसानोंके पास थोडीसी जमीन थी, अुन्होंने भी अुनका कुछ हिस्सा भूमिहीनोंको दिया है। हमें विश्वास करना चाहिये कि गांधीजी अिस आन्दोलनको अपना अुत्साहपूर्ण आशीर्वाद और समर्थन अवश्य देते। यह किसी भी कानून या दूसरी सरकारी कार्रवाअीकी अपेक्षा अधिक त्वरित, अधिक सस्ता, अधिक स्थायी और अधिक सूक्ष्म नैतिक परिणाम लानेवाला मालूम होता है। ये सारे दान सर्वथा स्वेच्छापूर्वक हुअे हैं, जब कि किसी भी सरकारी कार्रवाअीमें जबरदस्ती होती है और अुससे बडा असतोष पैदा होता है। यह आन्दोलन भारतमें हिंसात्मक स्वरूपके साम्यवादको रोकनेका अच्छा साधन बन सकता है। विनोबाजी और अुनके अनेक अनुयायियोंको अिससे अेक महान नैतिक, आर्थिक और राजनीतिक अहिंसक प्रगतिका आरम्भ दिखाअी देता है। ग्रामदान आसानीसे किसी न किसी प्रकारकी सहकारी खेती समितियोंका अुत्तम आधार बन सकता है। भूमि-स्वामित्वकी पद्धतिमें होनेवाला सुधार सारे अेशियामें ही नहीं, ससारभरमें बडा भारी महत्त्व रखता है। अिसके परिणाम न सिर्फ आर्थिक और राजनीतिक होंगे, परन्तु नैतिक भी होंगे।

गांधीजीका कार्यक्रम बधा हुआ या जड नहीं है

आधुनिक ससारकी समस्यायें अितनी अधिक और अितनी पेचीदा हैं कि कोअी अेक आदमी अुन सबको निपटा नहीं सकता। अिन समस्याओंमें से गांधीजीने कुछ महत्त्वकी समस्यायें चुन ली। अुन्होंने वे ही समस्यायें चुनी जो अुस समय सबसे महत्त्वकी दिखाअी दीं। समयके साथ साथ अुनके कार्यक्रमका विस्तार हुआ और अुन्होंने सूचित किया कि वे जीवित रहे तो अुसे और भी आगे बढायेंगे। वे अकसर कहा करते थे कि 'मेरे लिअे अेक कदम काफी है।' हम विश्वास रखें कि वे आज जीवित होते तो भूदान और ग्रामदानके लिअे ही नहीं, परन्तु दूसरे सुधारोंके लिअे भी जोर लगाते।

[illegible] तानी होती है। जिन किसानोंके पास थोड़ीसी जमीन थी, अुन्होंने भी अुसका कुछ हिस्सा भूमिहीनोंको दिया है। हमें विश्वास करना चाहिये कि गांधीजी अिस आन्दोलनको अपना अुत्साहपूर्ण आशीर्वाद और समर्थन अवश्य देते। यह किसी भी कानून या दूसरी सरकारी कार्रवाअीकी अपेक्षा अधिक त्वरित, अधिक सस्ता, अधिक स्थायी और अधिक सूक्ष्म नैतिक परिणाम लानेवाला मालूम होता है। ये सारे दान सर्वथा स्वेच्छापूर्वक हुओ हैं जब कि किसी भी सरकारी कार्रवाअीमें जबरदस्ती होती है और अुससे बड़ा असतोष पैदा होता है। यह आन्दोलन भारतमें हिंसात्मक ढंगके साम्यवादको रोकनेका अच्छा साधन बन सकता है। विनोबाजी और अुनके अनेक अनुयायियोंको जिसमें अेक महान नैतिक, आर्थिक और राजनीतिक अहिंसक प्रगतिका आरम्भ दिखाअी देता है। ग्रामदान आसानीसे किसी न किसी प्रकारकी सहकारी खेती समितियोंका अुत्तम आधार बन सकता है। भूमि-स्वामित्वकी पद्धतिमें होनेवाला सुधार सारे अेशियामें ही नहीं, संसारभरमें बड़ा भारी महत्त्व रखता है। जिसके परिणाम न सिर्फ आर्थिक और राजनीतिक होंगे, परन्तु नैतिक भी होंगे।

गांधीजीका कार्यक्रम बंधा हुआ या जड़ नहीं है

आधुनिक समाजकी समस्यायें जितनी अधिक और जितनी पेचीदा हैं कि कोअी अेक आदमी अुन सबको निपटा नहीं सकता। अिन समस्याओंमें से गांधीजीने कुछ महत्त्वकी समस्यायें चुन लीं। अुन्होंने वे ही समस्यायें चुनीं जो अुस समय सबसे महत्त्वकी दिखाअी दीं। समयके साथ साथ अुनके कार्यक्रमका विस्तार हुआ और अुन्होंने सूचित किया कि वे जीवित रहे तो अुसे और भी आगे बढ़ायेंगे। वे अकसर कहा करते थे कि 'मेरे लिअे अेक कदम काफी है।' हम विश्वास रखें कि वे आज जीवित होते तो भूदान और ग्रामदानके लिअे ही नहीं, परन्तु दूसरे सुधारोंके लिअे भी जोर लगाते।

गया है, सरकारी कार्यक्रमके साथ साथ चलेगा। किन्तु वह अुन दबाववाले और नौकरशाही तरीकोंसे मुक्त होगा जो सरकारकी छत्रछायामें लगभग अनिवार्य होते हैं, और वह शायद धीमा तो होगा, परन्तु मेरे खयालसे सरकारी प्रयत्नोंसे अधिक लोकतान्त्रिक होगा, अुसमें समझा-बुझाकर काम लिया जायगा और अुसके परिणाम स्थायी होंगे। मेरा विश्वास है कि अधिकांश गांधीवादी खेतोंमें बडी-बडी मशीनों और रासायनिक खादके व्यापक या स्थायी प्रयोगसे सहमत नहीं होंगे।

मुझे आशा है कि गोबरको भूमिकी अुर्वरता बढानेके काममें लेनेके खातिर सुरक्षित रखनेके लिअे आज जहां गोबर अींधनके लिअे बहुत व्यापक पैमाने पर अिस्तेमाल किया जाता है वहां हर गांवके नजदीक जल्दी बढनेवाले पेड लगानेको प्रोत्साहन देनेवाला अेक आन्दोलन खडा हो जायगा। जब कभी कोअी बडा पेड काटा जाय, तब अुसकी जगह अेक छोटा पेड लगा दिया जाय और बकरियों तथा मवेशियोंसे अुसकी रक्षा की जाय। देहातवालोंके लिअे कोयला काफी सस्ता अींधन बनाया जा सके, अिसके लिअे यातायातका अभी काफी विकास नहीं हुआ है।

खेतीके सम्बन्धमें गांधीजीके कार्यक्रमका अेक अंग था गोरक्षा। गायकी पवित्रताकी कल्पना मुझे सही मालूम होती है। अगर व्यक्तिकी आत्मा पवित्र है तो अुस व्यक्तिको सहारा देनेवाली सभ्यता या संस्कृति भी अिस दृष्टिसे पवित्र है। कोअी संस्कृति दीर्घकाल तक नहीं टिक सकती, अगर अुसके लिअे अन्नप्राप्तिकी कोअी स्थायी स्थानीय व्यवस्था न हो — अर्थात् अुसका ठोस और स्थायी खेती पर आधार न हो। खेती तभी टिक सकती है जब जमीन नीरोग और अुपजाअू हो। अगर संस्कृति पवित्र है तो अुसका पालन-पोषण करनेवाली भूमि भी पवित्र है। जमीनकी नीरोगता और अुर्वरताका आधार अुसके सजीव पदार्थ — ह्यूमस तत्त्वकी मात्रा पर होता है। जिन जिन चीजोंसे जमीनको सजीव पदार्थ और खाद मिलते हैं, अुनमें गायके गोबरका खाद अुत्तम है — गायका खाद दूसरे सब जानवरोंके खादसे अच्छा होता है। अिस प्रकार यदि भूमि

भी है। परन्तु यह परिणाम महत्त्वपूर्ण और अनिवार्य होने पर भी ख़ास तौर पर आरम्भमें गौण होता है।

२ गांधीजीके कार्यक्रममें जैसा साध्य हो वैसे ही साधनोंसे काम लिया जाता है — यानी साध्य और साधनका सुमेल होता है। दूसरे कार्यक्रमोंमें, जिनकी हमने चर्चा की है, यह बात नही होती।

३ चूंकि किसी भी देशकी महानताका सबसे स्थायी और स्पष्ट आधार सार्वभौम मानव-सभ्यताको दी गअी अुसकी बडी बडी देनोंकी संख्या और प्रकार पर होता है और चूंकि हम यह कभी नही बता सकते कि किन माता-पितासे प्रतिभाशाली विभूतिका जन्म होगा, अिसलिअे जो देश सारी मानव-जातिकी अधिकसे अधिक सेवा करना चाहता है अुसे अधिकसे अधिक लोगोंके लिअे खुराक, मकान, अवसर, शिक्षा और स्वतंत्रताकी व्यवस्था करनी चाहिये। तभी प्रतिभाशाली व्यक्तिको खिलनेका अुत्तम और अधिकतम अवसर मिलेगा, वह शिशुकालमें ही नष्ट नही हो जायगा, या दरिद्रताके भारसे दब नही जायगा, या विचारों तथा भावनाओंके कठोर नियंत्रणके कारण कुंठित नही हो जायगा।

४ अन्य किसी भी कार्यक्रमकी अपेक्षा गांधीजीके कार्यक्रमकी प्रकृति और प्राणियोंके साथ अधिक अेकरसता और अधिक संतुलन है। अिसलिअे वह दूसरोंसे अधिक स्थायी हो सकता है।

५ यह कार्यक्रम मुख्यतः धातुओं और भूगर्भमें छिपे अीधनके सीमित साधनों पर निर्भर नही रहता, परन्तु सूर्यशक्तिकी विशाल और नित-नूतन वार्षिक प्राप्ति पर निर्भर करता है।

६ चूंकि भविष्य रंगीन जातियोंके हाथमें है और चूंकि गरीब होने पर भी अुन सबके पास सूर्यशक्तिका अपार भण्डार है, अिसलिअे गांधीजीके कार्यक्रमके सहारे वे सब अपनी सम्पत्ति, अपनी आत्म-निर्भरता, अपने आत्म-विश्वास, आत्म-गौरव, स्वास्थ्य,

सस्थामें सरकारी नौकरोंके वेतनका खर्च बरदाश्त करना पडेगा। अुसमें केन्द्रीय योजनामे अधिक स्वतत्र रहकर काम करनेकी गुजाअिश रहेगी। सरकारी कोष पर मौजूदा भार भी नही रहेगा। अुससे राष्ट्रीय ऋणकी मात्रा कम करनेमें और मुद्रा-प्रसारका खतरा कम करनेमें मदद मिलेगी।

१० पहले परिच्छेदमें अुल्लिखित सातो खतरे गाधीजीके कार्यक्रमसे कम हो जायगे।

११ अिससे दूसरे परिच्छेदमें वर्णित पूजीवादके तेरहो खतरे मिट जायगे।

१२ पीडितोके लिअे साम्यवादकी जिन बारह प्रेरणाओंका तीसरे परिच्छेदके आरभमें अुल्लेख किया गया है, अुनमें से सात प्रेरणायें अिसमें मौजूद है। बाकी पाच प्रेरणायें तो काल्पनिक हैं।

१३ अन्य किसी भी योजना, प्रणाली या कार्यक्रमसे गाधीजीका कार्यक्रम अधिक करुणापूर्ण है और सारी मानव-जातिकी आध्यात्मिक अेकताके भावसे परिपूर्ण है।

अिस कार्यक्रमके पूरे अर्थ और महत्त्वको प्रगट करनेके लिअे कुछ और बातो पर भी विचार करना चाहिये।

शहर बनाम गाव

किसी बडे देशमें, जहा विनिमयका माध्यम पैसा होता है, अन्नको खेतोसे दूर दूरके शहरो तक ले जाना पडता है। वह कअी हाथोमें से गुजरता है — जैसे गाडीवाले, सग्रह करनेवाले, रेलवे, दूसरे गाडीवाले, थोक व्यापारी, मडीवाले, दलाल और फुटकर दुकानदार। अिनमें से हरअेक अपनी अपनी सेवाके दाम अुस पर चढाता है। अकसर विविध प्रक्रियाओ द्वारा खुराक तैयार करनेवाले साधन भी होते हैं, जैसे आटेकी मिलें, चावलकी मिलें, शक्करकी मिलें और खाद्य-पदार्थोंको डिब्बोंमें बद करके सुरक्षित बनानेवाले कारखाने वगैरा। अिन सारे खर्चोंका अुत्पादक

भार अुठाना पडता है। मगर अिसका भी अन्तिम परिणाम भूमिकी शक्ति नष्ट होनेमें ही आता है।

आत्म-निर्भर गावों और थोडे तथा छोटे शहरोंका गाधीजीका आदर्श अिस सारी प्रक्रिया पर अकुश लगायेगा, धरतीकी रक्षा करेगा और अन्तमें सभ्यता और भारतीय सस्कृतिकी आयु बढायेगा।

हार्दिक सहयोग बनाम श्रम-विभाजन

जैसा अेल्टन मेयोने बताया है, हार्दिक मानव-सहयोग न केवल मानव-सभ्यताके लिअे नितात आवश्यक है, परन्तु अुसे स्थायी भी छोटे छोटे समूहोंमें सर्वत्र किये जानेवाले कार्यके द्वारा ही बनाया जा सकता है। अिसमें मैं अितना और जोडूगा, "जैसा कि देहातके हाथके काममें पाया जाता है।" मेयोने यह भी कहा है कि "सभ्य समाज स्वय अपना नाश कर लेगा, अगर वह सहयोगके साधक और बाधक तत्त्वोंको बुद्धिपूर्वक समझेगा नही और अुनका नियत्रण नही करेगा।" श्रमका चरम सीमाका विभाजन और हार्दिक सहयोग, अिन दोमें दूसरी चीज सभ्यताकी रक्षाके लिअे अधिक महत्त्वकी है। हाथके काम पर अवलम्बित अेशियाअी सभ्यता मानव-जातिके लिअे अुतनी ही महत्त्वपूर्ण है, जितनी पश्चिमकी औद्योगिक सभ्यताकी अल्पकालीन लहर है। चूकि गाधीजीका कार्यक्रम अिस हार्दिक मानव-सहयोगको प्राप्त करनेके साधनोंकी रक्षा करता है, अिसलिअे वह सच्चा शिल्प-विज्ञान है और अेक विवेकशील तथा चिरस्थायी सभ्यताका निर्माण कर सकता है।

गावोंकी बेकारी कम करना

भारतके गावोंमें भयकर बेकारी और अर्ध-बेकारी फैली हुअी है। अुसका बडा कारण आबोहवा है, लम्बा, गरम, सूखा मौसम जमीनकी अैसी हालत कर देता है कि किसान अुस पर कोअी काम नही कर सकते। अिसका देश पर भयकर आर्थिक और नैतिक भार पडता है।

हमने देख लिया कि अुद्योगवादका अेक हेतु यह भी है कि जो ग्रामीण बेकार हो अुन्हे कारखानों और मिलोंकी तरफ खीचकर गावोंकी

जिनसे मौजूद है और हम जानते हैं, या कमसे कम हमें जानना चाहिये कि प्राकृतिक साधन-सामग्रीकी रक्षा और बुद्धिमानीसे अुनका अुपयोग हमारे जीवित रहनेके लिये अत्यावश्यक है, बार बार नये सिरेसे अुत्पन्न हो सकने लायक साधन-सामग्रीका अुपयोग करते हुअे भी उनका संरक्षण करनेके लिअे और नये सिरेसे बार बार अुत्पन्न न होने लायक साधन-सामग्रीका स्थान लेनेवाली दूसरी साधन-सामग्री तलाश करनेके लिअे आवश्यक वैज्ञानिक और व्यावहारिक ज्ञान हमारे पास है, और हमारे पास कही श्रेष्ठ सचार व सपर्कके साधन है, जिनसे हम सब लोगोको अितिहासके सबक सिखा सकते है और साधन सामग्रीके सरक्षणका ज्ञान दे सकते है। अगर हम केवल अिन सुविधाओका अुपयोग ही कर ले, तो कोअी कारण नहीं कि यह राष्ट्र और यह सभ्यता हजारो वर्ष तक फलती-फूलती नहीं रह सकती और प्रगति नही कर सकती।

"अगर हमे जीवित रहना है तो हमें यह जान लेना होगा कि हमारी सस्कृतिका मौलिक आधार वह प्राकृतिक साधन-सामग्री है जिस पर वह निर्भर करती है, और जीवित रहनेके लिअे हमारी योजनाका प्रारभ अुस साधन-सामग्रीकी रक्षा और अुपयोगके बुद्धिपूर्ण कार्यक्रमसे होना चाहिये।"

मै यह कहूगा कि केवल कृतनिश्चय कृषि-प्रधान और वन-प्रधान सस्कृति ही, जो कृषि और वनोको अपना आधार बनानेके कारणोको समझती है, जो सूर्यशक्तिकी विशाल और अखूट ताकतको पहचानती है, जिसका आग्रह है कि छोटे पैमानेके सगठनकी लगभग सभी क्षेत्रोमें प्रमुखता हो और जो आध्यात्मिक अेकताकी वास्तविकता और शक्ति पर जोर देती है, अपने कामके लिअे शिल्प-विज्ञान और विज्ञानके नये विकासोका बुद्धिमत्तापूर्वक चुनाव कर सकती है और अपनी ओरसे भी अुनके विषयमें अधिक आविष्कार, खोज और विकास कर सकती है।

शिक्षायें मौजूद है और हम जानते है, या कमसे कम हमें जानना चाहिये, कि प्राकृतिक साधन-सामग्रीकी रक्षा और बुद्धिमानीसे अुनका अुपयोग हमारे जीवित रहनेके लिअे अत्यावश्यक है, बार बार नये सिरेसे अुत्पन्न हो सकने लायक साधन-सामग्रीका अुपयोग करते हुअे भी अुनका सरक्षण करनेके लिअे और नये सिरेसे बार बार अुत्पन्न न होने लायक साधन-सामग्रीका स्थान लेनेवाली दूसरी साधन-सामग्री अुत्पन्न करनेके लिअे आवश्यक वैज्ञानिक और व्यावहारिक ज्ञान हमारे पास है, और हमारे पास कही श्रेष्ठ सचार व सपर्कके साधन हैं, जिनसे हम सब लोगोको अितिहासके सबक सिखा सकते है और साधन-सामग्रीके सरक्षणका ज्ञान दे सकते है। अगर हम केवल अिन सुविधाओका अुपयोग ही कर ले, तो कोअी कारण नही कि यह राष्ट्र और यह सभ्यता हजारो वर्ष तक फलती-फूलती नही रह सकती और प्रगति नही कर सकती।

"अगर हमें जीवित रहना है तो हमें यह जान लेना होगा कि हमारी सस्कृतिका मौलिक आधार वह प्राकृतिक साधन-सामग्री है जिस पर वह निर्भर करती है, और जीवित रहनेके लिअे हमारी योजनाका प्रारभ अुस साधन-सामग्रीकी रक्षा और अुपयोगके बुद्धिपूर्ण कार्यक्रमसे होना चाहिये।"

मै यह कहूगा कि केवल कृतनिश्चय कृषि-प्रधान और वन-प्रधान सस्कृति ही, जो कृषि और वनोको अपना आधार बनानेके कारणोको समझती है, जो सूर्यशक्तिकी विशाल और अखूट ताकतको पहचानती है, जिसका आग्रह है कि छोटे पैमानेके सगठनकी लगभग सभी क्षेत्रोंमे प्रमुखता हो और जो आध्यात्मिक अेकताकी वास्तविकता और शक्ति पर जोर देती है, अपने कामके लिअे शिल्प-विज्ञान और विज्ञानके नये विकासोका बुद्धिमत्तापूर्वक चुनाव कर सकती है और अपनी ओरसे भी अुनके विषयमें अधिक आविष्कार, खोज और विकास कर सकती है।

वस्त्रकला-विशारद और सब प्रकारकी प्लास्टिककी छोटी वस्तुअें छोटे पैमाने पर बनानेवाले।

अिनमें से कुछ धंधे स्त्रियोंके लिअे भी खुले होने चाहिये। अुनके साथ स्त्रियोंके काम ये होंगे

बुनियादी तालीमकी शिक्षिकायें, पोषक आहार, घरेलू अर्थ-शास्त्र, नाटक, सफाअी और बाल-कल्याणकी शिक्षिकायें, पत्रकार, आहारशास्त्री, पोषक आहारका संशोधन करनेवाली, नर्सें, दाअियां, दवाअियोंकी कम्पाअुण्डर, सिनेमा और ग्रामोफोनके यंत्र चलानेवाली, सफाअी-निरीक्षिकायें, स्वास्थ्य-निरीक्षिकायें, छोटे बच्चोंको किंडर गार्टन स्कूलोंमें पढानेवाली शिक्षिकायें, जमीनोंके रसायनशास्त्र और भौतिकविज्ञानका तथा जीव-जंतुओं, खुमी और दूसरे सजीव पदार्थोंका संशोधन करनेवाली।

कदाचित् और भी धंधे होंगे जो मेरे ध्यानसे बाहर रह गये होंगे, और भविष्यमें और भी बहुतसे धंधोंका विकास होगा।

अिन सारे धंधों और कामोंमें समृद्ध बौद्धिक खुराक मिलेगी, काम करनेवालोंको अुच्च महत्त्व प्राप्त होगा, धीरे धीरे अुनके सामाजिक दरजेका विकास होगा, अुनमें स्वाभिमानकी भावना पैदा होगी और अुन्हें मातृ-भूमिकी निश्चित सेवाका सन्तोष प्राप्त होगा।

बुद्धिजीवियोंके लिअे तत्त्वज्ञान

बुद्धिजीवी लोगोंको भी अैसे अेक समग्र तत्त्वज्ञानकी जरूरत है, जो अत्यंत आधुनिक और वैज्ञानिक होते हुअे भी प्राचीन कालके कालातीत ज्ञानको तिलांजलि देनेवाला न हो। अैसा तत्त्वज्ञान प्रस्तुत करनेके अनेक प्रयत्न हो रहे हैं। मैंने भी अेक प्रयत्न किया है।* परन्तु और भी अनेक प्रयत्न होनेकी आवश्यकता है, क्योंकि यह विषय महान है और अिसकी चर्चाके कअी दृष्टिकोण हो सकते हैं।

---

* देखिये मेरी पुस्तक 'अे कम्पास फॉर सिविलिज़ेशन', नवजीवन ट्रस्ट, अहमदाबाद–१४

नियंत्रण करनेवाला दल

अत्यंत अुद्योग-प्रधान देशोंमें, खास तौर पर शायद पश्चिम जर्मनी, रूस, ग्रेट ब्रिटेन और संयुक्त राज्य अमरीकामें, सबसे अधिक बलशाली दल अुन व्यवस्थापकों और यंत्र-विशारदोंका है, जो बड़े अुद्योगोंकी अुत्पादक शक्तियोंका संचालन करते हैं। मैं जिस ढंगकी प्रगतिशील गांधीवादी व्यवस्थाकी चर्चा कर रहा हूं, अुसमें भी प्रगतिशील दल वे ही होंगे, जो अुत्पादक शक्तियोंका नियंत्रण करेंगे। परन्तु अिस व्यवस्थामें मुख्य अुत्पादक बल खेतों और जंगलोंमें प्राप्त होनेवाली सूर्यशक्ति होगी। जिनका अिस शक्ति पर नियंत्रण होना है वे हैं किसान, जंगलोंके अधिकारी और जंगलके अुत्पादनमें से तैयार की जानेवाली चीजोंके तथा खादी और ग्रामोद्योगोंके विशारद, ये वे लोग हैं जो प्राकृतिक साधन-सामग्रीकी रक्षा करते हैं, किसानोंमें पूंजीका संग्रह बढ़ाते हैं, जंगलों और खेतीका विकास करके अुनकी स्थायी पैदावारके गुण और मात्राको अुच्चतम सीमा तक पहुंचाते हैं और अेक अैसी सामाजिक और आर्थिक प्रणालीको आगे बढ़ाते हैं, जिसका प्रकृतिके साथ सन्तुलन और अेकरसता होती है तथा जो सब लोगोंकी आध्यात्मिक चेतना बढ़ाती है। मेरे विचारसे ये लोग महात्मा गांधीके अनुयायी होंगे।

आर्थिक विकासकी दो शर्तें

"परन्तु कुशलता ही काफी नही है, वह मुख्य वस्तु भी नही है। कारण, सच्ची चुनौती प्रत्येक देशके प्रशिक्षित नवयुवकोकी दृष्टि और शक्तियोको आकर्षित करनेकी है — अैसे नवयुवक जो नेतृत्व करने और सेवा करनेको अुत्सुक हो, जो अपने जीवन द्वारा कोअी महान कार्य करना चाहते हो और जिनकी आकाक्षायें किसी तुच्छ लक्ष्य पर केन्द्रित नही हो। अवश्य ही अिन नवयुवकोको कुशलता सीखनी होगी, क्योकि कुशलताके विना निष्ठा और लगन कोअी मूल्य नही रखती। परन्तु वे कोरी कुशलतासे सन्तुष्ट नही होगे। अुन्हें होना भी नही चाहिये।

"सभी 'विकासशील' देशोको (अुनके औद्योगिक विकासके आरभ-कालमें) अपनी आवश्यकताके योग्य व्यक्तियोका विकास करनेके लिअे दो बातोकी जरूरत होती है। अेक तो अुन्हें चाहिये कोअी अैसी वस्तु जो बुद्धि और सौन्दर्यकी दृष्टिसे सन्तोपदायक हो, वह है सुव्यवस्थित ज्ञान अर्थात् अुद्योग आरभ करने तथा अुनकी व्यवस्था करनेकी अनुशासन-बद्ध तालीम। और दूसरे अुन्हे चाहिये व्यावसायिक आचरणके सामाजिक और नैतिक सिद्धान्त, जिनका कोअी भला आदमी आदर कर सके और जिनके आधार पर वह अपने स्वाभिमानका निर्माण कर सके। सच्चा महत्त्व यान्त्रिक कुशलताओका और यान्त्रिक करामातोका नही होता, सच्चा महत्त्व तो बौद्धिक अनुशासनका है और जो काम करना है अुसके प्रति हमारी नैतिक वृत्तिका है।"

मुझे विश्वास है कि अन्य किसी भी कार्यक्रमकी अपेक्षा गाधीजीका कार्यक्रम अपने देशसे प्रेम करनेवाले और अुसकी समृद्धिकी अभिलाषा रखनेवाले लोगोकी अिन नैतिक, बौद्धिक और सौन्दर्य-सम्बन्धी आवश्यकताओको अधिक पूरा कर सकता है।

गहरे परिवर्तनोंकी आवश्यकता

जैसा मि० पीटर ड्रकर कहते हैं, "आर्थिक विकास केवल — शायद मुख्यतः भी — आर्थिक प्रक्रिया नहीं है, अुसमें गहरा सांस्कृतिक और सामाजिक परिवर्तन भी समाया होता है — मूल्यों, आदतों, ज्ञान, वृत्तियों, जीवन-प्रणालियों, सामाजिक आदर्शों और आकांक्षाओंके परिवर्तनकी बात भी समायी रहती है।" यह सच है, चाहे आर्थिक विकास अुद्योगीकरणके द्वारा हो या गांधीजीके कार्यक्रमके द्वारा। अिसका अर्थ यह है कि अिसके लिअे अेक विशाल शैक्षणिक प्रयत्न करना होगा और अुसके पूरे होनेमें समय लगेगा, बहुत संभव है कि दो या तीन पीढ़ियोंका समय लग जाय। यह मानव-जातिके विकासका ही अेक अंग है।

विविध कुशलताओंकी सहायता कहांसे मिले?

विशेषज्ञोंका, जो पूसाकी कृषि-अनुसंधान संस्थाके भूतपूर्व संचालक स्व० सर अेल्बर्ट हॉवर्ड द्वारा आरंभ की हुअी संस्था है।

कदाचित् संयुक्त राष्ट्रसंघकी खुराक और खेतीमें संबंधित संस्था भी अिन सब मामलोंके लिअे अुत्तम सलाहकार सुझा सकती है। मुझे मालूम नहीं है कि रूसी लोग किन बातोंमें सबसे अधिक कुशल और सहायक सिद्ध होंगे। परन्तु मेरा खयाल है कि रूसकी अधिकांश वैज्ञानिक और शिल्प-विज्ञान सम्बन्धी सहायता चीनको मिलेगी।

पैसेका प्रबन्ध

अवश्य ही अिस कार्यक्रमके लिअे पैसेका प्रबंध करनेकी समस्या भी है। जब गांधीजी जीवित थे तब अुन्हें अनेक धनवानोंसे मदद मिल जाती थी। जो पैसा नहीं दे सकते थे अैसे बहुत लोग अपना समय, शक्ति और निष्ठा अिस कार्यक्रमके लिअे देते थे। आजकल कार्यक्रमके कुछ अंगोंके लिअे सरकार सहायता दे रही है। यदि धनवानोंकी समझमें आ जाय कि अिस योजनाको कार्यान्वित करना वांछनीय है, तो यह कार्यक्रम काफी तेजीसे आगे बढाया जा सकता है। जो लोग बहुत पैसेके सहारेके बिना भी काम करना चाहें वे धीरे धीरे कर सकते हैं। अिस पहलू पर मैं कोअी सुझाव नहीं दूंगा, सिर्फ अितना ही कहूंगा कि गांधीजी सरकारसे कमसे कम सहायता लेना पसंद करते थे।

मेरा विश्वास है कि गांधीजीके कार्यक्रमको सारे भारतमें पूरी तरह कार्यान्वित करना और अुसे जारी रखना अन्य किसी भी कार्यक्रमकी अपेक्षा कम खर्चीला होगा।

खादी और ग्रामोद्योगोंकी रक्षा

कुछ भारतीय अुद्योगोंने दूसरे देशोंसे वैसा ही माल आयात करने पर कुछ चुंगी लगानेके लिअे भारत-सरकारको राजी कर लिया है। कुछ अुद्योगोंको सीधी आर्थिक सहायता भी मिली है। अुदाहरणार्थ, भारतके शक्कर-अुद्योग और कुछ दूसरे अुद्योगोंके लिअे अिस प्रकारका चुंगी-संबंधी

संरक्षण मिला है। ब्रिटिश राष्ट्र-मंडलमें भी कुछ अिसी तरहके संरक्षक कर लगाये गये हैं, जिन्हें 'कॉमनवेल्थ प्रिफरेन्स' कहते हैं। संयुक्त राज्य अमरीकामें सरकार अिस्पात, मोटर गाड़ियां, शक्कर और दूसरे बहुतसे अुद्योगोंको चुंगी-संबंधी संरक्षण प्रदान करती है। अिस प्रकारके चुंगी-कर लगभग सभी राष्ट्रोंमें प्रचलित हैं।

खादी और ग्रामोद्योगोंसे भारतको जो महान सामाजिक, आर्थिक और नैतिक लाभ हो सकते हैं, अुन्हें देखते हुअे अिन अुद्योगोंको सरकार द्वारा अिस समय जितना संरक्षण मिल रहा है अुससे अधिक मिलना चाहिये। मिलके कपड़े और मिलके सूतकी स्पर्धा खादीके लिअे अेक बहुत बड़ी बाधा है। यह सच है कि सरकारने भारतीय मिलोंके कपड़े पर कर लगा दिया है और अुसकी आमदनीको भारतीय हाथ-करघा अुद्योगकी तरक्कीमें लगाया है। यह न्याय और बुद्धिमानीका काम है। चावल कूटने और साफ करनेकी मिलें हाथ-कुटे चावलके अुत्पादनमें बाधक होती हैं और अुन चावलके खानेवालोंके स्वास्थ्यको हानि भी पहुंचाती हैं। यही बात अुन मिलोंकी है जो 'साफ की हुअी' सफेद चीनी पैदा करती हैं, वे गुड़की ग्रामीण पैदावारसे तीव्र स्पर्धा करती हैं। और सफेद चीनी अनेक मामलोंमें मानव-शरीरमें रहे चूनेका नाश करती है। अिस मामलेमें अनेक अमरीकी दंत-चिकित्सक सहमत हैं। यह सुझाना मेरा काम नहीं है कि अिन स्पर्धाओंका क्या अिलाज किया जाय। परन्तु अिन ग्रामोद्योगोंको किसी न किसी तरह सहायता दी जानी चाहिये। ग्रामोद्योगोंके पक्षकी दलीलें अुतनी ही मजबूत हैं जितनी अुद्योगपति अपने मालके संरक्षण या सहायताके पक्षमें देते हैं।

आक्रमण जैसा है। अुससे भारतीय गांवोंमें भारी और सतत बेकारी और अर्ध-बेकारी पैदा होती थी, क्योंकि अुससे पहले किसान अपने खेतीके कामसे मिलनेवाली फुरसतके समयमें अपना सूत आप कात लेते थे और हाथ-करघेके जुलाहे अुसका कपड़ा बुन देते थे। भारतकी दरिद्रता और नैतिक पतनमें अुस आर्थिक आक्रमणका बड़ा हाथ था।

अिस समय भारतमें काम आनेवाला बहुतसा कपड़ा भारतीय मिलोंमें बनता है। भारतीय मिल-मालिक ब्रिटिश मिल-मालिकोंकी जगह आ गये हैं। कदाचित् भारतीय मिल-मालिक यह समझते हैं कि अधिकांश खादीके कपड़ेसे सस्ते भावों पर अच्छा कपड़ा मुहैया करके वे किसानोंका भला कर रहे हैं और अुनका पैसा बचा रहे हैं। अगर जीवनमें सबसे अधिक महत्त्व और मूल्य पैसेका हो, तब तो मिल-मालिकोंका यह विचार सही माना जायगा। परन्तु यदि भारतीय मिलोंका कपड़ा सस्ता और अच्छा होनेके साथ साथ किसानोंमें वही बेकारी कायम रखता है जो अंग्रेजोंने शुरू की थी, तो क्या यह नहीं कहा जायगा कि वह किसानोंको नुकसान भी पहुंचा रहा है? मुझे विश्वास है कि मिल-मालिक जान-बूझकर किसानोंकी हानि नहीं करना चाहते। परन्तु मिल-मालिक अिस विनिमयसे रुपया कमा रहे हैं यह हकीकत अुन्हें कुछ अन्तिम परिणामोंके प्रति अंधा नहीं बना देगी? किसानोंके लिअे कौनसी चीज ज्यादा महत्त्वकी है — अुनका पैसा अथवा अुनका स्वाभिमान, अुपयोगिताकी भावना, आत्म-निर्भरता, आत्म-विश्वास और अपनी रोजीकी व्यवस्था आप करनेके अवसर?

यदि भारतीय मिलोंके कपड़ेका अंतिम सामाजिक परिणाम यह हो कि अुससे किसानोंमें बेकारी और अर्ध-बेकारी बनी रहनेमें सहायता मिले, तो क्या यह कहना अन्याय होगा कि मिल-मालिक, अनचाहे और अनजाने, ३२ करोड़ ३० लाख ग्रामवासियोंके विरुद्ध पहलेका ब्रिटिश आर्थिक आक्रमण जारी रख रहे हैं? यह सच हो तो यह अेक घरेलू आर्थिक युद्धका मामला होगा, अेक प्रकारका आन्तर-भारतीय अुपनिवेश-

वाद होगा, जिसमें भारतीयोका अेक छोटासा वर्ग अपने अधिकाश देश-वासियोंके विशाल जन-समूहको नुकसान पहुचा रहा है। क्या यह ठीक अर्थ है? क्या यह अतिम परिणाम है? यह अैसी बात है जिस पर ध्यानसे गहरा विचार करना चाहिये।

ब्रिटेनसे आजाद होनेके लिअे लडे गये भारतीय सग्रामके दिनामे गाधीजीने भारतीय मध्यमवर्गको साहस, अेकता, नैतिक नियमो पर विश्वास, स्वाभिमान, आत्म-निर्भरता और आत्म-विश्वासकी शिक्षा दी और ये गुण अुनमें पैदा किये। अिन्ही गुणोसे अुन्होने अपनी स्वतत्रता प्राप्त की। अिसी तरह गाधीजीने अपना रचनात्मक कार्यक्रम बनाया और शुरू किया, जिससे किसानोको अिन्ही गुणोका विकास करने और बडी हद तक प्रतिदिन रचनात्मक काम करके स्वतत्रता प्राप्त करनेमे मदद मिले। गाधीजीका लक्ष्य सारे हिन्दुस्तानियोके लिअे पूरी स्वतत्रता और न्याय प्राप्त करना था। यदि ३२ करोड ३० लाख ग्रामीणोको न्याय और स्वतत्रता मिल जाय, तो भारतमे अुत्पन्न होनेवाली शक्तिसे लहर ससारको चकित कर देगी। सारे भारतीयोकी अिस सिद्धिसे मध्यमवर्गको बडी प्रकारके जबरदस्त लाभ होगे, जिनकी अभी तक कल्पना नहीं की गअी है। अिसलिअे भारतीय मध्यमवर्गके किसी भी समूहको आम लोगो द्वारा अुसी वस्तुकी प्राप्तिमें कोअी रुकावट नहीं डालनी चाहिये, जो मध्यमवर्गने प्राप्त कर ली है।

हो जाय तो ग्रामीणोकी बढी हुअी क्रयशक्ति अिस दूसरे मालके लिअे बाजार मुहैया करके अुद्योगपतियोकी सीधी सहायता ही नही करेगी, परन्तु अुद्योगपतियोका कर-भार भी हलका कर देगी। यदि अिस प्रकारका आर्थिक आक्रमण मिल-मालिको और कुछ अुद्योगपतियोने जारी रखा, तो मुझे अन्देशा है कि अिसमे सबसे ज्यादा लाभ साम्यवादियोको होगा।

ग्रामोद्योगोका गलत अर्थ

कभी कभी यह दलील दी जाती है कि ग्राम अथवा 'गृह' अुद्योग अच्छे है, परन्तु ग्रामवासियोको सिर्फ चीजोके छोटे भाग तैयार करने चाहिये, जिन्हे बादमें बडे कारखानोमें अेकत्र करके चीजें बनाअी जाय। अिस बारेमें स्विट्ज़रलैण्डकी मिसाल दी जाती है। वहा बहुतसे अलग अलग ग्रामीण परिवार घडियोंके चक्के या दूसरे हिस्से बनाते हैं और अुन्हे बडे कारखानोमें अिकट्ठा करके स्विट्ज़रलैण्डकी मशहूर घड़िया तैयार की जाती हैं। परन्तु यह तो बडे अुद्योगोको बढाने और मदद देनेकी अेक तरकीब है। न्यूयॉर्कमें और अन्य अमरीकी नगरोमें भी कपडे और मोजे, स्वेटर आदि सामानके अुद्योगोमें अैसा ही किया गया था। अुसका परिणाम यह हुआ कि कारखानोके मालिकोने अैसे मजदूरोका भयकर शोषण किया और लोकमतने अुसे बन्द करा दिया। मुझे भय है कि भारतमें यह प्रयोग किया गया तो ग्रामवासियोका अुसी तरहका शोषण होने लगेगा।

सारे राष्ट्रोके सामने खड़े सात खतरोसे अिस कार्यक्रमका सम्बन्ध

अब पहले परिच्छेदमे बताये हुअे खतरोमें से अत्यधिक जनसख्या और खुराकके घटते जा रहे साधनोके खतरोको छोडकर बाकीके सम्बन्धमें जरा गाधीजीके कार्यक्रमके लाभ बता दें।

यह कहनेकी जरूरत नही कि हिंसाके विषयमें यह कार्यक्रम सारे ससारके अन्य किसी भी कार्यक्रमसे अधिक अच्छा और अधिक व्यावहारिक है। ब्रिटिश साम्राज्यवादको भारतमे निकाल कर बाहर करनेमे अिसकी

सफलता जिनकी शक्तिका पर्याप्त प्रमाण है। मेरा विश्वास है कि बाहरका सशस्त्र आक्रमण होने पर भी यह कार्यक्रम कारगर साबित होगा।

मैं मानता हूं कि सामूहिक सत्याग्रहके द्वारा गांधीजीका कार्यक्रम ही अेकमात्र अैसा अुपाय है, जिससे सत्ताका प्रलोभन और भ्रष्टाचार —जो युगोंसे सर्वत्र अितना प्रबल और सर्वव्यापी रहा है— नियंत्रणमें रखा जा सकता है। मेरी जानकारीमें दि जुवानालकी पुस्तक 'ऑन पावर' में सत्ताकी अिस समस्याकी सर्वोत्तम चर्चा की गयी है और गांधीजीका सत्याग्रह अिस दुविधासे पार होनेका अेकमात्र मार्ग है। अिसी अेक अुपायसे वह अध्यात्म-बल पैदा होगा, जिसका सबके कल्याणके लिअे ही अुपयोग किया जा सकता है।

पूंजीवाद, साम्यवाद और समाजवादका सत्तावादी आकार अेक भयंकर रूपमें विकृत और कुटिल वस्तु है। सच्चे लोकतंत्रका आधार सहिष्णुता, अहिंसा और छोटे पैमानेके संगठन पर है, बल या दबाव पर नहीं बल्कि शान्तिपूर्वक समझाने-बुझाने पर और स्वीकृति पर है। जब सत्तासे लोक-कल्याणके लिअे खतरा पैदा हो जाय, तब सिर्फ मतदान द्वारा स्वीकृति न देना काफी नहीं होता। अन्तमें तो केवल अहिंसक प्रतिकार ही अन्याय और अत्याचारको दबा सकता है।

यहां जिन प्रणालियोंकी चर्चा की गअी है अुनमें से केवल गांधीजीका कार्यक्रम ही छोटे संगठनों पर जोर देता है। वह गांव, परिवार और हाथसे काम करनेवालोंके छोटे छोटे संघोंको सभ्यताका आधार बनाता है। विनोबाजी अिससे सहमत हैं।

अिन सब प्रणालियोंमें से केवल गांधीजीका कार्यक्रम ही यह आग्रह करता है कि साध्य और साधनका मेल होना चाहिये, नैतिक नियम सारे मानव संगठनों पर लागू होते हैं और यह कि आत्मा है और अुसकी सत्ता सर्वोपरि सत्ता है। अिस आखिरी बिन्दु पर मेरा यह सुझाव नहीं है कि धर्मका राजनीतिक साधनके रूपमें अुपयोग किया जाय। मैं मानता हूं कि राज्यको सर्वथा धर्मनिरपेक्ष और धर्मसे अलग होना चाहिये।

यह अनुरोध करते समय मैं गाधीजीके अिस विचारका अनुसरण करनेकी कोशिश कर रहा हू कि राजनीतिको किसी धार्मिक सस्थाकी अभिव्यक्तिके बजाय आत्माकी अभिव्यक्तिका माध्यम बन जाना चाहिये।

गाधीजीका कार्यक्रम और काग्रेस अेक नहीं हैं

गाधीजीके कार्यक्रमका अनुरोध करते समय बेशक मैं काग्रेस दलका समर्थन करनेका अनुरोध नही कर रहा हू। दोनो किसी भी अर्थमें अेक नही हैं, चाहे कुछ काग्रेसी दोनोंके अेक होनेका कितना ही दावा क्यो न करे। जैसा कि सबको मालूम है, गाधीजीने भारतके स्वाधीन होते ही काग्रेस दलको बिखेर देना चाहा था। अिस दलको गाधीजीके सिद्धान्तोंमें कभी पूरा विश्वास नही था। अिस पैरेका हमारे तर्कमें कोअी सम्बन्ध नही है। यह तो गलतफहमी न होने देनेके विचारसे ही यहा जोडा गया है।

भारत पूर्व और पश्चिमके अुत्तम तत्त्वोका समन्वय कर सकता है

सब बातोको देखते हुअे यह काफी स्पष्ट मालूम होता है कि यह कार्यक्रम केवल पहले परिच्छेदमें बताये गये सभी खतरोको टालने और अुद्योगवादके तेरहो हानिकारक तत्त्वोंसे बचनेके लिअे ही अुत्तम नही है, परन्तु अुसमें भारतकी आज तककी सस्कृतिसे अधिक महान और अधिक कल्याणकारी सस्कृतिका निर्माण करनेकी सभावना भी है। भारतमें पूर्व और पश्चिमके अुत्तम तत्त्वोका सामजस्य करने और समस्त ससारमें सबसे विवेकशील सस्कृति अुत्पन्न करनेकी क्षमता है। परन्तु अिसके लिअे कमसे कम अेक शताब्दी तक भगीरथ, दीर्घकालीन और सतत प्रयत्न करनेकी आवश्यकता होगी। परिणाम प्रयत्नके अनुरूप ही होगा।

अिस परिच्छेदकी सारी चर्चामें मैंने गाधीजीके रचनात्मक कार्यक्रमके अुन अगोका ही अधिक अुल्लेख किया है जिनका आर्थिक प्रभाव बहुत स्पष्ट है, क्योकि अिन्ही अगोकी सबसे अधिक प्रतिकूल आलोचना हुअी है। दूसरे अगोका भारतके भावी विकासमें बडा भाग रहेगा।

गाधीजीने अुनकी सपूर्ण चर्चा की थी। पश्चिमके प्रमाणोंसे अुन्हें बहुत कम समर्थन मिल सकता है।

परन्तु अिस कार्यक्रमके नैतिक और आध्यात्मिक पहलुओं पर ही अधिक और सतत जोर देना चाहिये। विनोबाजी यह जोर दे रहे हैं। अुनके प्रयत्नोंको अलग रख दें तो भारत गाधीजीके आदर्शों और व्यवहारसे अिस मामलेमें बहुत दूर तक नीचे गिर गया है। अगर भारत अपनी सारी शक्ति सम्पूर्ण रूपमें पश्चिमके भौतिक अुद्योग-धधोंमें ही लगा देगा, तो मेरा विचार है कि वह भी पश्चिमी राष्ट्रोंकी तरह विनाशके मार्ग पर ही जा पहुचेगा।

भारतकी संस्कृति

मेरे खयालसे किसी भी प्रकारके अुद्योगवादकी अपेक्षा गाधीजीका कार्यक्रम कहीं अच्छे ढगसे भारतीय संस्कृतिके प्राचीन आदर्शोंका पोषक होगा। अिस संस्कृतिके आवश्यक गुण हैं सत्य, तपस्या, शाति, अहिंसा, विद्वत्-सम्मान और सुशीलता। तपस्या केवल जीवनकी सादगीमें ही नहीं होगी, परन्तु शक्तिके खर्चको सूर्यशक्तिकी वार्षिक आयके भीतर सीमित रखनेमें भी होगी।

गाधीजीका कार्यक्रम क्रान्तिकारी है

अगर आप क्रान्तिकारी होना चाहते हैं तो सच्चे सामूहिक सत्याग्रहका प्रयोग कअी हजार वर्षोंमें हुअी सबसे बड़ी क्रान्ति है। आप कह सकते हैं, "परन्तु हाथ-कताअी, हाथ-बुनाअी और दूसरे ग्रामोद्योगोंका समर्थन और अुपयोग करना क्रान्तिकारी नहीं है, यह तो सदियों पुराना शिल्प-विज्ञान है।' फिर भी पूजीवादी अुद्योगवादके परिच्छेदमें दिये गये सेन्टर मेनाके अुद्धरणोंको और जिस विस्तृत अध्ययनके आधार पर वे विचार बने हैं अुनको याद रखते हुअे यह कहना क्रान्तिकारी है कि शिल्प-विज्ञानको अब और अधिक मनमानी नहीं करने दी जायगी, परन्तु अुसे मनुष्य और प्राकृतिक साधन-सामग्रीके हितकारी सम्बन्धोंके अधीन सुसंगतिकी दायित्व

आयके अधीन, मानव-स्वभावके अधीन तथा स्वाभाविक सुखद मानव-सहयोग बढाने और कायम रखनेकी सांस्कृतिक आवश्यकताओंके अधीन रखा जायगा। बुरेसे बुरा नतीजा भी हुआ, तो भारतके लिअे बडे बडे अकाल अितने हानिकारक सिद्ध नही होंगे जितना हानिकारक भारतके व्यक्तियो और समूहोके बीच स्वाभाविक सहयोगका नाश सिद्ध होगा, जैसा कि आज पश्चिमके अुद्योग-प्रधान देशोंमें हो रहा है। शिल्प-विज्ञानके बारेमें ध्यानपूर्वक चुनाव करना और जो चीज अन्तमे मानवताको अूंचा अुठानेमें निश्चित सहायता देनेवाली है अुसीको स्वीकार करना और अुसका अुपयोग करना, न केवल शरीरको बल्कि आत्माको भी अूंचा अुठानेवाली वस्तुको ग्रहण करना और अुसका अुपयोग करना क्रान्तिकारी है। अिस युगमें भारपूर्वक यह कहना क्रान्तिकारी है कि विज्ञान, शिल्प-विज्ञान और रुपयेके लाभकी अपेक्षा सस्कृतिका हित सर्वोपरि है। और अिस सहज सहयोगको पुनर्जीवित करनेके साधनोको निश्चित बनानेके लिअे व्यावहारिक अुपाय करना और भी अधिक क्रान्तिकारी है। यह कहना क्रान्तिकारी है कि शिल्प-विज्ञानको अुस समय तक सयममें रखा जायगा, जब तक मनुष्य सत्ताकी लालसाको नियत्रणमें रखना और अुसके लिअे मेहनत करना न सीख ले।

गाधीजीके कार्यक्रम पर चलनेवालेको बडे पैमाने पर क्रान्ति करनेके लिअे अिंतजार नही करना पडता, वह अपने भीतर ही क्रान्ति आरम्भ कर देता है और अपने ही हाथो अुसे कार्यान्वित करता है। वह लोक-हितके लिअे अपने हिस्सेके अुत्पादनके साधनोका नियत्रण तुरन्त आरम्भ कर देता है। वह तुरन्त जनता-जनार्दनकी सेवामें लग जाता है और अपने जीवन द्वारा आदर्श भारतको निकट लानेमें सहायक होता है।

नये विचारोंकी प्रगतिकी आशा

विचारोंके अथवा हृदयके किसी बहुत बडे व्यापक परिवर्तनमें सामान्यत कमसे कम तीन पीढीका समय लग जाता है। अुदाहरणके लिअे, आअिन्स्टीन और फ्रायडके विचारोंको देख लीजिये। जिस पीढीमें नये

सूची

हमारे महत्त्वपूर्ण प्रकाशन

आरोग्यकी कुंजी	० ६२
खादी	२ ००
गांवोंकी मददमें	० ४०
नयी तालीमकी ओर	१ ००
बापूकी कलमसे	२ ५०
बापूके पत्र — १ आश्रमकी बहनोंको	१ २५
बापूके पत्र — २ सरदार वल्लभभाईके नाम	३ ००
बापूके पत्र — ३ कुसुमबहन देसाईके नाम	१ २५
बापूके पत्र मीराके नाम	३ ००
बुनियादी शिक्षा	१ ५०
मंगल-प्रभात	० ७३
मेरे सपनोंका भारत	३ ५०
यरवडाके अनुभव	१ ००
रचनात्मक कार्यक्रम	० ४३
विद्यार्थियोंसे	२ ००
शिक्षाकी समस्या	२ ५०
सच्ची शिक्षा	२ ००
सत्यके प्रयोग अथवा आत्मकथा	१ ५०
सत्य ही ईश्वर है	० ८०
सर्वोदय (रस्किनके 'अन्टु दिस लास्ट' [illegible])	० ३५
स्त्रियां और उनकी समस्यायें	१ ५०
हिन्द स्वराज	० ५०
सरदार पटेलके भाषण	४ ००

[illegible]

महादेवभाओकी डायरी — भाग ३	६ ००
जीवन-लीला	३ ००
धर्मोदय	१ २५
बापूकी झाकिया	१ ००
सूर्योदयका देश	२ ५०
हिमालयकी यात्रा	२ ००
गाधी और साम्यवाद	१ २५
गीता-मथन	३ ००
जीवन-शोधन	३ ००
तालीमकी बुनियादें	२ ००
शिक्षाका विकास	१ २५
शिक्षामें विवेक	१ ५०
ससार और धर्म	२ ५०
स्त्री-पुरुष-मर्यादा	१ ७५
अेकला चलो रे	२ ००
बा और बापूकी शीतल छायामें	२ ५०
बिहारकी कौमी आगमें	३ ००
ग्रामसेवाके दस कार्यक्रम	१ २५
आत्म-रचना अथवा आश्रमी शिक्षा — भाग १	१ ५०
,, ,, ,, — भाग २	१ ५०
,, ,, ,, — भाग ३	१ ५०
अैसे थे बापू	१ ७५
गाधीजी और गुरुदेव	० ८०
गाधीजीकी साधना	३ ००
ठक्करबापा	३ ००
बापूकी छायामें	४ ००
राजा राममोहनरायसे गाधीजी	२ ००
हमारी बा	२ ००

नवजीवन ट्रस्ट,
अहमदाबाद–१४